वस्त्रविज्ञान लेखसंग्रह

प्रभाकर दिवाण

अखिल भारत चरखा संघ, सेवाग्राम

प्रकाशक—
कृष्णदास गांधी,
मंत्री, अखिल भारत चरखा संघ,
सेवाग्राम (वर्धा)

पहली बार—२०००, जुलाई, १९५०
मूल्य एक रुपया

मुद्रक—
नारायणदास जाजू, मुख्य प्रबंधक
श्रीकृष्ण प्रिंटिंग वर्क्स, वर्धा

प्रस्तावना

बहुत सुंदर सूत निकालने वाले और अुसकी सारी प्रक्रियाओं को अच्छी तरह कर और सिखा सकने वाले अनेक लोग हमारे देश में होंगे। कपास और रुअी के विषय में अच्छा व्यावहारिक ज्ञान और परीक्षण करनेवाले लोग भी काफी संख्या में होंगे। फिर भी कपास, बिनौला, रुअी, सूत के गुण-दोषों की वैज्ञानिक जानकारी अिनमें से अिनेगिने लोगों को ही होगी। जानकारी ही यदि नहीं है तो अुस दृष्टि से प्रयोग करने, दूसरों के किये हुअे प्रयोगों की सचाअी या गलती समझने आदि की प्रवृत्ति तो हो ही कैसे सकती है?

श्री प्रभाकर दिवाण ने वस्त्र-विज्ञान के अपने वाचन से कुछ दिलचस्प अंशों का अिस छोटीसी पुस्तक में संग्रह किया है। जिन लोगों को अिस विषय पर लिखी हुअी अनेक अंग्रेजी पुस्तकें पढने का मौका नहीं है, वैसे कातने वालों और खादी कार्यकर्ताओं, अध्यापकों और विद्यार्थियों को अिस पुस्तक से कअी नयी बातें जानने और समझने मिलेंगी। प्रयोगों में दिलचस्पी रखनेवालों को अुसकी दिशा भी सूझेगी। देहात में काम करनेवाले अिस पुस्तक की मदद से किसानों को भी कअी अुपयुक्त बातें सिखा सकेंगे।

पुस्तक छोटी है, फिर भी "ली और पढ डाली" जा सके वैसी यह नहीं है। कअी प्रकरण धीरे धीरे समझ में आ सकेंगे। कुछ प्रकरण अैसे भी होंगे जो हरअेक पाठक की समझ में अेकदम न आवेंगे और पहले या दूसरे वाचन में छोड देने पडेंगे। लेकिन पुस्तक के अनेक प्रकरण अैसे हैं, जिनमें हरअेक को रस लगेगा। कताअी-विद्या के अध्यापकों के लिये तो यह अवश्य पढने योग्य है।

मैं आशा करता हूं कि श्री. प्रभाकर दिवाण अिस प्रकार का और भी संग्रह करेंगे, और हमारी जनता में खादी-विज्ञान का शौक बढावेंगे।

वर्धा,
२९-६-१९५० }

किशोरलाल घ. मशरूवाला

लेखक का निवेदन

वस्त्रविज्ञान (textile technology) अेक विशाल शास्त्र है। दिन-ब-दिन अुसमें शोध-संशोधन और प्रयोग होते रहते हैं। ब्रिटन, अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों ने अिस व्यवसाय को विज्ञान की सहायता से चरम अुन्नति तक पहुंचा दिया है। हिन्दुस्तान में इन्डियन सेंट्रल कॉटन कमेटी ने इसके संशोधन की तरफ पूरा ध्यान दिया है। अुसकी प्रयोग-शालाओं तथा संशोधन-केंद्रों में इस संबंध में अनेक शोध-संशोधन तथा प्रयोग किये गये हैं। कपास, अून, रेशम आदि रेशों के गुणधर्मों का, अनके सूक्ष्मातिसूक्ष्म घटक द्रव्यों का अध्ययन किया गया है। रेशों की लंबाअी, मोटाअी, वजन, रंग, मुलायमपन, स्थितिस्थापकता, बट, मजबूति, परिपक्वता तथा नमी, गरमी, हवा, प्रकाश आदि परिस्थितियों का अुनपर होनेवाला असर आदि अनेकों बातों की जानकारी प्राप्त की गयी है। कपास की जातियां, अुनकी अुपज, अुनकी खेती, अुनके पौधे आदि का भी निरीक्षण किया गया है। यह सही है कि यह सारा अध्ययन मिलों की दृष्टि से किया गया है। फिर भी खादीकाम को शास्त्रीय नींव पर खडा करने में वह अुपयोगी हो सकता है। शुद्ध ज्ञान (Pure science) जितना यंत्रोद्योग के लिये अुपयोगी हो सकता है अुतना हस्तोद्योग के लिये भी, बशर्ते कि अुसका अुपयोग करने की दृष्टि हम में होनी चाहिये।

खादी काम से मेरा संबंध आया तभी से वस्त्रविज्ञान के अिस शास्त्रीय साहित्य की तरफ मेरा ध्यान आकर्षित हुआ। इस विषय की जो भी शास्त्रीय पुस्तकें मिलीं अुनका अध्ययन मैं करता रहा। इंडियन सेंट्रल कॉटन कमेटी के Technological Bulletins, The Indian Textile Journal, The Indian Cotton Growing Review, The Indian Textile Industry Annual आदि पत्र-पत्रिकाओं तथा पुस्तकों को नियमित रूप से मैं पढता रहा। वस्त्रविज्ञान कितना विशाल, कितना गहन और कितना रसप्रद विषय है इसका इस अध्ययन से मुझे अनुभव हुआ। वस्त्रविज्ञान का यह सारा ज्ञान अंग्रेजी भाषा में है तथा सर्वसामान्य मनुष्य के लिये वह समझना आसान नहीं है। अिसलिये अुसमें से खादीकार्य की दृष्टि से अुपयोगी अंश को अगर हिंदी में दिया जाय तो वह अेक अुपयोगी काम होगा अैसा समझकर 'खादी जगत्' के लिये मैंने अेक दो लेख लिखे। श्री० कृष्णदास भाअी को वे अच्छे लगे और वैसे लेख लिखते रहने को

अुन्होंने कहा। अुसके अनुसार मैंने कअी लेख लिखे जो 'खादी जगत्' में समय समय पर प्रकाशित हुए। 'खादी जगत्' का प्रकाशन अब बंद हो चुका है, अिसलिये अब तक प्रकाशित हुअे लेखों का संकलन कर और अुसमें कुछ नये लेख जोड़कर यह संग्रह प्रकाशित किया है।

वस्त्रविज्ञान जैसे कठिन विषय पर लिखते समय मुझे पारिभाषिक शब्दों की कठिनाअी ज़रूर महसूस हुअी। लेकिन कठिण परिभाषा को जहां तक हो सके टालकर बिलकुल सादी सरल भाषा में विषय को प्रस्तुत करने की दृष्टि मैंने सामने रखी, क्यों कि सामान्य वाचकों के लिये मुझे लिखना था। लेकिन वस्त्रविज्ञान जैसे शास्त्रीय विषय को हिंदी में और वह भी सरल भाषा में प्रस्तुत करना आसान नहीं था। फिर भी मैंने कोशिश की है और मैं मानता हूं कि मैं अुसमें बहुत कुछ कामयाब हुआ हूं। लेकिन अिससे अेक दोष अवश्य आ गया है और वह यह कि एक ही अर्थ के लिये अलग अलग जगह अलग अलग शब्द व्यवहृत हैं। उदाहरणार्थ, Temperature को उष्णतामान, तापमान, गरमी जैसे भिन्न भिन्न शब्द दिये गये हैं। फिर भी आसान शब्द लिये जाने के कारण अर्थ जल्दी समझ में आ जायेगा। अलग अलग शब्दों के कारण अर्थ के समझने में कठिनाअी या गड़बड़ी न हो अिसका पूरा ख्याल रखा गया है। कहीं कहीं नये शब्द भी गढ़ने पड़े हैं। ऐसे शब्दों के सामने अर्थबोध की आसानी की दृष्टि से अुनके अंग्रेजी प्रतिशब्द दे दिये हैं।

विषय की शास्त्रीयता को देखते हुअे पारिभाषिक शब्दों की सूची देना आवश्यक समझा जायगा। लेकिन एक यह कि किसी अेक ही विषय का प्रतिपादन करनेवाली यह पुस्तक नहीं है। भिन्न भिन्न विषयों पर लिखे गये लेखों का यह संग्रह मात्र है। और दूसरे ये लेख परिभाषा को टालकर आसान भाषा में लिखने का प्रयास किया गया है। अिसलिये परिभाषा सूची देने की आवश्यकता नहीं समझी है।

लेकिन, जिनके आधार पर मैंने ये लेख लिखे हैं अुनकी सूची आगे दी है। अिन विषयों का अधिक अध्ययन करने की अिच्छा रखनेवाले अुससे लाभ अुठा सकेंगे। सभी आधारग्रंथ आज मेरे पास मौजूद न होने से कुछ आधारों की जानकारी जितनी मिली अुतनी ही देनी पड़ी है। अिन आधारभूत ग्रंथों के विशेषज्ञ लेखकों का मैं आभारी हूं।

किसी एक सिलसिले से ये लेख नहीं लिखे हैं। वस्त्रविज्ञान के अलग अलग विषयों का अिसमें विवेचन किया गया है। अनुक्रमणिका देखने से विषयों की कल्पना आ सकेगी। 'चरखे के स्थलकाल पर विचार' यह अंत में दिया हुआ लेख कुछ अलग ढंग का है। चरखे के अितिहास से वह संबध रखता है। वह एक स्वतंत्र संशोधनात्मक लेख है और अुसमें चरखे के स्थलकाल का मेरा अनुमान मैंने विचारार्थ अुपस्थित किया है।

विज्ञान विषयक पुस्तक को विज्ञानशास्त्री की प्रस्तावना मिले तो वह अधिक अुचित होगा यह सोचकर मैंने पूज्य किशोरलाल भाअी से प्रस्तावना के लिये प्रार्थना की। मेरी प्रार्थना स्वीकार कर अुन्होंने स्वास्थ्य ठीक न होते हुअे भी प्रस्तावना लिख दी अिसके लिये अुनका मैं आभारी हूं।

वर्धा
ता. १-७-५०

प्रभाकर दिवाण

अनुक्रमणिका

वस्त्रविज्ञान लेखसंग्रह

कपास का संग्रह और अुसका बिनौले की अंकुरित होने की शक्ति पर होनेवाला परिणाम

नमी और तापमान

कपास को बहुत दिन तक संग्रह कर रखने से दो तरह का नुकसान होता है—(१) बिनौले की अंकुरित होने की शक्ति कम होती है और (२) रेशे खराब होते हैं। यहां हम बिनौले की अंकुरित होने की शक्ति के संबंध में देखेंगे।

बिनौले का अंतर्द्रव्य बहुत गरम या खट्टा हो जाने से बिनौले की अंकुरित होने की शक्ति नष्ट होती है। नमी के कारण ये दोनों बातें बहुत शीघ्रता से होती हैं। कपास के अंदर सब जगह नमी हो या अुसके कुछ हिस्से में, अुससे बिनौले का अंतर्द्रव्य गरम और खट्टा हुअे बिना नहीं रहता। बिनौले के ढेर के अंदर १७५° फॅ. से भी अधिक तापमान हो सकता है। दबा कर भरे हुअे कपास में १३३° फॅ. या अुससे भी अधिक तापमान पाया गया है। गीली जमीन, हरी पत्तियां या डोडे, या अूपर से पानी छिडकने से कपास की नमी बढती है और नमी से तापमान बढता है। प्रयोगों से यह पाया गया है कि कपास यदि अच्छी तरह संग्रह कर रखा हो और अुसके तापमान में वृद्धि न हुआ हो तो कअी महीनों के बाद भी ४३ से ६४ प्रतिशत बीज अंकुरित हो सकता है। लेकिन यदि तापमान १११° फॅ. तक बढने दिया जाय तो सिर्फ ५ से १३ प्रतिशत बीज ही अंकुरित हो सकेगा और १२७° फॅ. तापमान पर तो बिनौले की अंकुरित होने की शक्ति बिलकुल ही नष्ट हो जायगी।

खटाअी का कारण

बिनौले का द्रव्य खट्टा होने का कारण भी मुख्यतः नमी ही है। खटाअी का कार्य जन्तुओं के द्वारा या रासायनिक क्रिया द्वारा होता है।

कपास में नमी हो और हवादार कमरे में कपास रख कर तापमान बढने न दिया जाय तो भी अुसके अंतर्द्रव्य की खट्टा होने की क्रिया रुकती नहीं है। कपास नम हो तो खटाअी और तापमान की क्रिया के कारण बिनौले की अंकुरित होने की शक्ति कल्पनातीत कम हो जाती है। अिस बारे में जो प्रयोग किये गये अुनसे पाया गया कि नम जगह में कपास संग्रह करने के कारण पहले तीन महीनों में बिनौले की अंकुरित होने की शक्ति ५१ प्रतिशत थी वह ४९ प्रतिशत हुअी और ग्यारह महीनों के बाद सिर्फ ८ प्रतिशत बीज अंकुरित हो सका।

काश्तकारों के लिये यह बात विशेष महत्व रखती है। खराब बीज बोने से ६०-७० प्रतिशत बीज अुगता ही नहीं; और जो अुगता है अुसकी अंकुरित होने की शक्ति घट जाने से अुससे अच्छी और काफी फसल नहीं मिल सकती। बीज अुत्तम मिले अिसके लिये नीचे लिखी बातें अमल में लानी चाहिये—

रक्षा के सुझाव

(१) चुनने के बाद कपास को तुरन्त ओट डालना चाहिये।

(२) कच्चा कपास, हरे डोडे, पत्तों वगैरा विजातीय द्रव्य कपास में से निकाल देना चाहिये।

(३) नमीवाली व बंद जगह में कपास या बिनौला न रखा जाय। हवा व प्रकाश से भरपूर तथा पूरी सूखी हुअी जगह में कपास का संग्रह किया जाय।

(४) चुनने के बाद कपास कमरे में या ढेर लगा कर रखने के पहले धूप में सुखा लिया जाय। संग्रह कर रखे हुअे कपास को व बिनौले को बीच बीच में धूप दिखाअी जाय। संग्रह कर रखा हुआ कपास व बिनौला बिल्कुल सूखा रहना चाहिये।

कुछ अन्य बातें

चूहे बिनौले का बहुत नाश कर[illegible] सब कोअी जानते ही है। चूहों तथा कीडों से [illegible] चाहिये यह अच्छा

बताने की जरूरत नहीं है। विनौले अूपर से अच्छे दीखते हों तो भी गरमी तथा नमी के कारण अुनकी अुगने की शक्ति नष्ट होती है यह ध्यान में रखना चाहिये।

शिक्षा की दृष्टि से भी यह काम की चीज है। ओटाअी सिखाते समय बच्चों को तापमान, अंकुरित होने की शक्ति आदि बातों का सामान्य ज्ञान दिया जा सकता है तथा अिन विषयों का कपास के संग्रह के साथ अच्छा अनुबंध किया जा सकता है।

कपास का संग्रह और अुसका रेशों पर होनेवाला परिणाम

कीटाणु तथा खट्वाणु

कपास को संग्रह कर रखने से अुसका बिनौलों पर क्या असर होता है यह पिछले लेख में बताया। अब कपास के रेशों पर अुसका क्या परिणाम होता है यह देखें।

कपास को संग्रह कर रखने से रेशे खराब होते हैं यह मानी हुअी बात है। कपास के रेशों में ९० प्रतिशत काष्ठद्रव्य (सेल्युलोज) होता है। अत: रेशों को हानि पहुंचाने का कार्य सेल्युलोज का नाश करने वाले जन्तुओं द्वारा होता है। ये जन्तु दो तरह के हैं—कीटाणु (बॅक्टेरिया) और खट्वाणु (फुंगी)। चुनते समय या बाद में कपासों में मिले हुअे तिनके, कचरा, धूल, खराब पत्ते, डोडे आदि के साथ वे कपास में प्रवेश करते हैं और अुसी कचरे पर पलते हैं। आवश्यक नमी और तापमान मिलने पर याने नम आबोहवा में अुनकी वृद्धि तेजी से होती है। रेशों के टूटे हुअे सिरों में से वे रेशों के अंदर प्रवेश करते हैं। चोट आदि से रेशों का पृष्ठभाग खुरच गया हो तो वे बाहर से भी रेशों पर हमला करते

हैं और सेल्युलोज का नाश करते हैं। अुससे रेशों के पृष्ठभाग में छेद हो जाते हैं और अुसकी मजबूती बहुत कम हो जाती है। धुनाअी में अैसे कपास से बहुत छीजन निकलती है और रेशों का रंग भद्दा दिखायी देने लगता है। अैसे खराब कपास का सूत कम दर्जे का बनेगा यह स्पष्ट ही है।

नमी और गरमी का असर

कपास के अंदर रहने वाली नमी के कारण और नम और उष्ण आबोहवा से कपास की खराबी करने वाले अिन जन्तुओं की वृद्धि तेजी से होती है और कपास जल्दी खराब हो जाता है। अिस संबंध में किये गये प्रयोगों पर से यह देखा गया है कि कपास में ११ प्रतिशत से अधिक नमी हो तो कपास की खराबी बहुत होती है। वैसे ही यह बात भी देखी गयी है कि कुल कपास की औसत नमी ७–८ प्रतिशत होने पर भी अुसके कुछ हिस्से में नमी का परिमाण अुससे काफी ज़्यादा हो सकता है। अिसलिये अुस हिस्से में कपास की खराबी करने वाले जन्तुओं की वृद्धि तेजी से होकर समूचे कपास में अुनका फैलाव होता है। संग्रह किये हुअे कपास को बीच बीच में धूप, प्रकाश और हवा दिखाते जाने से कपास की असमान नमी कम हो सकती है तथा संग्रह कर रखने से कपास की होने वाली खराबी बहुत कुछ टाली जा सकती है। बहुत गीला कपास हवा और प्रकाश न हो अैसे बंद कमरे में संग्रह कर रखने पर अैसा पाया गया कि ४४ दिन के बाद १४.७ प्रतिशत और ८६ दिन के बाद २९ प्रतिशत रेशे खराब हो गये हैं। बीच बीच में धूप दिखाने पर भी ८६ दिन के बाद अुसी कपास के २३ प्रतिशत रेशे खराब हुअे।

रेशों को खराब करने वाली और अेक बात है। गरमी से बिनौले की तैल-पेशियां फूटती हैं। संग्रहित कपास के रेशों पर यह तेल फैलता है तथा रेशे अेक दूसरे में अुलझ कर गूंथ जाते हैं। धुनाअी और कताअी में अिस तरह की रुअी बहुत तकलीफ देती है।

अेक लौकिक कल्पना

अूपर के विवेचन से यह दिखायी देगा कि रेशों की खराबी टालना है तो कपास की चुनाअी में और संग्रह में बहुत सावधानी रखनी चाहिअे। वैसे यह भी स्पष्ट है कि चुनने के बाद कपास तुरन्त ओट कर रुअी और बिनौलों को अलग अलग संग्रह करना जन्तुओं से सुरक्षा की दृष्टि से अधिक अुपयोगी है। लेकिन अिस संबंध में कुछ लोगों का अैसा कहना है कि चुनने के बाद तुरन्त कपास ओटना ठीक नहीं है। चार-पांच सप्ताह रख कर अुसके बाद कपास ओटने से कुछ महत्त्व के लाभ होते हैं। चुनने के बाद भी रेशों की पकने की क्रिया चालू रहती है। चार-पांच सप्ताह में यह क्रिया पूरी होती है। अिसलिये अुससे पहले कपास ओटने से रेशे कच्चे और लिपटे हुअे मिलेंगे व पूरे पके हुअे और विकसित नहीं होंगे। कपास को कुछ दिन संग्रह कर रखने से रेशों को परिपक्व होने का मौका मिलता है और अुससे रेशे लंबाअी में और मजबूती में बढते हैं। कुछ लोगों का अैसा भी कहना है कि संग्रहित अवस्था में रेशे बिनौले से तैल-द्रव्य लेते रहते हैं और अुससे अुनकी चमक और मजबूती में वृद्धि होती है। करीब सब जगह यह समझ रूढ है और अिसलिये ओटने के पहले कुछ दिन कपास को संग्रह कर रखने का रिवाज सर्वत्र पाया जाता है।

अिस संबंध में अिंडियन सेन्ट्रल कॉटन कमीटी की टेक्नॉलॉजिकल लेबॉरेटरी, माटुंगा में प्रयोग किये गये हैं। अुनसे यह दिखाअी दिया है कि अूपर की समझ निराधार है। अुसमें तथ्य नहीं है। चुनने के बाद तुरन्त ओटा हुआ कपास और चार हफ्ते संग्रह कर के बाद में ओटा हुआ कपास अैसे दोनों कपासों पर अुन्होंने प्रयोग किये। अुन प्रयोगों का थोडे में सारांश अिस तरह है—

प्रयोग के नतीजे

(१) चार हफ्ते रखे हुअे कपास के रेशों की तुलना में तुरन्त ओटे हुअे कपास के रेशे श्रेष्ठ दर्जे के दिखाअी दिये। अुनकी चमक अधिक अच्छी थी। अैसा मालूम पडा कि संग्रह कर रखने से रेशों की ताजगी

(Bloom) नष्ट होती है। तुरन्त ओटे हुओ कपास के रेशे चमकदार, मुलायम और ताजे दिखाओी दिये।

(२) दोनों कपासों में रेशों की औसत लंबाओी में और औसत प्रति अिंच वजन में फर्क नहीं था।

(३) दोनों कपासों में तैलद्रव्य का प्रतिशत परिमाण अेकसा था। यहां यह ध्यान में रखना चाहिये कि रेशों के अंदर तैलद्रव्य का परिमाण बढा तो भी अुससे कुछ लाभ नहीं है। रेशों के अूपर के तैल द्रव्य पर अुसका मुलायमपन निर्भर करता है।

(४) दोनों कपासों में धुनाओी की छीजन अेकसी रही।

(५) कताओी में दोनों कपासों के सूत में टूटने की संख्या में कहने जैसा फर्क नहीं था।

(६) दोनों कपासों के सूत की समानता में फर्क नहीं था। अिसलिअे तुरन्त ओटे हुअे कपास के रेशे लिपटे हुअे रहते हैं अिस कथन के लिअे कोअी आधार नहीं रहता, क्यों कि वैसा होता तो तुरन्त ओटे हुअे कपास का सूत ज्यादा असमान होना चाहिये था।

(७) दोनों कपासों में सूत की मजबूती में कहने जैसा फर्क नहीं था।

अिससे यह निश्चित है कि कपास का संग्रह कर रखने से विशेष फायदा नहीं है, अुल्टे सेल्युलोज नष्ट करने वाले जन्तु द्वारा वह अधिक खराब होने का डर मात्र है। अिसलिअे चुनने के बाद तुरन्त कपास को ओट डालना अधिक फायदेमंद दिखाओी देता है।

सूचना—शास्त्रीय तथ्य अूपर दिया है। लेकिन वस्त्र-स्वावलंबन की दृष्टि से, विशेषतः तुनाओी के लिअे कपास को संग्रह कर रखना आवश्यक है। क्यों कि कपास को रोज ताजा ओट कर तुनाओी द्वारा पूनी बनाना आसान होता है। रुओी से तुनाओी न अच्छी हो सकती है और न थोडे समय में ही हो सकती है। अैसी हालत में संग्रह कर रखे हुअे

कपास को साफ कर नमी, धूल आदि न लगे अिस तरह टिन के डिब्बों आदि में भरकर रखना तथा अुसे बीच-बीच में फैलाकर धूप देते रहना अुपयोगी होगा। अिससे संग्रह कर रखने से जो दोष पैदा होते हैं अुनसे कपास की बहुत कुछ रक्षा हो सकेगी।

कपास के रेशों की परिपक्वता और अुसपर परिस्थिति का असर

परिपक्वता का महत्त्व

कपास के रेशों की कीमत आंकते वक्त अुसकी लंबाअी, मुलायमियत, रंग आदि गुण देखे जाते हैं। लेकिन अिससे भी ज्यादा महत्व का गुण रेशों की परिपक्वता है। रेशे अगर पूरे पके न हों, वे अधपके या कच्चे हों तो कितने ही लंबे, मुलायम और चमकीले होने पर भी कातने की दृष्टि से कम दर्जे के ही गिने जायेंगे। क्यों कि अधपके या कच्चे रेशों से कता हुआ सूत और अुससे बना कपडा कमजोर बनता है और जल्दी फट जाता है। साथ ही कातते समय अैसे रेशों का सूत बारबार टूटता है। बुनाअी में भी सूत टूटते रहने से वही दिक्कत होती है। कच्चे रेशों को रंगने में भी मुश्किली होती है। कच्चे या अधपके रेशे ठोस होते हैं, अिसलिये वे अच्छी तरह रंग सोख नहीं सकते। कच्चे रेशों से बना हुआ सूत या कपडा रंगा जाय तो अुसपर अेकसा रंग नहीं चढता, अुसमें सफेद धब्बे दिखाअी देते हैं। परिपक्व रेशे पोले होते हैं, अुनमें स्थितिस्थापकता और लचीलापन ज्यादा होता है। वे अधिक आबदार होते हैं। अिसी कारण वे अच्छी तरह रंग सोख सकते हैं, अुनपर रंग विशेष खिलता है। अधिक लचीले होने के कारण ये मजबूत होते हैं और ज्याद

बट सह सकते हैं। कच्चे या अधपके रेशे कम-ज्यादा ठोस होने की वजह से कुडकीले होते हैं, अिसलिये ओटने, धुनने, कातने आदि क्रियाओं में टूटते हैं और अधिक बट भी नहीं सह सकते। अिन सारी दृष्टियों से रेशों की परिपक्वता अुनका सब से महत्व का गुण समझना चाहिये।

कुछ कपासों की परिपक्वता

रेशों की परिपकता कपास जहां बोया हो वहां की परिस्थिति पर खास कर निर्भर करती है। यह देखा गया है कि हिन्दुस्थान के देशी कपासों के रेशे अधिक परिपक्क होते हैं और अमेरिकन आदि जो विदेशी कपास हिन्दुस्तान में बोये जाते हैं अुनके रेशे कम परिपक्क होते हैं। अिसके लिये कुछ देशी और विदेशी कपासों के रेशों की परिपक्वता हम नीचे देते हैं—

नाम	प्रतिशत पक्के	प्रतिशत अधपके	प्रतिशत कच्चे
देशी कपास—			
१. जरीला	७२	९	१९
२. मोलीसोनी	८६	७	७
३. गावरानी	७२	११	१७
विदेशी कपास—			
१. कंबोडिया २	५०	१३	३७
२. पंजाब अमेरिकन ४ अफ्	५८	१६	२६

रेशों की परिपक्वता अिस प्रकार विशेष महत्व का विषय होने की वजह से परिपक्वता पर परिस्थिति का क्या असर होता है और अुसे किस तरह बढाया जा सकता है, अिस बारे में अिंडियन सेन्ट्रल कॉटन कमीटी ने अपनी माटुंगा की लॅबोरेटरी में प्रयोग किये हैं। अिन प्रयोगों का सारांश हम यहां देते हैं।

ये प्रयोग पंजाब अमेरिकन २८९ अेफ्, मोलीसोनी और कंबोडिया अिन तीन कपासों पर किये गये। पहले दो कपास बीकानेर राज्य के

गंगासागर स्थान से और कंबोडिया बूंदी और अजमेर से प्राप्त हुअे थे। पंजाब अमेरिकन और मोलीसोनी कपासों के प्रयोग में निम्न पांच बातें देखी गयीं।

१. मअी की बोवाअी और जून की बोवाअी, २. प्राथमिक जुताअी और बिल्कुल ही जुताअी न करना, ३. विशेष सिंचाअी और साधारण सिंचाअी, ४. खली का खाद, निसिफॉस खाद और बिल्कुल ही खाद न देना और, ५. छः अिंच और बारह अिंच फासले पर बोवाअी करना। प्रयोगों से अिन पांच बातों के बारे में जो नतीजे प्राप्त हुअे वे अिस प्रकार हैं :—

प्रयोगों के नतीजे

१. मअी और जून अिन दो बोवाअी के समयों में पंजाब अमेरिकन के लिअे मअी और मोलीसोनी के लिअे जून योग्य समय दिखाअी दिया। जून में बोये गये पंजाब अमेरिकन के रेशों की परिपक्वता ६७ प्रतिशत थी वह मअी के रेशों में ७१ प्रतिशत रही। मोलीसोनी में मअी के रेशों की परिपक्वता ७१% निकली तो जून के रेशों की परिपक्वता ८२% पायी गअी। अिससे यह स्पष्ट है कि बोने के समय का असर रेशों की परिपक्वता पर काफी होता है। अुसी तरह यह भी अिससे मालूम होगा कि अलग अलग कपासों के लिअे बोने का योग्य समय अलग अलग होता है।

२. प्राथमिक जुताअी का रेशों की परिपक्वता पर कोअी विशेष असर नहीं हुआ। बिना जोते खेत के रेशों की और जुताअी किये खेत के रेशों की परिपक्वता करीब अेकसी ही पाअी गअी। अुलटे जून में बोये हुअे मोलीसोनी के रेशों की परिपक्वता जुताअी की बनिस्बत बिना जुताअी में ज्यादा दिखाअी दी।

३. साधारण सिंचाअी की अपेक्षा विशेष सिंचाअी से दोनों कपासों के रेशों की परिपक्वता बढ़ी हुअी मिली। साधारण सिंचाअी में ६ बार पानी दिया गया और विशेष सिंचाअी में ११ बार, अर्थात् यह स्पष्ट है विशेष सिंचाअी से कपास के रेशों की परिपक्वता बढ़ती है।

४. पंजाब अमेरिकन में मअी की बोवाअी के रेशों की परिपक्वता बिना खाद की अपेक्षा निसिफॉस खाद से ज्यादा हुअी। लेकिन मोलीसोनी में निसीफॉस की अपेक्षा खली के खाद से या बिलकुल ही खाद न देने से रेशों की परिपक्वता में वृद्धि हुअी। अिससे दिखाअी देगा कि मोलीसोनी जैसी कपासों में खाद के कारण रेशों की परिपक्वता बढ़ती ही है, अैसी बात नहीं।

५. छः अिंच फासला तथा बारह अिंच फासला रख कर बोये हुअे पंजाब अमेरिकन के रेशों की परिपक्वता में कोअी विशेष फर्क नहीं दिखाअी दिया। लेकिन मोलीसोनी कपास में १२ अिंच फासले की बनिस्बत ६ अिंच फासले से बोअे हुअे रेशों की परिपक्वता ज्यादा रही, यानी मोलीसोनी कपास कम फासला रखकर बोना परिपक्वता की दृष्टि से फायदेमंद दिखाअी दिया।

कंबोडिया कपास के नतीजे

कंबोडिया कपास पर जो प्रयोग किअे गअे अुनमें निम्न बातें देखी गअीं—१. स्थान, २. बोने का समय, ३. पर्याप्त और अपर्याप्त सिंचाअी, ४. जुताअी के समय के अंदर खाद देना या न देना, ५. अूपर खाद देना।

१. बूंदी के रेशों से अजमेर के रेशों की परिपक्वता अधिक पाअी गअी। बूंदी के रेशों की ५७ प्रतिशत परिपक्वता थी तो अजमेर के रेशों की ६२ प्रतिशत रही। अिससे यह स्पष्ट है कि रेशों की परिपक्वता पर स्थान का काफी असर होता है।

२. बोने के तीन समय रखे गअे थे, मार्च, मअी और जुलाअी। रेशों की परिपक्वता की दृष्टि से मार्च सब से अच्छा और जुलाअी सब से खराब पाया गया। यानी कंबोडिया कपास को जल्दी बोना फायदेमंद दिखाअी देता है।

३. पर्याप्त सिंचाअी से रेशों की परिपक्वता अधिक हुअी। अपर्याप्त सिंचाअी से परिपक्वता कम हुअी।

४. प्रति अेकड १२ मन भेड का गोबर तथा प्रति अेकड ५० पौंड अमोनियम सल्फेट साथ में मिला कर जुताअी के वक्त जमीन के अंदर दिया गया। देखा गया कि अिससे रेशों की परिपक्वता पर बुरा असर हुआ। अिसकी अपेक्षा बिना खाद दिअे हुअे रेशों की प्रतिशत परिपक्वता ज्यादा रही।

५. अूपर से खाद देने के तीन प्रयोग किये गअे। अेक में सिर्फ भेड का गोबर, दूसरे में भेड का गोबर और अमोनियम सल्फेट तथा तीसरे में बिलकुल ही खाद नहीं दिया गया। अूपरी खाद का मतलब बोने के वक्त या बोने के बाद दिये गअे खाद से है। अिसमें बिना खाद के तथा भेड के गोबर के रेशों से भेड का गोबर और अमोनियम सल्फेट दिये हुअे रेशे ज्यादा परिपक्व निकले। यही खाद जब अंदर दिया गया तब वह फायदेमंद नहीं हुआ, लेकिन वही जब अूपर से दिया गया तब अुससे रेशों की परिपक्वता में काफी वृद्धि हुअी।

सारांश—प्रयोगों के अिस विवरण से मालूम होगा कि रेशों की परिपक्वता पर स्थान, सिंचाअी, खाद, बोने का समय, पौधों के बीच का फासला तथा जुताअी का काफी असर होता है। अलग अलग कपासों में ये सभी बातें अलग अलग होती हैं। किस कपास के लिअे कौनसी बात योग्य होगी यह देखकर अुसे अमल में लाया जायगा तब ही रेशों की परिपक्वता बढ़ेगी। हिन्दुस्तान में बोवाअी का समय, वर्षा आदि हमेशा अनिश्चित रहती हैं अिस कारण स्थान स्थान में, मौसम मौसम में और खेत खेत में अेक ही किस्म के कपास के रेशों की परिपक्वता कहीं कम तो कहीं ज्यादा पाअी जाती है। खादीकाम में कपास का चुनाव करते समय ये सारी बातें ख्याल में लेकर अधिक से अधिक परिपक्व रेशों का कपास ही पसंद करना चाहिअे। रेशों की परिपक्वता जाँचने का व्यावहारिक और आसान तरीका अभी प्राप्त नहीं है। परिपक्वता जाँचने के शास्त्रीय तरीके में रेशों को खास रसायन में भिगो कर खुर्दबीन से देखते

है। परिपक्व रेशे पूरे पोले, अधपके आधे ठोस और कच्चे रेशे पूर्ण ठो
दिखाओी देते हैं। खुर्दबीन के बिना यह जाँच नहीं हो सकती। फि
भी रेशे पूरे पके हैं या नहीं असका अंदाज़ा रेशों का रंग देख कर त
चुटकी में खींच कर लगाया जा सकता है।

हिंदी कपासों में मोम का परिमाण और असका रेशों के मुलायमपन से संबंध

मोम के गुणधर्म

कपास के रेशों में मोम जैसा अेक तेलिया पदार्थ रहता है। य
मोम कपास के रेशे की बाहरी सतह पर अेक पतले आवरण के रूप में लग
होता है। असी के कारण कपास का रेशा स्पर्श में मुलायम माछूम पड़त
है। कपास के रेशों का मुलायमपन या खुरदरापन असके मोम के क
ज्यादा परिमाण पर निर्भर करता है। कपास के परीक्षकों को कपास क
श्रेणी निश्चित करते वक्त अन्य बातों के साथ स्पर्श कैसा है यह भी देखन
जरूरी होता है। रेशों के स्पर्श का असके मोम के साथ क्या संबंध है
असि बारे में माटुंगा की प्रयोगशाला में जो प्रयोग किये गये हैं अनसे कुछ
जानकारी हम यहाँ देते हैं।

कपास के रेशों में सेल्युलोज, पानी आदि जो दूसरे द्रव्य हैं अुन
के मुकाबिले अुसमें मोम की तादाद बहुत कम होती है। रेशों में ०·२
से ०·६ प्रतिशत तक मोम होता है, फिर भी कताओी, बुनाओी की
क्रियाओं में रेशों का यह मोम बहुत महत्व का काम करता है। अिन
क्रियाओं में यह चिकनाओी का काम देता है। अिसीलिये पूनी से आसानी
के साथ रेशे निकल कर सूत के रूप में बटे जा सकते हैं। अिस संबंध

में जो प्रयोग हुअे अुनसे देखा गया है कि मामूली रेशों से ४८ नम्बर तक जिस कपास से सूत काता गया अुसी कपास के रेशों से मोम निकाल देने के बाद २६ नम्बर के अूपर सूत कातना मुश्किल हो गया। अिसके अलावा ओटाओ, धुनाओ आदि क्रियाओं में मोम निकाले रेशों से छीजन भी बहुत ज्यादा हुओ तथा अुसका सूत बहुत असमान और करीब पचीस प्रतिशत कमजोर निकला। कपास में ०.६ प्रतिशत से भी मोम कम होता है। फिर भी अुसके न रहने से कताओ की क्रियाओं में काफी कठिनाओ होती है। धुलाओ और रंगाओ में रेशों के मोम का विशेष सम्बन्ध आता है। मोम को रेशों से अलग कर देने के बाद ही सूत पानी और रंग को अच्छी तरह सोख सकता है।

कपास के रेशों के मोम की बनावट बहुत संमिश्र होती है। अुसमें आल्कोहोल, अेसीड, हैड्रोकार्बन और रेजीन आदि द्रव्य होते हैं। अिन द्रव्यों में से कुछ अीथर, हलके पेट्रोलियम तथा बेंझीन में गल जाते हैं। लेकिन कुछ अैसे भी द्रव्य हैं जो अिनमें बहुत मुश्किल से गलते हैं। अिसलिये मोम को रेशों से अलग करना काफी मुश्किल होता है। वह बहुत धीरे धीरे ही निकलता है।

प्रयोगों का अुद्देश्य

कपास की श्रेणी निश्चित करते वक्त तथा कपास की कीमत आंकते वक्त कपास के परीक्षक को रेशों की लम्बाओ, मजबूती, समानता आदि बातों के साथ रेशों का स्पर्श देखना भी जरूरी होता है। सी-आअी-लैंड, अिजिप्शियन, अमेरिकन, अिन्डियन आदि कपास की किस्मों का स्पर्शअलग अलग तो होता ही है, अितना ही नहीं अुस हरअेक किस्म में भी स्पर्श की दृष्टि से कओ श्रेणियां होती हैं। अिसलिये हिन्दुस्तान के मूल कपासों में और बाहरी बीज लाकर अुपजाये हुअे विदेशी कपासों में मोम का प्रतिशत परिमाण कितना होता है, तथा मोम कम ज्यादा होने से अुसके स्पर्श में क्या फर्क होता है यह देखना बहुत जरूरी है। साथ ही

कपास की श्रेणी, आँख और हस्त-स्पर्श से निश्चित करनेवाले परीक्षकों के मूल्यों के साथ रेशों के मोम का सम्बन्ध होता है या नहीं यह देखना भी फायदेमंद है। अिसलिअे अिस बारे में जो प्रयोग किये गये अुनका लक्ष्य नीचे लिखी बातों की जाँच करना रहा:—

(१) हिन्दुस्तान की भिन्न भिन्न कपासों में मोम का प्रतिशत।

(२) कपास के रेशों के मोम का परिमाण आनुवंशिक होता है या परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है।

(३) रेशों के स्पर्श का अुसके मोम के प्रतिशत से क्या सम्बन्ध है।

प्रयोग के लिये खुरदरे और मुलायम दोनों तरह के कपास चुने गये। कपासों के नाम अुनके मोम के प्रतिशत तथा अुनकी परीक्षकों द्वारा निश्चित की हुअी श्रेणी नीचे की सारिणी में दी है:—

प्रयोगों के नतीजे

नाम	प्रतिशत मोम	१ ला परीक्षक	२ रा परीक्षक	३ रा परीक्षक
१. कंपाला	०.५४४	बहुत मुलायम	बहुत मुलायम	बहुत मुलायम
२. पंजाब अमेरिकन	०.४६८	मध्यम	मुलायम	किंचित् मुलायम
३. कोकोनाडा	०.४६५	मध्यम	मुलायम	मध्यम
४. नवसारी	०.४५७	मुलायम	मुलायम	बहुत मुलायम
५. भरूच	०.४०५	किंचित् मुलायम	मध्यम, मुलायम की ओर झुकता है	मध्यम
६. धोलेरा	०.३८७	खुरदरा सा	,,	,,
७. पंजाब देशी	०.३८५	मध्यम	किंचित् खुरदरा	खुरदरा सा
८. कुम्पटा	०.३५९	खुरदरा सा	मध्यम मुलायम की ओर झुकता है	मध्यम
९. बनोसा (बरार)	०.३३०	मध्यम	किंचित् खुरदरा	,,
१०. सिंध देशी	०.२७४	खुरदरा सा	खुरदरा	खुरदरा सा
११. हाथरस (युक्तप्रान्त)	०.२६१	मुलायम	किंचित खुरदरा	,,
१२. सिंध ऊनी	०.२२९	—	खुरदरा	,,

कपास को पहले अच्छी तरह साफ कर लिया गया और भट्ठी में तपाकर अुसकी नमी मालूम कर ली गअी। अिसके बाद अुसे चार घण्टे

बेन्झीन में अुबाल कर मोम का प्रतिशत निकाला गया। ओीयर में अुबालने से मोम विशेष अच्छी तरह निकल आता है अैसा माना जाता था। लेकिन देखा गया कि बेन्झीन से भी करीब करीब अुतना ही मोम निकल सकता है।

रेशों की परख करनेवाले परीक्षकों का निर्णय व्यक्तिगत बुद्धि और मनोभावना पर अवलंबित होता है और अिसलिये अिनके निर्णय में गलती होने की संभावना रहती है। अिसलिये अेक परीक्षक न रखकर तीन परीक्षक रखे गये। अुनको कहा गया कि वे अपने रोजाना व्यवहार में रेशों की जिस तरह स्पर्श के द्वारा परीक्षा करते हैं अुसी तरह अिन प्रयोगों के रेशों की परीक्षा करें। अुनके नतीजे अूपर की सारणी में दिये हैं।

नतीजों की चर्चा

नतीजों की तरफ देखने से मालूम होगा कि हिन्दुस्तान की कपासों में मोम का प्रतिशत ०.४६८ से ०.२२९ तक होता है। पंजाब अमेरिकन में सब से ज्यादा मोम पाया जाता है और सिन्ध अूनी में सब से कम। सिन्ध अूनी से पंजाब अमेरिकन में दुगुना मोम दिखाअी देता है॥ अन्य कपास मोम की दृष्टि से अिन दोनों के बीच में पड़ते हैं हिन्दुस्तान के बाहर का कम्पाला कपास तुलना के लिये प्रयोग में लिया गया है। अुसमें पंजाब अमेरिकन से भी १६ प्रतिशत मोम ज्यादा दिखाअी देता है। हिन्दुस्तान के बाहर के कपासों में मोम का प्रतिशत अिस तरह होता है। अमेरिकन ०.४३, अीजिप्शियन ०.३९, सीआअर्लैंड ८०.५२, दक्षिण अमेरिकन ०.४१ व अिन्डियन ०.३४।

अिससे मालूम पडेगा कि मोम की दृष्टि से भी हिन्दुस्तान के अधिक तर कपासों का नंबर अन्त में ही आता है। हिन्दुस्तान के कुछ कपास अलबत्ता मोम के बारे में अिजिप्शियन कपासों के बराबर या बढ़कर आते हैं। ये कपास अधिक तर बाहरी बीज लाकर हिन्दुस्तान में पैदा किये गये हैं। अिससे मालूम पडेगा कि हिन्दुस्तान के मूल कपासों में मोम का प्रतिशत कम और बाहर से लाये हुअे कपासों में ज्यादा होता है।

अिससे यह भी निश्चित होता है कि कपासों में मोम का प्रतिशत आनुवंशिक होता है। अमेरिका से बीज लाकर हिन्दुस्तान में जो कपास पैदा किये गये, अुन्होंने स्थान और परिस्थिति बदलने के बावजूद भी अपना मोम का मूल प्रतिशत कायम रखा। अिसका अेक ही अपवाद दिखाअी देता है। कुम्पटा बाहरी कपास होकर भी अुसके मोम का प्रतिशत पंजाबदेशी जैसे हिन्दुस्तान के मूल कपास से भी कम दिखाअी देता है। अिसलिये कुछ अंश में मोम के प्रतिशतपर स्थान और परिस्थिति का भी असर होता है, अैसा कहा जा सकता है।

परीक्षकों के रिपोर्टों की चर्चा

अब परीक्षकों के रिपोर्टों को देखिये। तीनों परीक्षकों ने कम्पाला कपास को बहुत मुलायम बताया है और सिन्ध देशी और सिन्ध अूनी को खुरदरा और खुरदरासा बताया है। लेकिन अिसके बाद हर कपास के बारे में अिन तीनों के मतों का मेल नहीं बैठता है। कहीं कहीं थोडा बहुत मेल दिखायी देता है, लेकिन काफी जगहों पर अुनमें बहुत ज्यादा फर्क है। मसलन, अेक परीक्षक पंजाब अमेरिकन को मध्यम कहता है, दूसरा अुसे मुलायम कहता है तो तीसरा अुसे किंचित मुलायम बताता है। अुसी तरह हाथरस कपास को अेक मुलायम कहता है, दूसरे दो किंचित खुरदरा और खुरदरासा कहते हैं। अैसे और कअी अुदाहरण सारणी देखने से दिखाअी देंगे। अिससे कहा जा सकता है कि कपास की परीक्षा करनेवाला परीक्षक कितना भी प्रवीण क्यों न हो, आंख और अुंगलियों के द्वारा जांच करने में अुससे गल्ती होना संभव है। अिसलिये कपासों का खुरदरापन या मुलायमपन निश्चित करने के लिये यंत्रों द्वारा परीक्षा करने का यानी मोम का प्रतिशत देखने का तरीका अख्तियार करना जरूरी है।

अिस दृष्टि से अेक अेक परीक्षक के रिपोर्ट को अब देखिये। सारिणी देखने से मालूम होगा कि दूसरे परीक्षक की रिपोर्ट मोम के प्रतिशत के साथ बहुत कुछ मिलती है। सिर्फ कुम्पटा व हाथरस कपासों के बारे में अुसके रिपोर्टों में फर्क हुआ है। यह ध्यान में रखना चाहिये कि

मोम का प्रतिशत निकालने के लिये जब कभी दिन लगाने पड़े तब परीक्षकों को अिसकी जांच करने के लिये आधा घण्टा भी न लगा होगा और अिसलिये परीक्षकों की अिस परीक्षा-शक्ति को सचमुच धन्यवाद देना होगा। दूसरे दो परीक्षकों के रिपोर्ट मोम के प्रतिशत के साथ अुतने ठीक नहीं अुतरे हैं। मसलन, पहले परीक्षक ने हाथरस कपास को मुलायम और धोलेरा कपास को खुरदरासा बताया है, लेकिन असल में धोलेरा से हाथरस कपास में ३२ प्रतिशत मोम कम है। अिसी तरह तीसरे परीक्षक ने पंजाब अमेरिकन और कोकोनाडा से नवसारी कपास की श्रेणी अूंची बताअी है, लेकिन मोम के प्रतिशत की दृष्टि से वह निम्न श्रेणी में आता है।

मोम के अनुसार वर्गीकरण

परीक्षकों के रिपोर्ट का और मोम के प्रतिशत के प्रयोगों का विचार कर नीचे लिखा पैमाना कपास के मोम की तादाद और स्पर्श को बताने के लिये सूचित किया गया है। अिस पैमाने में और भी सूक्ष्म वर्गीकरण किया जा सकता है, लेकिन रोजाना व्यवहार के लिये नीचे लिखा वर्गीकरण पर्याप्त है:—

(१) बहुत मुलायम (very silkly)	०.५०० से अूपर
(२) मुलायम (silkly)	०.४२५ से ०.५००
(३) किंचित् मुलायम (मुलायम की ओर झुकता हुआ याने मध्यम) (slightly silkly)	०.३५० से ०.४२५
(४) खुरदरसा (roughish)	०.३०० से ०.३५०
(५) खुरदरा (rough)	०.३०० से नीचे

रुअी के समूह में रेशों की लंबाअी का फर्क

कपास में अत्यधिक अंतर-प्रवृत्ति

अगर हम रुअी की गांठ में से कहीं से नमूने के तौर पर थोड़ी सी रुअी निकालें तो हमें दिखाअी देगा कि अुसमें रेशों की लंबाअी में विलक्षण फर्क है। अिंडियन सेंट्रल कॉटन कमेटी, बंबअी की टेक्नॉलॉजिकल लॅबोरेटरी के संशोधकों ने रेशों की लंबाअी के अिस फर्क का तथा रेशों के अन्य स्वरूपों का बारीकी से अध्ययन किया है। सुप्रसिद्ध सूरती कपास में रेशों की लंबाअी ⅙ अिंच से १⅚ अिंच तक, चौड़ाअी १० से २८ मायक्रोन तक, प्रतितंतु रेशों के प्राकृतिक बट २० से ३२० तक और अेक रेशे की मजबूती ० से १५ ग्राम तक पाअी गअी। अर्थात् यह फर्क सचमुच बहुत ही ज्यादा है।

फर्क के कारण

अितने ज्यादे फर्क का कारण क्या है? अिसका प्रकट कारण यह मालूम पड़ता है कि नमूना जिन भिन्न भिन्न रेशों से बना है अुनमें ही यह फर्क होना चाहिये। रुअी की गाँठ भिन्न भिन्न खेतों के कपासों से बनी होगी, अुन खेतों का कुदरती अुपजाअूपन अलग अलग होगा, अुनमें अलग अलग तरह का खाद डाला गया होगा और अुनकी सिंचाअी का प्रबंध भी अलग अलग ढंग का होगा। कुछ पौधों को तो सींचा ही नहीं गया होगा, क्यों कि हिंदुस्तान में कपास की अधिकतर खेती वर्षा पर ही अवलंबित रहती है। अथवा, अलग अलग खेतों में पौधों में अंतर अलग अलग होगा। अुनमें पिछली फसल भी अलग अलग अुगाअी गयी होगी। अलग अलग समय पर कपास चुना गया होगा। कपास के रेशों पर असर करनेवाली अिन बाहरी बातों के अलावा अेक ही खेत के पौधे पौधे में, अेक ही पौधे के टोटे टोटे में, अेक ही टोटे की पेशी पेशी में और अेक ही पेशी के दाने दाने में, अेक ही बिनौले के पृष्ठभाग के स्थान स्थान में और आखिर

अुस स्थान में भी कुदरती तौर पर फर्क होता है। अिस तरह फर्क के अनेक कारण हैं। अिसलिअे रेशों की लंबाअी आदि में भिन्नता होना स्वाभाविक है अैसा आप कहेंगे। यह कहाँ तक ठीक है अिसे अब देखिये।

र्क का पैमाना

अिसके लिये पहले हमें अंतर का पैमाना निश्चित करना पडेगा। ास के नमूने में रेशों की लंबाअी का तथा अन्य बातों के कारण पडने ले अंतर का अध्ययन करने के लिये अंकशास्त्रज्ञों ने कुछ पद्धतियां बनायीं । अंतर के नाप की अिकाअी को अुन्होंने Standard deviation ाम दिया है। जब यह जनसंख्या के औसत के प्रतिशत के रूप में यक्त किया जाता है तब अुसे Co-efficient of variation कहते हैं। ंतर के अिसी नाप को अिस जाँच में अपनाया गया है।

ेक ही बिनौले में फर्क

यहां फर्क की जांच का और विशेषतः रेशे की लंबाअी के फर्क ा ही विचार किया गया है। पहले हमने जो क्रम दिया है अुसकी ुल्टी तरफ से शुरू करें तो दिखाअी देगा कि अेक बिनौले के रेशों की ंबाअी में भी काफी अंतर होता है। बिनौले की सतह की अेक छोटी ी जगह के रेशों में भी काफी अंतर होता है। यह अंतर बिनौले के नुकीले हिस्से पर विशेष ज्यादा रहता है। फिर रेशों की औसत लंबाअी बिनौले के पृष्ठभाग के अलग अलग हिस्सों में अलग अलग होती है। बिनौले के नुकीले हिस्से में चपटे हिस्से की अपेक्षा रेशों की औसत लंबाअी कम होती है और दूसरे हिस्सों में वह मध्यम होती है। साधारणतः अैसा कहा जा सकेगा कि अेक ही बिनौले के रेशों की लंबाअी का अंतर कपास की अलग अलग किस्मों में अलग अलग होता है, फिर भी अिस अंतर का गुणक २० प्रतिशत पकड सकते हैं।

विनौलों विनौलों में फर्क

अेक ही पेशी के बिनौलों में स्पष्टतया फर्क पाया जाता है, प
रेशों की लंबाअी और अन्न-प्राप्ति के मूल से बिनौलों का फासला अिन दो
में कोअी निश्चित संबंध नहीं पाया जाता है। अेक डोडे की पेशियों
और जिनमें बिनौलों की संख्या अलग अलग है अैसी पेशियों में बहुत क
फर्क पाया जाता है। दूसरी ओर अेक पौधे के डोडों में काफी फ
रहता है, यद्यपि अिस संबंध में अलग अलग संशोधकों ने जो नती
निकाले हैं अुनमें मेल नहीं बैठता है। यह भिन्नता आश्चर्य की बात न
है, क्योंकि अलग अलग प्रयोगों में फर्क के कारण अलग अलग होते हैं।

पौधे की आयु के कारण फर्क

पौधे की आयु के साथ साथ अुसके डोडों के रेशों की औस
लंबाअी में फर्क पड़ता है। साधारणतया यह देखा गया है कि फसल वे
अंत-समय जो डोडे लगते हैं अुनके रेशे अुससे पहले लगनेवाले डोडों वे
रेशों से कम लंबे होते हैं।

सिंचाअी, खाद, फासला और आवर्तन के कारण फर्क

अब पहले बताअे हुअे परिस्थितिजन्य कारणों से पड़नेवाले फर्व
को देखें। अिन कारणों से फर्क को अधिक अच्छी तरह समझ सकें
यदि अुनका मूल कारण जान लें और वह यह कि कपास के रेशों
की वृद्धि की दो सीढ़ियां होती हैं और प्रत्येक सीढ़ी रेशों के पूरे पकने
का जो समय होता है अुसका आधा समय लेती है। पूर्वार्ध में रेशा केवल
लंबा बढ़ता है, तो अुत्तरार्ध में रेशे की अंतर्गत पोलाअी में सेल्युलोज की
दूसरी पर्त तैयार होती है। अगर पूर्वार्ध में पानी की कमी या अैसी ही दूसरी
कोअी कठिनाअी हो तो रेशों की लंबाअी बढ़ने में प्रतिबंध होगा, लेकिन
अुत्तरार्ध में अैसी कोअी कठिनाअी आये तो रेशों की मोटाअी पर असर
होगा और रेशा कमजोर और कच्चा रहेगा।

अब तक अिस संबंध में जो अध्ययन किया गया अुससे दिखाअी
देता है कि कम-ज्यादा सिंचाअी से रेशों की लंबाअी में थोड़ा फर्क पड़ता

अवश्य है, लेकिन वह अधिक नहीं है। कम अुपजाअू जमीन में खाद से रेशों की लंबाअी पर कुछ असर पाया गया है, परंतु अच्छी अुपजाअू जमीन में वह बिलकुल कम रहा। जमीन का अुपजाअूपन और सिंचाअी अिन दोनों बातों का कपास के अुत्पादन पर बहुत ज्यादा असर होता है, लेकिन रेशों की लंबाअी पर बहुत कम। अुसी तरह पौधों में कम ज्यादा फासला रखने से तथा फसलों के आवर्तन (Rotation) में बदल करने से भी रेशों की लंबाअी पर कोअी विशेष परिणाम नहीं होता।

स्थान और मौसम के कारण फर्क

अेक ही किस्म के कपास को अेक ही स्थान में लेकिन अलग मौसमों में अुपजाने से या अेक ही कपास को अेक ही मौसम में लेकिन अलग अलग स्थानों में अुपजाने से परिस्थितिजन्य भिन्न भिन्न कारणों के संमिश्रण का असर क्या होता है अिसकी जांच करने पर, कुछ प्रयोगों में फर्क में कुछ निश्चित वृद्धि दिखाअी दी, लेकिन अिस फर्क का संबंध किसी निश्चित परिस्थितिजन्य कारण से लगाना संभव नहीं दिखाअी दिया। लेकिन अेक प्रयोग में, जहाँ अेक ही वर्ष में स्थान और मौसम दोनों भिन्न थे, फर्क काफी स्पष्ट दिखाअी दिया। अेक स्थान की मार्च-अगस्त (गरमी) की फसल का रेशा दूसरे स्थान की सितंबर-मार्च (जाडे) की फसल के रेशे से अधिक लंबा और महीन पाया गया। फिर भी जब अेक ही मौसम (सितंबर-मार्च) की दोनों स्थानों की फसलों की जांच की तब अुनमें फर्क काफी घटा हुआ पाया गया। अिससे सिद्ध होता है कि अधिक लंबाअी और अधिक महीनपन का कारण गरमी के मौसम में सूर्य के किरणों की क्रिया और अूंचा तापमान का होना ही है।

रुअी के समूह में तथा अेक बिनौले में फर्क

अूपर देखा कि अेक बिनौले के रेशों में भी काफी फर्क रहता है और कअी अन्य कारणों से कहीं ज्यादा और कहीं कम फर्क पाया जाता है। अब नमूने के तौर पर ली गअी रुअी के समूह में और अेक

बिनौले के रेशों में जो फर्क पाया जाता है असकी तुलना करके देखेंगे। अिस दृष्टि से चार किस्म के कपास की जांच की गयी जिसमें पाया गया कि अेक बिनौले के मुकाबले में समूह में रेशों की लंबाअी के फर्क का गुणक बडा है, लेकिन वह केवल ०.१, ०.८, १.१ और १.९ प्रतिशत ही ज्यादा है, जो आंकडेशास्त्र की दृष्टि से नगण्य है। यह नतीजा अेक तरह से परस्पर विरुद्ध है, क्योंकि फर्क के अितने अधिक कारण रहते हुअे भी अेक बिनौले में जो फर्क है अुससे बहुत ज्यादा फर्क रुअी के समूह में नहीं दिखाअी देता है।

अधिक फर्क न दिखाअी देने का कारण

अिसका कारण क्या है? आंकडेशास्त्र से अिसका कुछ खुलासा होता है क्या, यह देखें। अगर रुअी के समूह में फर्क का गुणक, कहिये, २० प्रतिशत है और जिनके औसत फर्क का गुणक १० प्रतिशत है अैसे कअी समूहों के साथ अुसे मिलाया जाय तो अुनका कुल फर्क २०+१०=३० प्रतिशत नहीं, लेकिन असल में वह करीब $\sqrt{२०^2+१०^2}$=२२.४ प्रतिशत होगा। करीब कहने का कारण यह कि सही आंकडा प्राप्त करने के लिये बहुत बडा गणित करना पडेगा, परंतु प्रस्तुत विषय के लिये अूपर का तरीका पर्याप्त समझा जा सकता है।

बडे समूह के फर्क के दो हिस्से रहते हैं—१. बिनौले में रहा फर्क और २. बिनौले बिनौले में रहा फर्क, जो पीछे बताये हुअे कअी कारणों से निर्माण होता है। अगर हम अेक बिनौले के रेशों की लंबाअी के फर्क का गुणक २० प्रतिशत पकडें और अलग अलग कारणों से पडने वाले बिनौले बिनौले के फर्क का गुणक पांच समूहों का ४ प्रतिशत और दस समूहों का २ प्रतिशत पकडें तो पीछे बताअे अनुसार अुनका कुल फर्क करीब $\sqrt{२०^2+५\times४^2+१०२^2}$= $\sqrt{५२०}$=२२.८ प्रतिशत होगा याने २.८ प्रतिशत ज्यादा होगा। अगर दूसरी तरफ बिनौले का फर्क कम, कहिये, २० प्रतिशत के बदले ५ प्रतिशत हो तो अुनका कुल फर्क

$\sqrt{५^2+५\times४^2+१०\times२^2} = \sqrt{१४५}=१२'०$ प्रतिशत यानी ७ प्रतिशत ज्यादा होगा। २'८ की तुलना में यह अर्थात् बहुत ज्यादा है। अिसलिये दिखाअी देगा कि अेक बिनौले में अधिक फर्क होने के कारण बिनौले बिनौले में रहे काफी फर्क से कुल फर्क में भी कुछ विशेष वृद्धि नहीं हो सकी है।

सारांश—यह भले परस्पर विरुद्ध दिखाअी दे, लेकिन यह सच है कि अेक बिनौले के रेशों के फर्क से केवल जरासा ज्यादा फर्क रुअी के बड़े समूह में होता है। अिसका यह मतलब नहीं कि परिस्थितिजन्य अलग अलग कारणों से तथा सामान्यतः बिनौले के अंदरूनी भेद के कारणों से फर्क पैदा नहीं होता। फर्क तो होता है, और वह कुछ कारणों से अधिक और कुछ से कम, लेकिन चूंकि अेक बिनौले में ही ज्यादा होता है अिसलिये अुन फर्कों के मेल से कुल फर्क में कोअी विशेष वृद्धि नहीं होती और यह बात फर्क संबंधी गणित से भी सही अुतरती है।

सूखी और गीली अवस्था में रेशों की मजबूती

रेशों की तुलना

रेशों की मजबूती अुसका महत्त्व का अंग है। कपास, रेशम, अून, रेयन आदि अलग अलग रेशों की अलग अलग मजबूती होती है। फिर अिन रेशों की मजबूती सूखी अवस्था में अलग और गीली अवस्था में अलग होती है। सूत और कपड़े के टिकाअूपन की दृष्टि से और विशेष कर कताअी, बुनाअी आदि क्रियाओं की दृष्टि से अिन सब मजबूतियों को ध्यान में लेने की आवश्यकता होती है। नीचे रेशों की सूखी और गीली मजबूती दी जाती है।

रेशा	सूखी मजबूती (माअिको ग्रॅम्स)	गीली मजबूती सूखी के प्रतिशत में
कपास	२·१ से ५·१	११० से १२०
अून	१·२ से १·७	८० से ९०
रेशम	२·८ से ३·३	७५ से ८५
सादा ॲसेटेट	१·३ से १·७	६५ से ७०
मजबूत असेटेट	७·०	८६
सादा व्हिस्कोज	१·८ से २·२	४५ से ५५
अर्ध मजबूत व्हिस्कोज	३·१	६८
मजबूत व्हिस्कोज	५·५	६४

अूपर की तालिका से मालूम पडेगा कि कपास का रेशा सब रेशों से अधिक मजबूत है। अुसकी मजबूती की बराबरी अून, रेशम या दूसरे रासायनिक रेशे नहीं कर सकते हैं। केवल खास क्रिया से मजबूत बनाये हुअे व्हिस्कोज और ॲसेटेट रेयन के रेशे कपास से अधिक मजबूत बन पाये हैं।

गीली अवस्था

गीली अवस्था में रेशों की मजबूती देखने पर तो कपास की अद्वितीयता और भी स्पष्ट हो जाती है। अुस अवस्था में कपास के रेशे की मजबूती १० से २० प्रतिशत तक बढ जाती है। अून, रेशम आदि अन्य रेशों की मजबूती गीली अवस्था में बढती तो नहीं, अुल्टे घट जाती है। अुनकी मजबूती गीली अवस्था में १०से२० प्रतिशत तक, रेशम की १५ से २५ प्रतिशत तक और रेयन की तो ४० से ६० प्रतिशत तक घट जाती है। गीली अवस्था में रेशों की मजबूती बहुत महत्त्व की वस्तु है। हमें अपने कपडे साफ रखने के लिये रोज धोने पडते हैं। अगर पानी में रेशों की मजबूती कम होती हो तो धोते वक्त कपडा कमजोर होकर जल्दी फट जायगा। धुलाअी में कपडे पर सब से अधिक मार पडती है, पत्थर पर अुसे कअी बार जोर जोर से पटका जाता है, खींचा और मरोडा जाता है। अिसलिये गीली अवस्था

में कपडे की मजबूती बनी रहनी चाहिये, कम तो होनी ही नहीं चाहिये। कपास ही अेक अैसा रेशा है जिसकी मजबूती गीला करने पर बनी ही नहीं रहती; बल्कि बढ जाती है। कपास का यह गुण बडे काम का है। बुनाअी, धुलाअी, रंगाअी आदि क्रियाओं में अुसके कारण वह झटके, खिंचाव, रगड आदि बातों को बरदाश्त कर सकता है। अन्य रेशे भिगोने पर कमजोर होते हैं, अिसलिये अूनी, रेशमी आदि कपडों के लिये सूखी धुलाअी के तरीके खोजने पडे हैं, लेकिन वे बहुत महंगे हैं और विशेषज्ञ ही अुन्हें काम में ला सकते हैं। आम जनता के लिये तो पानी के द्वारा कपडे धोने का तरीका ही सरल और सर्वसुलभ है। अुस दृष्टि से सब कपडों में कपास का कपडा ही सर्वोत्कृष्ट साबित होता है।

सूत में रोयेंदार गुठलियाँ

गुठलियों का कारण

सूत और कपडे में रेशों की बारीक-बारीक छोटी गुठलियाँ पायी जाती हैं। अिन्हें अंग्रेजी में Nep कहते हैं। सूत व कपडे का यह अेक बडा दोष समझा जाता है। ये गुठलियाँ मुख्यतः कच्चे रेशे अेक दूसरे में अुलझकर बनी हुअी रहती हैं। अिसके अलावा अुनमें पक्व, अर्धपक्व आदि सब तरह के रेशे भी मिलते हैं। जिन कपासों में कच्चे और मरे हुअे रेशे अधिक होते हैं, अुनके सूत में अैसी गुठलियाँ ज्यादा पायी जाती हैं। कच्चे और मरे हुअे रेशे कच्ची कपास में और जिनकी वृद्धि पूर्ण रूप से नहीं हुअी, अैसे अपक्व बीज बिनौलों की सतह पर मुख्यतः रहते हैं। ओटने और धुनने के दोषों के कारण भी रुअी में गुठलियाँ पडती हैं।

(३) बरसाती यानें वह परिस्थिति, जब अुष्णतामान ९०° फ़. और सापेक्ष नमी करीब ७० प्रतिशत होती है।

बंबअी में अुपर्युक्त तीन तरह की आबोहवाअें पायी जाती हैं। लेकिन अुत्तरी प्रदेश में १००° फ़. से भी अधिक अुष्णतामान वाली तथा अुसके साथ ३० प्रतिशत से भी कम सापेक्ष नमीवाली अत्यंत सूखी आबोहवा पायी जाती है। अैसी अत्यंत सूखी आबोहवा में कताअी के प्रयोग नहीं किये गये हैं। लेकिन मध्यम सूखी आबोहवा की कताअी के बारे में जो कहा गया है, करीब करीब वही वैसी आबोहवा के लिये लागू होगा, अैसा कह सकते हैं।

अिन प्रयोगों के लिअे नीचे लिखे सात, अलग अलग किस्म के, कपास लिये गये :—

(१) धारवाड I (कुम्पटा) (२) गदग I (धारवाड अमेरिकन) (३) कंबोडिया २९५ (कं. I) (४) बंगाल १४ (नॉर्दर्न्स) (५) हगारी २५ (वेस्टर्न्स) (६) कारुंगन्नी और (७) मेम्फीस (अमेरिकन)

यह प्रत्येक कपास २०, ३० और ४० अिन तीनों नंबरों में तथा अूपर की तीनों परिस्थितियों में दो दफे काते गये व व नीचे लिखी बातें देखी गयीं :

१. काम करनेवालों की सुविधा।
२. कातने की क्रियाओं में आसानी।
३. सूत की मजबूती व अुसका बाहरी स्वरूप।

जांच की चर्चा

व्यावहारिक दृष्टि से जो बातें महत्त्वपूर्ण हैं, अुन्हींकी जांच की गयी।

काम करनेवालों की सुविधा—यह देखा गया कि काम करनेवालों को साधारण परिस्थिति में आराम मालूम हुआ और वैसी परिस्थिति में काम करना अुन्हें अधिक पसंद आया। सूखी व बरसाती परिस्थितियां अुन्हें अुतनी आरामदेह मालूम नहीं हुअीं।

कातने की क्रियाओं में आसानी

अिस बारे में यह देखा गया कि मध्यम सूखी परिस्थिति में धुनाओी में साधारण परिस्थिति की अपेक्षा कम छीजन हुओी तथा कपास सूखा व रेशेदार रहा। बरसाती परिस्थिति में धुनाओी में छीजन कुछ ज्यादा रही व कपास मुलायम व चमकदार रहा, लेकिन कपास में पत्ती, कचरा आदि ज्यादा प्रमाण में चिपका रहा।

अलग अलग परिस्थितियों में कपासों की जो छीजन रही, अुसके आंकडे अिस तरह हैं—

परिस्थिति	ब्लोरूम छीजन%	कार्ड रूम छीजन%	सापेक्ष नमी
१ मध्यम सूखी	६·९	५·८	४६
२ साधारण	६·७	६·६	६६
३ बरसाती	६·९	७·२	७२

अिस तालिका से दिखायी देगा कि अलग-अलग परिस्थितियों में ब्लोरूम छीजन में विशेष फर्क नहीं है, लेकिन कार्डरूम छीजन मध्यम सूखी परिस्थिति से साधारण परिस्थिति में अधिक है और बरसाती परिस्थिति में तो साधारण परिस्थिति से भी ज्यादा। यह भी ध्यान रखना चाहिये कि छीजन की यह अुत्तरोत्तर अधिकता हरअेक कपास में हुओी है। कपास की यह अधिक छीजन छोटे रेशे झड जाने के कारण हुओी है। मतलब यह है कि सूखी परिस्थिति में धुनाओी में रेशे कम झडते हैं, साधारण परिस्थिति में कुछ अधिक और बरसाती में सब से ज्यादा।

छः कपासों का २०,३० व ४० नंबर का सूत रिंगफ्रेम पर काता गया। अिस कताओी में अलग अलग परिस्थिति में सूत कितनी बार टूटा, यह नीचे की तालिका में दिखाया गया है।

प्रति घंटा, प्रति १०० तकुओं सूत का टूटना			
परिस्थिति	२० नं.	३० नं.	४० नं.
मध्यम सूखी	५	४	४
साधारण	५	४	५
बरसाती	५	४	४

अिस तालिका से मालूम होगा कि तीनों परिस्थितियों में सूत का टूटना अेकसा ही रहा है।

सूत का बाहरी स्वरूप— मध्यम सूखी परिस्थिति में काता हुआ सूत रोयेंदार और घुंघराला रहा। साधारण परिस्थिति में ये दोष अुतने नहीं रहे और बरसाती परिस्थिति में तो सूत बिलकुल चिकना रहा, अुसमें घुंघरालापन बिलकुल नहीं था।

समानता की दृष्टि से अलग अलग परिस्थितियों में काते हुअे सूत में विशेष फर्क नहीं रहा, यह नीचे की तालिका से दिखाअी देगा।

परिस्थिति	समानता श्रेणी		
	२० नं.	३० नं.	४० नं.
मध्यम सूखी	[illegible]	[illegible]	[illegible]
साधारण			
बरसाती			

अिस तालि[illegible]

बहुत फर्क पड़ा

कोअी फर्क नहीं हुआ है। अूपर की तालिका के आंकड़े सब कपासों के औसत हैं, लेकिन हरेक कपास के बारे में भी समानता का यही नतीजा रहा है। याने नंबर के कारण अुसमें फर्क हुआ है, लेकिन परिस्थिति के कारण नहीं।

सूत की मजबूती—अलग अलग परिस्थिति में काते हुअे सूत की मजबूती की तुलना करने पर दिखायी दिया कि अेक प्रयोग में मध्यम सूखी परिस्थिति में काता हुआ सूत, साधारण परिस्थिति से ज्यादा मजबूत रहा। १२ प्रयोगों में साधारण परिस्थिति में काता हुआ सूत, मध्यम सूखी परिस्थिति में काते हुअे सूत से ज्यादा मजबूत रहा, और ७ प्रयोगों में अिन दोनों परिस्थितियों के सूत में मजबूती की दृष्टि से कोअी विशेष फर्क नहीं दिखायी दिया। ५ प्रयोगों में बरसाती परिस्थिति में काता हुआ सूत साधारण परिस्थिति में काते हुअे सूत से ज्यादा मजबूत रहा। ८ प्रयोगों में साधारण परिस्थिति में काता हुआ सूत बरसाती परिस्थिति में काते हुअे सूत से ज्यादा मजबूत रहा और ८ प्रयोगों में अुनमें विशेष फर्क नहीं दिखायी दिया।

जो छः कपास २०, ३० और ४० नंबरों में काते गये अुनके अेकसूती कस के व कस व नंबर के गुणाकार के औसत आंकड़े नीचे की तालिका में दिये गये हैं—

	नंबर व मजबूती का गुणाकार			अेकसूती मजबूती		
परिस्थिति	२० नं.	३० नं.	४० नं.	२० नं.	३० नं.	४० नं.
मध्यम सूखी	१७८१	१५६३	१२९६	१२·३	७·६	५·४
साधारण	१८२७	१६१०	१३६९	१२·४	८·१	५·८
बरसाती	१८३५	१६०६	१३७१	१२·७	८·०	५·६

अूपर दिया हुआ प्रत्येक आंकडा लटी जांच के ६०० व अेकसूती जांच के १२०० प्रयोगों का औसत है। तीनों नंबरों का अेकसाथ विचार करने पर नीचे लिखे औसत आंकडे मिलते हैं—

परिस्थिति.	नंबर व मजबूती का गुणाकार	अेक सूती मजबूती (औंस)	सापेक्ष नमी प्रतिशत
मध्यम सूखी	१५४७	८·४	५८
साधारण	१६०२	८·८	६६
बरसाती	१६०४	८·८	६४

अिसमें मजबूती का प्रत्येक आंकडा लटीजांच के १८०० व अेकसूती जांच के ३६०० प्रयोगों का औसत है। अिन आंकडों से दिखायी देगा कि अलग अलग परिस्थितियों में काते गये सूत की मजबूती में विशेष फर्क नहीं है। साधारण और बरसाती परिस्थितियों में यह फर्क नगण्य-सा है। दोनों परिस्थितियों में काता हुआ सूत अेक-सा मजबूत है, लेकिन मध्यम सूखी परिस्थिति में काता हुआ सूत अुनसे कुछ कम मजबूत है। मजबूती का यह फर्क नंबर व मजबूती के गुणाकार में तीन से चार प्रतिशत और अेकसूती मजबूती में करीब पांच प्रतिशत है। मध्यम सूखी परिस्थिति में काते हुअे सूत से साधारण तथा बरसाती परिस्थिति में काता हुआ सूत मजबूती में थोडा श्रेष्ठ होने का कारण अंशतः यह है कि वह थोडी अधिक प्रतिशत नमी में काता गया है, जैसा कि अूपर की तालिका में दिखायी देगा, लेकिन यह ध्यान में लेने के बाद भी मजबूती का कुछ फर्क रह ही जाता है। अिस बचे हुअे फर्क का कारण यह हो सकता है कि साधारण व बरसाती परिस्थितियों में धुनाअी में छोटे तन्तु अधिक झड गये थे, अिसलिअे अुन परिस्थितियों का सूत अधिक

मजबूत काता गया होगा। अलग अलग परिस्थिति में काते गये सूत की मजबूतियों में अितना कम फर्क है कि व्यावहारिक दृष्टि से यह फर्क ध्यान में लेने जैसा नहीं मानना चाहिये। अिसलिअे सभी परिस्थितियों में काते हुअे सूत की मजबूती करीब अेकसी रहती है, अैसा हम मान सकते हैं।

बंबअी की आबोहवा— कताअी की दृष्टि से बंबअी की आबो-हवा कैसी है, अिसके भी प्रयोग किये गये। अिसके लिअे प्रतिदिन प्रतिघंटा अुष्णतामान व नमी क्या रही, अिसका साल-भर लेखा रखा गया। दिसंबर, जनवरी व फरवरी महीनों में, जो सब से सूखे होते हैं, कम-से-कम नमी कब रही, यह भी देखा गया। आबोहवा के अिन आंकडों की जांच करने पर तथा अलग अलग परिस्थिति में कताअी के जो नतीजे निकले, अुनको देखने पर यह दिखायी दिया कि बंबअी की आबोहवा कपास की कताअी की सभी क्रियाओं के लिये अधिक-से-अधिक अनुकूल है। लेकिन यह ध्यान में रखना चाहिये कि कताअी की क्रियाओं के लिअे जो आबोहवा अनुकूल है, वह अुसमें काम करनेवालों के लिअे भी अनुकूल होगी अैसा नहीं समझना चाहिये। यह देखा गया है कि बंबअी की अुष्ण और नमीदार हवा काम करनेवालों के लिअे विशेष अनुकूल नहीं है।

नतीजे

अिन प्रयोगों से नीचे लिखे नतीजे निकलते हैं——

(१) **सुविधा**——काम करनेवालों की सुविधा की दृष्टि से साधारण परिस्थिति यानि करीब ८० फॅ. (लेकिन अुससे कम नहीं) गरमी व करीब ६० प्रतिशत (लेकिन अुससे कम नहीं) सापेक्ष नमी ज्यादा अनुकूल है, मध्यम सूखी और बरसाती परिस्थिति अुतनी अनुकूल नहीं है।

(२) **कातने की क्रियाओं में आसानी**——कताअी की दृष्टि से देखा जाय तो सूखी परिस्थिति अनुपयुक्त है, क्यों कि अुसमें कपास रोयें-दार रहता है और कताअी में बीच बीच में कुछ तकलीफ देता है।

साधारण परिस्थिति में कताओी अच्छी होती है। बरसाती परिस्थिति धुनाओी में कुछ ज्यादा छीजन होती है, लेकिन अिसके अलावा दूसरी कोओी मुश्किली नहीं रहती।

(३) **सूत का बाहरी स्वरूप**—मध्यम सूखी परिस्थिति में कता हु सूत बहुत रोयेंदार व घुंघराला होता है, साधारण परिस्थिति में काता हु सूत अुससे कम रोयेंदार; कम घुंघराला रहता है। लेकिन बरसाती प स्थिति में काता हुआ सूत बहुत चिकना व घुंघरालेपन से बिलकुल मु होता है। सूत को भट्टी में तपाने पर (Conditioned) अलग अ परिस्थितियों में काते हुअे सूत का फर्क नष्ट हो जाता है।

(४) **मजबूती**—जिस अुष्णतामान व नमी की मर्यादा में ये प्रये किये गये, अुससे मध्यम सूखी, साधारण व बरसाती, अिन परिस्थिति में से किस परिस्थिति में ज्यादा मजबूत सूत काता जा सकता है, अि बारे में निश्चित सिद्धांत नहीं बताया जा सकता। सूत की मजबूती जो फर्क दिखायी दिया, वह ध्यान में लेने लायक नहीं था। फिर भ अैसा मालूम पडता है कि मध्यम सूखी परिस्थिति में काता हुआ सूत म बूती में कुछ कम निकलता है।

विशेष—सापेक्ष नमी ४० प्रतिशत यानी बहुत कम रख कर सू कातने पर भी कताओी की क्रियाओं में कोओी विशेष मुश्किली नहीं रही सूत की अच्छाओी में भी कोओी विशेष फर्क नहीं पडा। लेकिन स बातें ध्यान में लेने पर कताओी के लिये साधारण परिस्थिति ही सब से अच्छ मालूम पडती है।

(६) **बंबओी की आबोहवा**—कताओी की क्रियाओं के लिअे बंबअ की आबोहवा व्यावहारिक दृष्टि से आदर्श है।

कपास में 'कोल्चिसीन' का प्रयोग

'कोल्चिसीन' अेक अप्रसिद्ध औषधि द्रव्य है। अुसके गुणधर्म भी अभी तक विशेष स्पष्ट नहीं हैं। फलों का आकार बढाने तथा अुन्हें ज्यादा दिन टिकनेवाले बनाने के लिये कोल्चिसीन का सफल प्रयोग हो सका है। अुसके प्रयोग से कपास की फसल में किस तरह तरक्की और सुधार हो सकते हैं अिस बारे में यहां हम कुछ बातें देते हैं। अिस औषधि द्रव्य का पैधे के जीवन पर क्या असर हो सकता है यह बताने के पहले यह जान लेना आवश्यक है कि पौधे किस तरह बढ़ते हैं, और अुनकी वंशवृद्धि किस तरह होती है।

कोषाणु (cell) की अद्भुत कथा

सब कोअी यह जानते हैं कि सब चेतन पदार्थ, वनस्पति और प्राणी अेक तरह की लघुतम अिकाअियों से, जिन्हें कोषाणु कहते हैं, बने हैं। ये कोषाणु बढते समय दो दो में विभक्त होते हैं यानी अेक से दो, दो से चार अिस तरह स्थायी गुणाकार से अुनकी वृद्धि होती है। हरअेक कोषाणु में अत्यन्त लघु, सिर्फ अणुवीक्षण यंत्र से ही देखे जानेवाले, रेशे जैसे परम तन्तुकों, जिसे क्रोमोसोम कहते हैं, की अेक निश्चित संख्या होती है। कोषाणु जब दो टुकडे हो जाता है, अुस वक्त अुसमें रहनेवाले परम तंतुक भी दो दो में विभक्त हो जाते हैं और कोषाणु के दो टुकड़ों में बराबर बँट जाते हैं। हिन्दुस्तान की देशी कपासों के कोषाणु में २६ परम तन्तुक होते हैं। जब कपास का कोषाणु दो टुकडे हो जाता है, अुस वक्त ये २६ परम तन्तुक दो टुकडों में विभक्त होते हैं, यानी ५२ हो जाते हैं, तथा कोषाणु के प्रत्येक टुकडे में २६-२६ बँट जाते हैं। अिस तरह प्रकृति चेतन पदार्थों के कोषाणुओं में परम तंतुकों का प्रकार और संख्या कायम रखती है। चेतन पदार्थों के प्रजोत्पादक कोषाणुओं (germ cells) में अुनके अुद्भिज्ज (vegetative) कोषाणुओं से आधे ही परम तंतुक रहते हैं। नया चेतन पदार्थ पैदा करने के लिये

प्रजोत्पादक कोषाणुओं में परम तंतुकों की जो कमी है अुसे नर-नारी जातीय कोषाणु पूरा करते हैं और अिस तरह नवजात चेतन पदार्थ को परम तंतुकों की पूरी संख्या प्राप्त होती है। पौधों और प्राणियों की अलग अलग जातियों में अलग अलग प्रकार के परम तंतुक होते हैं, लेकिन अुन हरअेक जाति की अपनी अपनी परम तंतुक संख्या निश्चित होती है। यह संख्या साधारण तौर पर स्थिर होती है, अुसमें बदल नहीं होता। जैसे—मनुष्य शरीर के कोषाणुओं में ४८, और हिन्दुस्तान की देशी कपासों में २६ परम तंतुक (क्रोमोसोम) होते हैं।

लेकिन प्रकृति में कभी कभी अैसी घटना भी होती है कि परम तंतुकों के तो दो भाग हो जाते हैं किन्तु अुसके साथ कोषाणु के दो भाग नहीं होते। परिणामस्वरूप कोषाणु में जितने परमतंतुक होने चाहिये अुससे वे दुगुने हो जाते हैं। ये कोषाणु कुदरती तौर पर जब दो भाग हो जाते हैं तब अुनके दोनों नये कोषाणुओं में परम तंतुकों की दुगुनी संख्या हो जाती है। अिस तरह दुगुने परम तंतुकवाली अेक नयी ही जाति का पौधा तैयार होता है। हरअेक जाति के परम तंतुक अपनी अपनी जातियों की आनुवंशिक अिकाअियों को, जिन्हें प्रजनक अणु (genes) कहते हैं, धारण करते हैं। माला में जिस तरह मणि पिरोये रहते हैं अुसी तरह परम तंतुकों में ये प्रजनक अणु लगे रहते हैं। ये ही आनुवंशिकता के परमाणु (atoms) हैं और पौधों में आकार, रंग, रेशों की मोटाअी, लंबाअी, पत्ते आदि को नियंत्रित करने का काम करते हैं। अिस तरह कभी कभी परम तंतुक दुगुने हो जाने के कारण अुसमें प्रजनक अणु भी दुगुने हो जाते हैं और नतीजा यह होता है कि अुससे पौधों के सभी अंगों में असाधारण विशालता आ जाती है और बृहत्काय पौधे तैयार होते हैं। अेक *वर्ग की भिन्न भिन्न जातियों में पायी जानेवाली परम तंतुकों की संख्या मूलभूत* अेक पूर्ण संख्या से दुगुनी, तीन गुनी, चार गुनी आदि तौर पर चढ़ती है। जातियों का विकास करने में अिस तरह परम तंतुकों को गुणित करना प्रकृति का अेक नियम है।

कोल्चिसीन का कार्य

कोल्चिसीन के प्रयोग से परम तन्तुकों को गुणित करने का काम कृत्रिम तौर पर किया जाता है। अल्प परिमाण में अिसका अुपयोग किया जाय तो अिससे कोषाणु मारे नहीं जाते। कोल्चिसीन से परम तन्तुक के दो भाग हो जाते हैं, लेकिन कोषाणु दो भाग नहीं होता। अिस तरह मूल कोषाणु में परम तन्तुक दुगुने बने रहते हैं। कोल्चिसीन का असर समाप्त होने पर कोषाणुओं का दो भाग में विभक्त होने का प्राकृतिक क्रम शुरू होता है और अुन नये कोषाणुओं में परम तन्तुकों की दुगुनी संख्या हो जाती है। कभी कभी कोल्चिसीन अपना कार्य बहुत समय तक करता रहता है। अुस वक्त परम तन्तुकों में दुगुनी से भी ज्यादा याने तिगुनी, चौगुनी तक वृद्धि हो जाती हैं। शुरू में परम तन्तुकों की वृद्धि के लिये अुष्ण व शीत चिकित्सा, क्ष-किरण, बेहोशी आदि अुपाय किये जाते थे, लेकिन कोल्चिसीन अुनसे बहुत प्रभावशाली साबित हुआ है। कोल्चिसीन 'कोल्चिकम ऑटम्नेल' नामक पौधे की जड़ों और दानों से निकाला हुआ क्षार द्रव्य है। यह अेक तेज जहर है और गठिया आदि रोगों के अिलाज के लिये हल्की मात्रा में अिसे काम में लाया जाता है। 'सुरंजन तल्ख' नामक देशी दवा में यह क्षार-द्रव्य पाया जाता है। परम तन्तुकों की द्विगुणित वृद्धि करने के लिअे प्रभावी साधन खोजते खोजते वैज्ञानिकों को आकस्मिक तौर पर कोल्चिसीन हाथ लगा है। कोल्चिसीन के बिलकुल हल्के पानी में, बोने से पहले बीजों को भिगोते हैं, अंकुरित बीजों को अुससे धोते हैं और पौधों की नअी फूट पर अुसे छिड़कते हैं। अिससे परम तन्तुक द्विगुणित होकर पौधों के पिण्ड, पत्ते तथा फूल असाधारण तौर पर बड़े होते हैं। कपास में देखा गया है कि अिससे रेशे की लंबाअी बढ़ जाती है, कभी कभी रेशों की मोटाअी भी बढ़ी हुअी दिखाअी देती है और बिनौलों के आकार में भी वृद्धि होती है।

फूलों की पैदावार करनेवालों ने कोल्चिसीन का व्यावहारिक अुपयोग कर साधारण फूलों से बहुत बड़े बृहत्‌कार्य फूल पैदा किये हैं। सरकारी

कृषि विभाग भी अच्छी आर्थिक फसलें निर्माण करने में अिस क्षार-द्रव्य को किस तरह काम में लाया जा सकता है, अिस बारे में प्रयोग कर रहे हैं। कोल्चिसीन के द्वारा अेक बार परिवर्तन हो जाने पर पौधे पुनः अपनी पूर्व स्थिति पर नहीं आते, अिस तरह हमेशा के लिये अेक नअी जाति तैयार होती है। बहुत महत्व की बात है कि अिस तरह पौधों में स्थायी नअी जातियां तैयार की जा सकती हैं।

दो नस्लवाले बाँझ पौधे कोल्चिसीन से फलीभूत होते हैं

संसार के कपासों के दो वर्ग किअे गअे हैं। अेक के अुद्भिज्ज कोषाणु में २६ परम तन्तुक होते हैं और दूसरे के ५२। अेशिया के सारे कपास पहले वर्ग में आते हैं और अमेरिका के सुधोर हुअे कपास दूसरे वर्ग में समाविष्ट होते हैं। अमेरिकन कपासों से अेशिया के कपास रेशों की दृष्टि से घटिया दर्जे के होते हैं। लेकिन अमेरिकन कपास हिन्दुस्तान की जलवायु में अच्छी तरह नहीं बढ़ते अिसलिये कपास की अुपज करनेवालों की यह कोशिश हमेशा रही है कि हो सके तो दोनों वर्ग की अच्छी जातियों को मिलाकर नये कपास तैयार किये जायँ।

अिन दो वर्ग के कपासों से दो-नस्ली जातियाँ पैदा करना बहुत मुश्किल है, और जो पैदा की जाती हैं वे बाँझ निकलती हैं। मूल अमेरिकन जातियों से अुनका पुनःसंकर (cross) करने से कभी कभी कुछ बीज अुपजाअू बनते हैं। लेकिन कोल्चिसीन का प्रयोग करने से अिन बाँझ संकर जातियों को अुनके परम तन्तुक द्विगुणित हो जाने के कारण, अुपजाअू बनाया जा सकता है। लेकिन देखा गया है कि अिससे डोडों में बीजों की संख्या कम होती है। खालिस जातियों में तथा अेक वर्ग की संकर जातियों में परम तन्तुओं की संख्या द्विगुणित की जा सकती है। परम तन्तुओं को द्विगुणित बनाने के बाद खालिस जातियाँ बाँझ हो जाती हैं। बाँझ संकरों में मूल जातियों के जो परम तन्तुक रहते हैं, अुनमें काफी भिन्नता रहती। अिन संकरों में परम तन्तुकों को द्विगुणित करने

से अुनके अुपजाअू बनने की ज्यादा संभावना है। द्विगुणित बनाये हुये अेशियाटिक कपास अमेरिकन कपासों से अच्छी तरह संकर होते हैं, क्योंकि अमेरिकन कपासों में दुगुने परम तन्तुक पहले से विद्यमान होते हैं। अिस तरह कपास की फसल के सुधार का अेक बिलकुल नया क्षेत्र कोल्चिसीन के प्रयोग से खुल जाता है।

नअी किस्मों का निर्माण

अलग अलग तरह के जंगली कपासों से अिस तरह नअी किस्में बनाने का काम लिया जा रहा है। आफ्रीका की जंगली किस्मों और अमेरिका की जंगली किस्मों से, जिन प्रत्येक में अुद्भिज्ज परम तन्तुक २६–२६ हैं, नये कपास तैयार किये गये हैं। ये कपास पूर्णतः बांझ निकले। मूल जातियों में बहुत भिन्नता होने के कारण अुनके परम तन्तुक अलग अलग तरह के थे अिसलिये अुनसे बनी अिन संकर जातियों में ये भिन्नपैतृक (of two parents) परम तन्तुक अेक दूसरे से प्रजनन के लिये संयुक्त नहीं होते थे। दो भिन्नपैतृक परम तन्तुकों का प्रजनन के लिये संयुक्त होना, अुससे बनी संकर जाति बांझ न हो अिसके लिये आवश्यक है। अिस तरह के संयोग के अभाव के कारण ही संकर जातियां बांझ होती हैं। कोल्चिसीन के प्रयोग से प्रत्येक परम तन्तुक द्विगुणित होता है, और अिस तरह संकर जाति में पहले संयुक्त न होनेवाले परम तन्तुकों को संयुक्त होने के लिये अपनी जाति के जोडीदार मिल जाते हैं। अिसके परिणामस्वरूप सब परम तन्तुकों में संगति निर्माण होकर वे परस्पर संयुक्त होते हैं और अिस तरह अुस जाति को अुपजाअू बनाते हैं। अिस प्रकार संकर जाति से पैदा हुअी यह पहली संतान जाति अच्छी तरह बहुप्रसू होकर दो पुरानी जातियों से दुगुने परम तन्तुक वाली अेक नअी जाति निर्माण होती है।

अंत में यहां पर अिस बात का अुल्लेख करना ठीक होगा कि अमेरिकन कपासों के बारे में अैसा अेक अनुमान किया जाता था कि अेक दूसरे से भिन्न लेकिन २६ ही परम तन्तुक वाली अेक अमेरिकन और

अेक अेशियाटिक जिस तरह की दो जंगली जातियों से बने संकरों में पर तन्तुकों का आकस्मिक किन्तु नैसर्गिक द्विगुणीकरण होकर आज के अमेरिकन कपास बने होंगे। असल में अमेरिकन कपासों से संश्लेषणात्मक अेक जाति पैदा की भी गयी है जो मूल जातियों से अच्छी तरह संकर होती है।

रशिया में खुदरंगी कपास

कपास का कुदरती रंग सफेद है। अुसे रंगने के लिये वनस्पतिज, खनिज तथा रासायनिक द्रव्यों से काम लेना पडता है, तभी हम अलग अलग रंगों के तरह-तरह के कपडे बना सकते हैं। फूल जिस तरह अनेक रंग के पैदा होते हैं, अुस तरह अगर कपास में भी कुदरती तौर पर भिन्न-भिन्न रंग आ जायँ तो फिर सूत या कपडा रंगाने की आवश्यकता नहीं रहेगी। बिहार में कोकटी कपास में कुदरती रंग होता है, लेकिन वह धूप तथा हवा से फीका पड जाता है। कोकटी के समान कपास में रंग की हलकी छटाअें कहीं-कहीं पायी जाती हैं। लेकिन ये पक्की न होने के कारण बाजार में अैसे कपासों को घटिया दर्जे के दाम दिये जाते हैं। क्यों कि अैसे मटमैले रंगवाले कपासों को रंगना मुश्किल होता है और अुनका कुदरती रंग अेक तो पक्का नहीं होता, और दूसरे अच्छा भी नहीं दीखता। कपास जितना सफेद हो, अुतना ही वह ज्यादा पसंद किया जाता है।

अब रशिया ने कपासों पर प्रयोग कर कपासों की खुदरंगी जातियां पैदा की हैं, जिनके रेशों में कुदरती तौर पर तरह तरह के रंग होते हैं। अब तक रशिया में हलके और गाढे नीले, हरे, नारंगी, काले तथा भूरे रंग की किस्में पैदा की गयी हैं, और रूसी तुर्किस्तान में बडे पैमाने पर

अिनकी खेती की जा रही है। हरे रंग की जितनी भी छटाअें हैं, अुनकी सारी किस्में रशियन वैज्ञानिक तैयार कर चुके हैं। अिसके बाद दूसरे दूसरे रंग और अुनकी छटाओं पर वे अपने प्रयोग करनेवाले हैं। अुनका दावा है कि वे थोडे ही दिनों में सब रंगों व छटाओं की किस्में तैयार कर लेंगे।

अिन कपासों के रंगों पर प्रयोगालयों में अनेक प्रयोग किये गये हैं। अुससे निश्चित तौर पर साबित हो गया है कि ये रंग बिलकुल पक्के हैं। यह भी देखा गया है कि साबुन तथा पानी आदि से धोने से फीके पडने के बदले वे ज्यादा उजले और चमकदार होते जाते हैं। भूरे रंग का कपास धूप से कुछ फीका पड जाता है लेकिन वैज्ञानिकों ने अिसका भी हल निकाल लिया है। तांबा व क्रोमियम नमक से अुसका रंग पक्का हो जाता है। खुदरंगी कपासों के रंग फीके पडने न पावें तथा वे पक्के बने रहें अिस दृष्टि से अुनपर की जानेवाली ओटाअी से लेकर धुलाअी तक की सारी क्रियायों के कुछ खास तरीके वैज्ञानिकों ने खोज निकाले हैं। अुनके अनुसार नअी मिलों का निर्माण रशिया में किया जा रहा है। खुदरंगी कपासों की खेती खास कर रूसी तुर्किस्तान में बडे पैमाने पर करने की योजना बनायी गयी है। बाद में अन्यत्र भी अुसका विस्तार करने का सोचा जा रहा है।

बट का सूत के अूपर होनेवाला परिणाम

बट और मजबूती का संबंध

कातना याने अलग अलग रहनेवाले रेशों को अिस तरह बट देना कि जिससे वे अेक दूसरे के साथ बंधे रहें। बट के कारण सूत में सामूहिक सर्पिलाकार घर्षण (coil friction) और रेशों में परस्पर व्यक्तिगत घर्षण निर्माण होता है। सूत के गुण-धर्म परस्पर संबद्ध होते हैं और वे बट के प्रकार और परिमाण पर अधिकतर निर्भर करते हैं। अुदाहरणार्थ यह देखा गया है कि सूत का व्यास तीन बातों पर अवलंबित होता है— १. बट का कडापन, २. रेशों का आकुंचन, ३. सूत में रेशों की संख्या की समानता का अंतर। आखरी दो बातें बट के साथ सीधा संबंध रखती हैं। रेशों की संख्या की समानता के अंतर पर बट की समानता भी निर्भर करती है, क्योंकि सूत जहां बारीक हो वहां मोटे हिस्से की अपेक्षा बट जल्दी और अधिक पहुंचता है।

आम तौर पर यह माना जाता है कि सूत की मजबूती मुख्यतः बट पर अवलंबित होती है। कुछ लोग मानते हैं कि रेशों की लंबाअी पर सूत की मजबूती निर्भर करती है। लेकिन बॉल्स का कहना है कि प्रति युनिट लंबाअी में रेशों का वजन याने महीनता पर ही कपास की कताअी की योग्यता अवलंबित है। वह कहता है, रेशों की लंबाअी की अपेक्षा अुनका वजन कताअी-बुनाअी की दृष्टि से बहुत ज्यादा महत्त्व रखता है। मि. अंडरवुड का कहना है कि रेशों की लंबाअी का महत्त्व कताअी की योग्यता की दृष्टि से तीसरे नंबर का है, रेशों की महीनता का पहले नंबर का और सूत के नॉर्मल रेशों के प्रतिशत का दूसरे नंबर का है। रेशों की लंबाअी से बट का सब से अधिक संबंध नहीं है। वास्तव में रेशे जब अेक साथ बट जाते हैं तब अुनके नैसर्गिक बट और सतह पर होनेवाले रंध्रों के कारण वे परस्पर जकडे रहते हैं। अिससे रेशों का अेक संगठित

दल तैयार होता है जिसके कारण सूत के किसी भी स्थान पर आघात लगे तो वह सारे रेशों में पहुंचता है।

बट की नियतराशि

बट और मजबूती में संबंध है, लेकिन अुसे मर्यादा है। बट के अनुसार सूत की मजबूती अमुक अेक पकड-कोण तक ही बढती है। अुससे अधिक बट देने पर रेशों की पकड कम होती है और अुससे सूत कमजोर बनता है। सूत की सामूहिक मजबूती और रेशों की व्यक्तिगत मजबूती के संबंध में यह कहा जाता है कि जिस सूत में समान संख्या में रेशें हों अैसे आदर्श सूत की मजबूती अुसमें बटे रेशों की व्यक्तिगत मजबूती से १६० गुना होती है। आम तौर पर अच्छे सूत में अिस कुल मजबूती में से केवल ७० प्रतिशत मजबूती कायम रहती है, शेष मजबूती (प्रत्यक्ष टूटे हुअे रेशों को छोडकर) रेशों की परस्पर फिसलनं द्वारा नष्ट होती है। यह फिसलन बट की और रेशों की परस्पर पकड और खिंचाव पर निर्भर करती है। रेशों को अेक दूसरे से अलग खींच लेने पर वे जो प्रतिकार करते हैं अुसे खिंचाव (drag) कहते हैं। अिस खिंचाव द्वारा रेशे परस्पर पकड के लिये प्रवृत्त होते हैं। बट की पकड के कारण यह खिंचाव बहुत बढ जाता है।

अधिक से अधिक मजबूती के लिये अंक के अनुसार सूत में बट देना पडता है। किस अंक के सूत में प्रति अिंच कितना बट देना चाहिये अिसे बताने वाले आंकडों को बट की नियतराशि कहते हैं। अेक ही राशि प्रत्येक कपास को लागू नहीं होती है। वह प्रत्येक कपास के लिये अलग अलग होती है। अंक के वर्गमूल का अिष्ट बट के साथ जो अनुपात होता है वही नियतराशि है। अिसका सूत्र अिस तरह है—

$$\text{प्रति अिंच बट} = \text{ब}\sqrt{\text{क}}$$

ब = बट की नियतराशि

क = सूत का अंक

यह सूत्र अिस कल्पना पर आधारित है कि सूत में अूपरी सतह के रेशे सार्पिलाकार बटे जाते हैं और भिन्न भिन्न अंकों के (अेक ही जाति के कपास के) दो धागों की घनता अेकसी रहती है। वास्तव में रेशों की लंबाअी, डोडे-डोडे में और पौधे पौधे में कम-ज्यादा होती है। रेशों की मोटाअी या व्यास में भी जड के पास और सिरे के पास फर्क होता है। रेशों के पिंड में भी (Mass) सिरे से जड तक और रेशे रेशे में फर्क होता है। अैसी परिस्थिति में अूपर की कल्पना सही नहीं हो सकती। बट और अंक का सही संबंध जानने के लिये यह मालूम होना चाहिये कि रेशों का कुदरती बट सूत में रेशों की परस्पर पकड की दृष्टि से कहां तक महत्व रखता है। फिर भी व्यावहारिक दृष्टि से अूपर का सूत्र ठीक काम दे सकता है।

बट की समानता

हम जानते हैं कि बट सूत के बारीक हिस्से में अधिक पहुंचता है और मोटे हिस्सों को यहां वहां बिना बटे छोड देता है। 'म्यूल' कताअी में, अुसी तरह हाथ कताअी में धागा खींच कर काता जाने के कारण सूत के मोटे हिस्सों को पतला बनने का मौका मिलता है। अुस से सूत में सब जगह बट का अेकसा वितरण हो सकता है। सूत का स्पर्श, दिखावा, चमक, बुनाअी की योग्यता तथा कपडे का पोत और सतह पर भी बट के कम-ज्यादा पन का असर होता है। अगर बट ज्यादा दिया जाय तो अुसके अनुसार सूत का मुलायमपन कम होगा और तैयार कपडे की अूपरी सतह का मुलायम स्पर्श और दिखावा भी अुतना अच्छा नहीं रहेगा। नली भरना, ताना करना, पाअी करना, बुनना आदि क्रियाओं में ताने के सूत को जो झटके और खिचाव सहना पडता है अुसके लिये सूत में स्थिति-स्थापकता और मजबूती की आवश्यकता है, जो बट देने से आ सकती है। कपडा स्पर्श में मुलायम बने अिसके लिये बाने का सूत नरम रखा जाता है और अुसमें कुछ कम बट दिया जाता है। बाने के सूत को ताने के सूत जितना अधिक खिचाव सहना नहीं पडता, केवल नरम

रते वक्त और बुनते वक्त अुसे साधारण झटके और खिंचाव सहना पडता है। अिसलिये अुसकी मजबूती कुछ कम हो तो चल सकती है। लेकिन कपडा अूपर से सुंदर दिखे अिसके लिये बाने का सूत ताने के सूत से भी अधिक समान बटवाला होना आवश्यक है।

बट की असमानता के कारण

सूत के कमजोर स्थानों के कारण बट में फर्क पडता है और अुसके फलस्वरूप कपडे का दिखावा भी बिगडता है। ताने में कमजोर स्थान हों तो सूत टूटता रहेगा और अुससे अुत्पादन अेकदम घट जायगा। अिसलिये बट की असमानता को टालना बहुत जरूरी है। चरखा कताओी में निम्न कारणों से बट में फर्क पडता है:—

(१) कातने के काम में आनेवाले तकुवों की घिरी का व्यास अेकसा न होना। माल की रगड से घिरी कम-ज्यादा घिस जाती है और अुससे घिरियों के व्यास में फर्क पडता है। घिरियों के व्यास में मूल में भी फर्क रहता है। नये तकुवे और पुराने तकुओं के व्यास में माल की रगड के कारण फर्क पड जाता है। घिरियों के व्यास के फर्क से बचना हो तो कातने के लिये अेक ही तकुवा रखना चाहिये।

(२) माल का खिंचाव कम-ज्यादा होने से याने वह ढीली या तंग होने से वह घिरी पर फिसलती है और सूत में कम-ज्यादा बट चढता है। अिसके लिये छोटी और बडी दोनों मालाएं अेकसी तंग रहें अिस ओर हमेशा ध्यान देना चाहिये। नअी माल लगाने पर वह खिंच कर जल्दी ढीली होती है। अिसके लिये पहले पूरी तान कर माल लगाना ठीक होगा।

(३) धागा अेक सा लंबा न खींचा जाय या मूलचक्र में अेक से फेरे न दिये जायं तो बट में फर्क पडेगा।

(४) पूनी कडी या नरम रहने, धागा समान मोटा पतला न खींचने से भी सूत के बट में फर्क पडता है।

परेते पर सूत अुतारते समय बट में रहा हुआ फर्क कुछ कम हो जाता है, लेकिन अधिकतर फर्क वैसा ही कायम रहता है। बट के फर्क के कारण सूत की मजबूती और कपडे का पोत बिगडता है।

फॅन्सी सूत में बट

ताने और बाने के सूत के अलावा दूसरे किस्म के सूतों में क्रियाओं और कपडों के अनुसार बट दिया जाता है। होजियरी के सूत नरम बट वाले और रोयेंदार रखे जाते हैं, यह अिसलिये कि शरीर को गरम रखने के लिये वे अपने अंदर हवा को समा सकें, पसीने को सोख सकें और स्पर्श में मुलायम हों। 'मर्सराअीज' सूत में भी बट कम रखा जाता है। मर्सराअीज की क्रिया में सूत सुकड जाता है। यह आकुंचन सामान्यतः २० प्रतिशत होता है। आकुंचन के कारण सूत का बट भी लगातार नजदीक आता जाता है, जिसके लिये सूत में कम बट रखना जरूरी होता है। गॅस द्वारा सूत के रोअें जला कर अुसे गोल बनाने से वह बारीक हो जाता है, अिसलिये अुसमें अधिक बट देने की आवश्यकता रहती है। वायल के सूत के लिये घने बट के सूत की आवश्यकता होती है। गॅस द्वारा अुसे गोल बनाना जरूरी होता है। सामान्यतया वायल का सूत दुबटा रखा जाता है। अुसका दूसरा बट मूल सूत के बट की दिशा में ही रखा जाता है। अिस बट के कारण वायल सूत में अपने नजदीक के धागों से अेक तरह अुछल कर अलग रहने की प्रवृत्ति होती है। क्रेप सूत कडे बट के होते हैं। क्रेप में बट की नियतराशि ६ से १० तक रखी जाती है। लेकिन ५॥ नियतराशि के बाद सूत की मजबूती क्रमशः कम होती जाती है।

दुबटे में बट की दिशा और परिमाण

दो या अधिक धागों को सीधा या अुल्टा बट देकर दुबटा बनाने का अुद्देश यह होता है, कि वह अधिक मजबूत तथा अधिक समान बने या अुससे फॅन्सी परिणाम निकले। सामान्यतया दुबटे सूत में मूल सूत की

विरुद्ध दिशा में बट दिया जाता है। कुछ बट दिया जाने के बाद दुबटे के अेकहरे धागे अेक घने पिंड में परिवर्तित होते हैं। तब किसी भी दिशा में अुनके बट का झुकाव नहीं होता। तब बट समतोल हो गया अैसा कहा जाता है। अैसा माना जाता है कि विरुद्ध दिशा में दिया गया प्रत्येक बट मूल सूत में से अेक बट निकाल देता है। यानें दो अेकसूती धागों में प्रतिअिंच २० बट हो तो अुसे समतोल बनाने के लिये अुसके दुबटे धागे में प्रति अिंच १० बट देना काफी होगा। लेकिन सामान्यतः दुबटे में अेकसूती बट से भी अधिक बट दिया जाता है।

संतुलन सूत का बहुत महत्त्व का गुण है। सीने और काढने के सूत में वह विशेष आवश्यक होता है। गीली अवस्था में सूत में बट दिया जाय तो रेशे अधिक नरम तथा लचकदार हो जाते हैं और अधिक मजबूती से परस्पर को पकडते हैं। अिस कारण दुबटा सूत अधिक ठोस और गोल बनता है। अगर दुबटे के अवयवी धागे अेक से तंग न रखे जायं, अेक ढीला और दूसरा तंग रखा जाय, तो तंग धागेपर ढीला सर्पिलाकार लपटेगा और दुबटा सूत चूडीदार बनेगा। अैसे चूडीदार सूत में ठोसपन न होने के कारण तथा अुसका सर्पिलाकार घर्षण अधिक होने के कारण वह कमजोर बनता है। अगर अवयवी धागे अलग अलग कोण से सूत के केन्द्र में बटे जायँ तो भी दुबटा सूत चूडीदार (Corkscrew) बनेगा। अैसा कहा जाता है कि बटे सूत में धागों की जो संख्या होगी अुसके अूपर सूत का चूडीदारपन निर्भर करता है। अगर ६ धागों का बटा सूत हो तो अुनके केन्द्र में कोअी अेक धागा ढकेला जाता है और अुसके अूपर बाकी धागे लपेटे जाते हैं। अिसी कारण से रस्से और रस्सियों को अधिक से अधिक मजबूत बनाना हो तो अुनमें ३, ५, ११, आदि विषम संख्या में धागे बटे जाते हैं; ४, ६, जैसे सम संख्या में नहीं।

बट और प्रकाश का परावर्तन

अिसके अलावा प्रकाश के परावर्तन पर भी बट का असर होता है। सीधे बट का सूत अुलटे बट के सूत की विरुद्ध दिशा में प्रकाश को

फेंकता है। अिस गुण को ट्विल आदि कपड़ों में फेन्सी परिणाम लाने के लिये अुपयोग किया जाता है। अुसमें बट की दिशा में ट्विल की दिशा रखी जाती है। सीधे बट का ताना और अुलटे बट का बाना रखने से कपड़ा ठोस और गफ बनता है। कम-ज्यादा बट के अूपर सूत की स्थितिस्थापकता, कताअी की योग्यता और मुलायमपन अवलंबित रहता है। अिसी तरह कपड़े के आकुंचन, पोत और दर्शन पर भी बट का असर होता है। जैसे जैसे बट बढ़ता जाता है वैसे वैसे सूत का पोलापन कम होने से माड़ी सोखने का अुसका गुण भी कम होता है।

अगर ढीला और नरम बट का सूत कपड़े में अिस्तेमाल किया जाय तो अुसके अन्दर हवा संचित रह सकती है, जिसकी वजह से शरीर को वह अधिक गरम रख सकता है तथा माड़ी और रंग को आसानी से आत्मसात् कर सकता है। सामान्यतः आम सूत में शास्त्रोक्त बट दिया जाय तो मुलायमपन, सघनता, सोखने का गुण, अुष्णता देने का गुण आदि सभी गुणों को छोड़ना पड़ेगा अिस लिये सूत की केवल मजबूती ही देखना व्यावहारिक नहीं है।

कपड़ा और तापमान

कमरे का तापमान और पोशाक

दुनिया के सभी देशों में पुरुषों का और स्त्रियों का पोशाक अलग अलग होता है। यही कारण है कि घरों और कार्यालयों में कमरों का तापमान क्या रखा जाय अिस संबंध में स्त्री-पुरुषों में हमेशा मतभेद हो जाता है। जिस तापमान में स्त्रियों को अच्छा मालूम पड़ता है, उसमें पुरुष बेचैनी महसूस करते हैं, और जिस तापमान में पुरुषों को आराम से गरमी मालूम पड़ती है अुसी में स्त्रियां ठंड से कांपने लगती हैं।

अिस संबंध में जो प्रयोग हुअे अुनसे पाया गया है कि स्त्री-पुरुषों की शारीरिक बनावट में अैसा कोअी फर्क नहीं है कि जिससे तापमान के बारे में अुनको अलग अलग अनुभव हो। अुनके पोशाक के फर्क के कारण ही अुन्हें यह अलग अलग अनुभव होता है। देखा गया है कि ७१.५ फॅ. तापमानवाले कमरे में अधिकतर पुरुषों को आराम माळूम पडा, लेकिन स्त्रियों को अुसमें ठंड का अनुभव हुआ। स्त्रियों को आरामदेह होने के लिये अुस कमरे का तापमान ७६° फॅ. तक बढाना पडा, लेकिन तब पुरुष शिकायत करने लगे।

स्त्री-पुरुषों का पोशाक अेकसा रखा गया तब यह बात नहीं हुअी। तब अुसी तापमानवाले कमरे में पुरुषों और स्त्रियों को अेकसा आराम माळूम पडा। प्रो. याग्लोअू ने प्रयोग के लिये पुरुषों को स्त्रियों का और स्त्रियों को पुरुषों का पोशाक दिया। तब देखा गया कि कमरे के तापमान के संबंध में अुनकी शिकायतें अुलट गयीं। अिन प्रयोगों से यह साबित होता है कि स्त्री-पुरुषों के और व्यक्ति व्यक्ति के बीच अनुकूल तापमान के बारे में जो अलग अलग अनुभव होता है अुसका मुख्य कारण पोशाक का फर्क ही है। स्त्री-पुरुषों की या व्यक्ति-व्यक्ति की शारीरिक बनावट अुसका कारण नहीं होता। पोशाक में योग्य फर्क करने से यह भिन्नता दूर की जा सकती है।

अगर जाडे के दिनों में स्त्रियां पुरुषों के जैसे गरम कपडे पहनें तो ७०° फॅ. तापमान में अुन्हें आराम का अनुभव होगा, अुसके लिये आज के समान कमरे का तापमान ७६° फॅ. रखने की जरूरत नहीं रहेगी। साथ ही कमरों का तापमान स्त्री-पुरुषों के लिये अेकसा रखा जा सकेगा। डॉक्टरों का कहना है कि गरमी के दिनों में पुरुष अपने वासकेट, कोट, तथा कॉलर निकाल डालें तो कमरों को ८५° फॅ. से अधिक ठंडा करने की जरूरत नहीं रहेगी। आज अुसके लिये ८०° फॅ. तक कमरे ठंडे रखने पडते हैं।

शरीर और कपडों के बीच का तापमान

शरीर के अंदर प्रतिक्षण रासायनिक परिवर्तन (Metabolism) होता रहता है। अुससे जो अुष्णता पैदा होती है अुसे शरीर बाहर फेंकता रहता है। शरीर से यह अुष्णता कपडों में पहुंचती है, और कपडों से हवा अुसे अुडा ले जाती है। शरीर के अिस अुष्णता-निःसरण को नियंत्रित करने का काम पशु-पक्षियों के बाल और पर करते हैं। लेकिन मनुष्य-शरीर को अुसके लिये कपडे की आवश्यकता होती है।

प्रसिद्ध स्वास्थ्य-विज्ञान शास्त्री मॅक्स रुब्नर ने मनुष्य-शरीर पर पहने जानेवाले अलग अलग कपडों के बीच की हवा की तहों का तापमान नापने के प्रयोग किये हैं। हवा का तापमान ५०° हो अुस वक्त पोशाक के कपडों में अिस तरह तापमान पाया गया—

कपडों के बीच का तापमान—

१. शरीर और अूनी अंडर शर्ट	९१° फॅ.
२. अूनी अंडर शर्ट और लिनन शर्ट	७७° फॅ.
३. लिनन शर्ट और वासकेट	७६° फॅ.
४. वासकेट और कोट	७४° फॅ.
५. कोट के अूपर	७१° फॅ.

अिन आंकडों से दिखायी देगा कि शरीर से निकलनेवाली अुष्णता कपडे के कारण क्रमशः कम होती गयी है।

कपडा जिस रेशों से बना होगा अुसके तापवाहकत्व (conductivity) के अनुसार शरीर की अुष्णता बाहर निकलती है। गफ बुना हुआ कपडा जितना अधिक तापवाहक होता है अुतना विरल बुना हुआ नहीं होता। हवा सब से कम तापवाहक होती है। और हवा की ताप वाहकता १ मानी जाय तो अून की ९, रेशम की १७ और कपास तथा अलसी की २७ होगी। अतः विरल बुना हुआ अूनी कपडा सब से अधिक गरम और गफ बुना हुआ सूती या अलसी का कपडा सब से अधिक ठंडा होता है।

कुछ लोगों को कुछ रोग बार बार होते हैं अुसका कारण भी कपडा होता है। अपर्याप्त कपडे पहनने के कारण जुकाम और न्युमोनिया रोग होते हैं। जुकाम और न्युमोनिया से सुप्त क्षयरोग जागृत अवस्था में आ जाता है। १५ से २० साल की तरुण स्त्रियों में क्षयरोग से होनेवाली मृत्यु की संख्या अुसी अुमर के पुरुषों की मृत्युसंख्या से ज्यादा होती है, जिसका कारण कम कपडे पहनने के स्त्रियों के मूर्खतापूर्ण फैशन में ही है यह प्रयोग से पाया गया है।

रंग और तापमान

उष्ण कटिबंध के प्रदेशों में लोग काले या गाढे रंग के कपडे पसंद नहीं करते, जिसका कारण यह है कि वैसे कपडे ज्यादा गरम होते हैं। सफेद रंग में यह गुण है कि वह सूर्य के किरणों को शरीर तक पहुंचने नहीं देता, कपडे से ही परावर्तित कर देता है। अगर किसी कारण से सफेद कपडे पहनना संभव न हो तो हलके पीले रंग के कपडे चल सकते हैं।

गरम प्रदेशों में सैनिकों को हलके रंग के कपडे देने की दृष्टि से ही खाकी रंग के कपडों का प्रचार हुआ है। दूसरे, खाकी रंग के कपडों का रंग अुष्ण कटिबंध की जमीन जैसा होने से अुन्हें शत्रु की नजर से छिपाने के लिये अुपयुक्त होता है। खाकी शब्द का अर्थ होता है धूल के रंग का। हिंदुस्तानी खाक याने धूल, जमीन जिस शब्द से वह निकला है। शत्रु से छिपाने का अुद्देश न हो तो सैनिकों को सफेद कपडे दिये जा सकते हैं। अुससे सूर्य की गरमी से सैनिकों का अधिक से अधिक बचाव हो सकता है। अगर सफेद कपडे का अुष्णता-शोषण (Heat absorption) का मान १०० माना जाय तो दूसरे रंगों का अुष्णता–शोषण–मान नीचे लिखे अनुसार होगा—

रंग	अुष्णता शोषणमान (प्रतिशत)
१. सफ़ेद	१००
२. हलका पीला	१०२
३. गाढा पीला	१४०
४. हलका भूरा	१५२
५. हलका हरा	१५२
३. गाढा हरा	१६१
७. लाल	१६८
८. हलका बादामी	१९८
९. काला	२०८

अिससे दिखायी देगा कि सफ़ेद रंग के कपडे से काले रंग के कपडे दुगुनी अुष्णता खींच कर अपने अंदर रखते हैं।

सूर्य के तेज किरणों से बचाव पाने की दृष्टि से लाल रंग अेक जमाने में सब से अच्छा माना जाता था। अुस वक्त अुष्ण कटिबंध के प्रदेशों में लाल रंग के कपडे पहनने का रिवाज था। अगर दूसरे किसी रंग का कपडा हो तो अुसका अस्तर तो भी लाल रंग का रखा जाता था। लेकिन अिस संबंध में जो संशोधन किया गया अुससे यह साबित हुआ है कि लाल रंग के संबंध में यह धारणा गलत है। अुससे 'सनबर्न' 'सनस्ट्रोक' आदि से बचाव नहीं हो सकता। अिसके अलावा देखा गया है कि कपडे का लाल रंग सूर्य की गरमी के कारण जल्दी ही हलका पड जाता है तथा पूर्णतया नष्ट भी हो जाता है।

हवादार पोशाक

'अेयर कंडिशनिंग' का अध्ययन करने के लिये नियुक्त की गयी अमेरिकन मेडिकल अॅसोसियेशन कमेटी ने अधिक हवादार पोशाक की सिफारिश की है। गरमी के दिनों में शरीर के चारों ओर तपी हुअी और भापमिश्रित हवा का आवरण होता है, अुसे हटाना आवश्यक है। बंद कॉलर का पोशाक पहना हुआ मनुष्य याने रस्सी खींच कर जिसका मुंह बंद किया गया है अैसा अेक थैला है। अतः गरमी के दिनों में अुसे तकलीफ होना स्वाभाविक है। अिस दृष्टि से नाविक का पोशाक सब से अधिक आरामदेह कहा जा सकता है। अेक तो वह सफेद रंग का तथा सूती होता है और गले के पास खुला रखा जाता है, अतः अुसमें हवा अच्छी तरह खेलती रहती है। खेलने के वक्त का पोशाक भी अिसी कारण मनुष्य को आरामदेह मालूम पडता है।

पोशाक में परिवर्तन

गत महायुद्ध के समय वासकेट का अुत्पादन कानून से रोक दिया गया था। लेकिन अब वह प्रतिबंध अुठ जाने के बाद भी वासकेट ने अपनी पुरानी लोकप्रियता पुनः प्राप्त नहीं की है। पहले वासकेट पुरुषों की प्रतिष्ठा का अेक अनिवार्य अंग माना जाता था। लेकिन युध्द के बाद अुसकी वह प्रतिष्ठा नहीं रही है। प्रथम महायुध्द के बाद नरम कॉलर का शर्ट, बिना अस्तीन का पुलओवर और ढीलाढाला पाजामा लोकप्रिय बना। दूसरे महायुद्ध ने सैनिकों को नमीदार, सूखी, मरुभूमि में तथा गीले और ठंडे प्रदेशों में आराम देनेवाले कपडों के क्रांतिकारी तरीके सिखाये। सेना के संशोधकों ने हवा, पानी, गरमी आदि की दृष्टि से अनेक सुधार किये। पहले वायुरक्षक कपडा गफ बुना जाता था, जो चमडी को तकलीफ देता था। अब वह पहले से भी अधिक गफ बुना जाता है, फिर भी चमडी को तकलीफ नहीं देता, क्योंकि वह बहुत मुलायम रखा जाता है। सेमर का कपास सब से अधिक अुष्णता-प्रतिबंधक पाया गया

है। अुसके स्थितिस्थापक रेशों में लाखों लघुतम अवकाश होते हैं, जो शरीर के नजदीक हवा को बनाये रखते हैं।

ढीला बनाम चुस्त पोशाख

गरम और नमीदार आबहवा में किस तरह का पोशाक अधिक सुविधाजनक रहेगा अिस संबंध में शास्त्रज्ञों में मतभेद है। ज्यादातर संशोधकों ने अखंड कपडे के बने ढीलेढाले पोशाक की सिफारिश की है। यह पोशाक कलाओ, गला और कमर की जगह खुला होना चाहिये, जिस से शरीर को मुक्त हवा मिल सके। दूसरे शास्त्रज्ञों का मत है कि पसीना सोखने वाला शरीर से चिपका हुआ याने चुस्त पोशाख अुष्णता-निःसारण की दृष्टि से अधिक फायदेमंद होता है। प्रो. याग्लोअू और राव ने अिस संबंध में जो प्रयोग किये वे जानने लायक हैं।

ये प्रयोग अेक बडे 'अेयर कंडिशन्ड' कमरे में किये गये। कमरे का तापमान ८५° फ. और सापेक्ष नमी ८५ प्रतिशत रखी गयी। हवा-संचालन ७० फुट प्रतिमिनिट या ०.८ मील प्रतिघंटा रखा गया। जिन लोगों को चुस्त पोशाक दिया वह प्रत्येक को बराबर फिट बैठे अैसे आकार का ८०/२० नंबर का सूती होजियरी सूट था। अुसका वजन प्रति पोशाक ४८० ग्राम था। ढीला पोशाक दो कपडों के टुकडों का बना सूती पाजामेवाला था। अुसका वजन चुस्त पोशाक से कम याने ३२० ग्राम था। दोनों पोशाकों से शरीर का अेकसा ही पृष्ठभाग ढंका जाता था।

जिनको ये पोशाक दिये थे अुन सब लोगों ने नंगे-बदन काम करना अधिक पसंद किया, क्यों कि काम करते वक्त और काम करने के बाद अुससे अधिक ठंडक और कम थकावट मालूम हुआी। ढीला पाजामे-वाला पोशाक सब से अधिक ठंडा पाया गया। पसीने से वह गीला नहीं हुआ और शरीर से चिपका भी नहीं। गरमी से जितनी अधिक तकलीफ मालूम पडी अुसी परिमाण में पसीने की अुत्पत्ति भी अधिक देखी गयी। बिल्कुल नंगे थे अुनको सब से कम पसीना हुआ, और जो हुआ वह शरीर पर ही सूख जाने से अुससे अधिक से अधिक ठंडक पैदा हुआी। पोशाक

के प्रकारों के कारण शरीर को जिस परिमाण में हवा कम मिली या पोशाक का वजन जितना ज्यादा रहा अुस परिमाण में पसीने का निर्माण ज्यादा हुआ। ढीले पोशाक में पसीना कम से कम सोखा गया और चुस्त तथा बंद पोशाक में ज्यादा से ज्यादा।

अिन प्रयोगों से याग्लोअू और राव अिस नतीजे पर आये कि साधारण गरम और नमीदार आबहवा में गरमी से होनेवाली तकलीफ का नाप शरीर से निकलने वाले पसीने से जितना अच्छा लगाया जा सकता है, अुतना अच्छा नाडी के ठोकों से या शरीर के तापमान से नहीं लगाया जा सकता। अुष्ण कटिबंध की गरमी में कोअी भी कपडा पहनना शरीर के लिये तकलीफदेह होता है, क्यों कि वह शरीर से गरमी निकल जाने के रास्ते में अेक रुकावट सा होता है। अगर कपडा पहनना जरूरी ही हो तो वह ढीलाढाला और वजन में हलका होना चाहिये। वह अिस तरह होना चाहिये कि अुसके पहनने पर शरीर का अधिक से अधिक हिस्सा हवा और प्रकाश के लिये खुला रहे। अुसमें वायुसंचालन की पूरी गुंजाअिश होनी चाहिये। भाप की क्रिया द्वारा जिसमें शरीर को हवा मिलती है अैसा पोशाक बाष्पीभवन द्वारा शरीर को ठंडा रखता है। शरीर को चिपक कर बैठने वाले तथा पसीने को सोखने वाले पोशाक की अपेक्षा वह अधिक आरामदेह होता है। मच्छरों से रक्षा पाने की दृष्टि से बनाये हुअे चारों तरफ से बंद मुंहवाले कपडों से गरमी के कारण बहुत तकलीफ होती है।

त्वचा और वायु-संचालन

गरमी या ठंड का अनुभव शरीर को मिलने वाली हवा के परिमाण पर निर्भर करता है, कपडे की मोटाअी पर नहीं। वजनदार रेशों से बना, गले और अस्तीनों में खुला ढीला पोशाक हलके रेशों से बने, शरीर से सट कर बैठने वाले चुस्त पोशाक से अधिक ठंडा होता है। छेददार कपडे से शरीर को हवा मिलती है और अुसमें पसीना बाहर निकलने के लिये गुंजाअिश होती है। गाढा बुनावट का कपडा रोजाना अुपयोग के लिये जरूरी नहीं है।

कपडे का शरीर की त्वचापर होनेवाले परिणाम

शरीर के अनुकूल कपडे

कपडों का शरीर की त्वचा पर क्या परिणाम होता है यह महत्व की बात है। कपडे के नये प्रकार निकालते समय या अुनमें कुछ सुधार करते समय यह देखना जरूरी होता है कि अुससे त्वचा को कुछ हानि या तकलीफ तो नहीं पहुंचती।

कपडा बनाने के काम में आनेवाले अून, रेशम, रेयन, कपास आदि रेशों का त्वचा पर अलग अलग असर होता है। शरीर का कपडों के साथ, विशेषतः अंदर पहने जाने वाले कपडों के साथ, सीधा संबंध आता है। शरीर से निकलने वाले पसीने से कपडे पर रासायनिक परिणाम होता है। देखा गया है कि नये कपडे पहनने पर अधिकतर लोगों को तकलीफ मालूम पडती है। नये कपडे पहनने से अेक्झीमा होने के अुदाहरण भी अनेक पाये जाते हैं। अिसलिये यह अेक आम रिवाज हो गया है कि नया कपडा पहले अच्छा धो लेने के बाद ही पहनना चाहिये। जहां अैसा संभव न हो वहां कडी अिस्त्री करके कपडा पहन सकते हैं। सर्वसाधारण कपडों से ज्यादातर लोगों को कोअी तकलीफ नहीं होती। लेकिन जिन व्यक्तियों की विशेष संवेदनशील चमडी होती है, अुन्हें सामान्य कपडों से भी तकलीफ मालूम पडती है।

सेनाविभाग का संशोधन

सेना विभाग में अिस संबंध में जो संशोधन किये गये अुनसे अनेक नयी बातें मालूम हुअी हैं। अिंग्लैंड के डेविस और बार्कर का कहना है कि फौजी अस्पताल में जो रोगी आये अुनमें अधिकतर रोगियों को चमडी के रोग अूनी कपडों के कारण हुअे थे। यह बात पॅच-जांच (Patch Test) द्वारा तथा दूसरे कपडे देकर किये गये प्रयोगों से सिद्ध हुअी है।

अूनी कपडे पहनने के कारण खुजली, चमडी लाल होना, फूल जाना, अेक्झीमा आदि कअी रोग होते हैं।

अिन शास्त्रज्ञों का कहना है कि अून का स्पर्श त्वचा को तकलीफ-देह होने के कारण ही ये रोग होते हैं। यह देखा गया है कि नये कपडे तथा मैले अूनी कंबल देने के बाद खुजली, अेक्सीमा, पसीना छूटना शारीरिक थकावट आदि शिकायतें सैनिकों में शुरू हुअीं। अिन रोगियों को कुछ औषधि-अुपचारों के बाद युनिफार्म के नीचे पहनने के लिये सूती पाजामे, सादे बनियन तथा खाकी शर्ट दिये गये, जिसके कारण वे शिकायतें फिर से नहीं हुअीं। बिछौनों और कंबलों के कारण रोग न हों अिस दृष्टि से कपास के गद्दे तथा सूती चादरें दी गयीं, जिससे बहुत अच्छा परिणाम देखा गया।

फिनिश का असर

कुछ रोगियों में त्वचा लाल होने और फूल जाने की शिकायतें देखी गयीं। पूछने पर पता चला कि अुन सब को अेक ही तरह की नयी चड्डियां दी गयी थीं, जिनको अेक अलग ढंग का फिनिश दिया गया था। ये बिना धुली चड्डियां पहनने से दूसरों को भी अिसी तरह की तकलीफ हुअी, लेकिन जिनको ये धुली हुअी चड्डियां दी गयीं अुनको वैसी कोअी तकलीफ नहीं हुअी। अिससे साबित हुआ कि कपडों में दिये गये फिनिश के कारण ही यह तकलीफ हुअी थी।

युनायटेड स्टेट्स् और कानडा में अेक वक्त त्वचा का अेक विशिष्ट रोग अेकदम फूट निकला, जो देखा गया कि अेक विशिष्ट प्रकार के सिंथेटिक रेजिन फिनिश के कारण हुआ था। कपडे से भी अधिक अुस पर जो फिनिश आदि लगाये जाते हैं, अुससे चमडी को ज्यादा तक-लीफ होती है। अिसलिये कपडे के कारखानदारों को फिनिशों के गुण-धर्म की पहले अच्छी जांच कर लेना जरूरी है। पहले प्राणियों की चमडी पर अुनका क्या असर होता है यह देख लेना चाहिये। अुसके बाद कुछ

थोडे लोगों को वे कपडे पहनने के लिये देकर अुनको अुनसे कुछ तकलीफ तो नहीं होती यह देख लेना चाहिये। बाद में सौ दो सौ लोगों को देकर अुनकी जांच करनी चाहिये। यह भी देख लेना चाहिये कि अुनके रंग, चमक, फिनिश आदि पसीने से निकल तो नहीं जाते। क्यों कि अुससे भी चमडी के रोग होने की संभावना रहती है।

आयु और त्वचा

यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि आयु के अनुसार त्वचा में बदल होता रहता है। बच्चों की त्वचा कोमल रहती है, अुन्हें खुरदरे कपडे सहन नहीं होते। युवकों की त्वचा जीवन-शक्ति से परिपूर्ण होती है। अिसलिये मोटे-छोटे कपडे भी सह ले सकती है। बूढ़ों की त्वचा जीर्ण हो जाती है, अतः वह चाहे जैसे कपडे सह नहीं सकती। मतलब यह कि अुम्र के अनुसार कपडे का चुनाव करना चाहिये। अमुक अुम्र के लोगों को अमुक कपडे से चमडी की शिकायतें हुअीं अिसलिये दूसरे लोगों को भी वे शिकायतें होंगी अैसा निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। अुसके लिये भी जांच की आवश्यकता होगी। यह कहा जा सकता है कि कपास का पतला और मुलायम कपडा सब को चल सकता है।

कपास की कुछ मौलिक विशेषताअें

कपडा बनाने के काम में आनेवाले रेशों में कपास सब से प्राचीन रेशा है। हिन्दुस्तान में सनातन काल से कपडे के लिये कपास का अिस्तेमाल लोग करते आये हैं। यद्यपि आज दूसरे कअी रेशों से कपडा बनाया जाता है, फिर भी कपास का ही रेशा आम तौर पर गरीब से लेकर धनिक तक तथा रूमाल से लेकर गलीचे तक सब प्रकार के कपडे के लिये काम में लाया जाता है। शास्त्रज्ञों ने रेयन, निलोन आदि बहुत आकर्षक और नये नये गुणवाले कृत्रिम रेशे बनाये हैं, फिर भी कपास का स्थान वे नहीं ले सके हैं। सोखने की क्षमता, तनाव की शक्ति, धुलाअी की योग्यता, पक्का रंग और न सुकडने के मौलिक गुण कपास में हैं, जिनके कारण तरह तरह के कपडों में अुसे लगाया जा सकता है।

सोखने का गुण

कपडे में आर्द्रता सोखने का गुण है। नरम बट वाले सूत से बुने गये गफ कपडे पानी से फूल जाते हैं जिससे अुनके छेद बिलकुल बंद हो कर पानी कपडे के अंदर नहीं जा सकता। अिस गुण के कारण युद्ध की अगाडी पर सैनिकों के लिये कपास के कपडे दिये जातें हैं। कपास की नॉर्मल आर्द्रता, तापमान और वातावरण की नमी के अनुसार, बदलती है। गरम आबोहवा से ठंडी आबोहवा में आने पर कपास गरमी को अुस परिमाण में बाहर छोडता है; और ठंडे वातावरण से गरम वातावरण में आने पर अुस परिमाण में गरमी को आत्मसात करता है। परिवर्तनों में कपास बफर (मध्यस्थ) का काम करता है। यही कारण है कि तापमान के आकस्मिक परिवर्तनों के आघातों से कपास के कपडे शरीर की रक्षा करते हैं। दूसरे रेशों के कपडों में कपास के जितनी सोखने की क्षमता न होने के कारण वे अुतनी रक्षा नहीं कर पाते। सूती कपडे पहनने से मनुष्य को आराम मालूम पडता है, वह अिसलिये कि कपास शरीर से निकलनेवाली आर्द्रता को सोखकर अुसका शीघ्र वाष्पीभवन कर देता है। शरीर की

त्वचा से निरंतर पसीना निकलता रहता है। अुसे आसानी से अुड़ा देने का गुण कपड़े में होना चाहिये। हिन्दुस्थान जैसे अुष्ण कटिबंध के देशों में यह गुण अधिक महत्व का है।

तनाव की शक्ति

कपास की दूसरी विशेषता अुसकी तनाव शक्ति है। दूसरे रेशों से बने हुअे अुसी प्रकार के कपड़े के मुकाबले में सूती कपड़े अधिक मजबूत होते हैं। अिसके अलावा कपास ही अेक अैसा रेशा है जो पानी में भीगने पर कमजोर नहीं होता अुल्टे २५ प्रतिशत और अधिक मजबूत होता है। सूखी अवस्था से गीली अवस्था में यह अधिक मजबूती प्राप्त करता है।

धुलाअी की योग्यता

रेशे की धुलाअी की योग्यता गीली अवस्था में अुसकी मजबूती क्या होती है अिसपर अवलंबित रहती है। गीली अवस्था में कपास अधिक मजबूत होता है। अुसमें जोरदार अल्कलाअिन क्रियाओं का प्रतिकार करने की शक्ति है, अिसके कारण बार बार धुलाअी के आघातों को वह सह सकता है। धोबी की बार बार की धुलाअी में अन्य रेशों के कपड़े जल्दी खराब होते हैं। प्रयोगों से देखा गया है कि कपास का शर्टिंग धोबी की २७५ से २८० औसत धुलाअियों को सह सका, लेकिन दूसरे रेशे अिस रेकार्ड के नजदीक भी पहुंच नहीं सके। नॅपकीन, टॉवेल, पर्दे और दूसरे प्रकार के कपड़ों पर भी प्रयोग किये गये, जिसमें देखा गया कि धुलाअी की योग्यता के बाबत सूती कपड़े सब से श्रेष्ठ हैं, अितना ही नहीं दूसरे रेशों में २० प्रतिशत भी कपास मिलाया जाय तो अुनकी धुलाअी की योग्यता बढ़ जाती है।

पक्का रंग

कपास के कपड़ों का रंग दूसरे कपड़ों से अधिक पक्का रहता है। गीली और सूखी धुलाअी में अुनका रंग जल्दी फीका नहीं पड़ता। अिसलिए

और अल्कली द्रव्यों तथा पसीने के रंग को कपास जल्दी फीका पडने नहीं देता। अुसी तरह प्रकाश के प्रतिकार की दृष्टि से रेयन आदि रेशों से कपास अूंचे दर्जे का है। कपास के कपडों को पक्के से पक्के रंगों से रंग सकते हैं। रंगों के लिये बहुत तेज अल्कली का अुपयोग करना पडता है। कपास अिन तेज अल्कलियों को बरदाश्त कर सकता है। दूसरे रेशे अिस तरह की रंगाओी की तेज क्रियाअें नहीं सह सकते।

न-सुकडने का गुण

ग्राहक कपडों से अिसलिये नाखुश रहते हैं कि धुलने के बाद वे सुकड जाते हैं। कपास के कपडे में न-सुकडने का गुण है। कपास के कपडों को केवल यांत्रिक क्रियाओं से न-सुकडनेवाला बनाया जा सकता है। अैसा कपडा कितनी ही बार धुलाओी की जाय, लंबाओी तथा चौडाओी में अेक प्रतिशत से अधिक नहीं सुकडता। दूसरे रेशों के कपडे प्रत्येक बार धुलने पर थोडे थोडे सुकडते रहते हैं। केवल यांत्रिक क्रियाओं से वे न-सुकडने वाले नहीं बन सकते। कपास में अेक विशेष गुण है कि वह लंबाओी में बढता नहीं। कपास का रेशा पानी में भिगोने के बाद मोटाओी में ४० प्रतिशत तक बढता है, लेकिन लंबाओी में १ या २ प्रतिशत से अधिक नहीं बढता। दूसरे रेशे भीगने पर मोटाओी में और लंबाओी में भी बढते हैं और खींचने पर लंबे हो जाते हैं। फिनिशिंग की क्रियाओं में प्रत्येक बार भिगोने पर वे अपनी मूल स्थिति पर आने का प्रयत्न करते हैं। कपडे सुकड जाने का यही कारण है।

कपास की लोकप्रियता का कारण अुसके अिन विविध गुणों में है। रेनकोट, सोखने वाला कपास, नहाने का पोशाख, कुर्सी के आच्छादन, परदे, टॉवेल, चद्दरें आदि भिन्न भिन्न अुपयोग के कपडों के लिये अैसा काम देने वाला कपास जैसा दूसरा रेशा नहीं है। किसी भी कृत्रिम रेशे में कपास जैसे विविध गुण नहीं हैं। अुनमें शायद अेक-दो गुण कपास से भी बढकर होंगे, लेकिन अुसके लिये दूसरे कओी महत्त्व के गुणों को तिलांजली देनी पडी होगी।

सूत और कपडे की जांच

सूत तैयार होने पर अुसकी कअी पहलुओं से जांच करनी पड़ती है। सूत का वजन, अुसकी लंबाअी, अुसका नंबर, कस, बट आदि कितना है यह निश्चित करना पडता है। अिसके लिये शास्त्रज्ञों ने बहुत से यन्त्र बनाये हैं। अुनका अुपयोग बडी प्रयोगशालाअें ही कर सकती हैं। खादीकाम करनेवालों के लिये अिन जांचों को अमल में लाना संभव नहीं है। लेकिन ये किस तरह की जाती हैं और अुनका अुद्देश्य क्या है यह समझ लेना अुपयोगी है। अिसलिये यहां सूत और कपडे की मुख्य जांचों का संक्षेप में विवरण दिया जाता है।

नमी

कपास अेक अैसी वस्तु है जो हवा की नमी सोख लेती है। अिसलिये कपास या सूत का वजन हमेशा अेकसा नहीं रहता, वह कम ज्यादा होता रहता है। अतः अुसका सही वजन निकालना आवश्यक हो जाता है। सूत में नमी का अेक निश्चित प्रतिशत सही मानकर अुसके अनुसार ठीक वजन निकाला जाता है। निश्चित प्रतिशत से नमी कम ज्यादा हो तो सूत के वजन में हानि होती है और कम हो तो वजन में लाभ होता है।

सूत में नमी का परिमाण निश्चित करने के लिये पहले अुसे गरम भट्टी में रख कर अुसकी सारी नमी अुडा दी जाती है; यानी यह देख लिया जाता है कि अब सूत का वजन अिससे ज्यादा कम नहीं हो सकता। नमी अुडा देने के बाद अुसका वजन लिया जाता है। अिस वजन को सूखा वजन कहा जाता है। बाद में हिसाब कर सूत में कितनी नमी है यह निकाला जाता है। गृहीत नमी से वह कम है या ज्यादा है यह देख कर अुसका सही वजन निश्चित किया जाता है, और अुसके अनुसार अुसकी कीमत वगैरा लगायी जाती है।

अलग अलग तन्तुओं में नमी के जो प्रतिशत गृहीत माने गये हैं वे अिस तरह हैं—

कपास	८॥	प्रतिशत
रेशम	११	,,
अून	१६	,,
सन और पाट	१२	,,
ज्यूट	१३$\frac{३}{४}$	,,

गृहीत नमी के ये प्रतिशत सूखे वजन पर लगाये गये हैं, यह ध्यान में रखना चाहिये। यानी १०० पौंड सूखा सूत ८॥ पौंड नमी सोख लेगा यानी अुसका सही वजन १०८॥ पौंड होगा। अिसका सूत्र होगा।

सूखा वजन + गृहीत नमी = सही वजन

अिसलिये सही वजन पर नमी का प्रतिशत $\frac{८॥ \times १००}{१०८॥} = ७.८३$

होगा। अिसे कुल नमी कहा जाता है। अिसलिये **गृहीत नमी** और कुल **नमी** दो अलग अलग बातें हैं।

जब सूत बहुत ज्यादा हो तब सारे सूत की नमी की जांच करना संभव नहीं होता। अिसलिये सारे सूत में से दो-तीन जगह से नमूने लेकर अुसकी नमी निश्चित की जाती है। अुसका औसत निकाल कर वही सारे सूत की नमी मानी जाती है। यह बात सभी जांचों में लागू होती है।

अब अेक अुदाहरण लीजिये, जिससे नमी की जांच का गणित अच्छी तरह ध्यान में आ जायगा। मान लीजिये कि १०० पौंड सूत है और अुसकी नमी की जांच करनी है। जांच के नतीजे नीचे लिखे अनुसार आये—

सूत का वजन	१०५ पौंड
सूखा वजन	१०० पौंड
गृहीत नमी	८॥ पौं.

सही वजन	१०८॥ पौं.
मूल वजन	१०५ पौं.
वजन में लाभ	३॥ पौं.

प्रतिशत फायदा करीब ३ प्रतिशत।

नंबर (अंक)

अंक सूत का वजन और लंबाओी का संबंध दिखाता है। सूत का अंक निकालने के दो तरीके प्रचलित हैं अेक यह तरीका कि लंबाओी की किसी अेक गृहीत अिकाओी में जितना वजन बैठेगा, अुतना अुस सूत का नंबर माना जाता है। दूसरा तरीका यह है कि किसी वजन की किसी अेक गृहीत अिकाओी में जितनी लंबाओी बैठेगी, अुतना अुस सूत का नंबर माना जाता है।

पहला तरीका—९००० मिटर (९८४० गज) सूत का जितना ग्रॅम वजन होगा अुतना अुसका डेनियर (नंबर) होगा।

अिसलिये ९,८४० गज सूत का वजन अगर १०० ग्रॅम हुआ तो अुसका डेनियर १०० होगा और अगर ९,८४० गज का वजन २०० ग्रॅम हुआ तो अुसका डेनियर २०० होगा। अिस तरीके में सूत का डेनियर जितना ज्यादा होगा अुतना वह सूत ज्यादा मोटा होगा। नंबर निकालने का यह तरीका हिंदुस्तान में चालू नहीं है।

दूसरा तरीका—अेक पौंड वजन में ८४० गज की जितनी गुंडियाँ बैठेंगी, अुतना अुस सूत का नंबर होगा।

अेक पौंड में अगर ४० गुंडियाँ बैठती हैं तो अुसका नंबर ४० होगा और अगर अेक पौंड में २० गुंडियाँ बैठती हैं तो अुसका नंबर २० होगा। अिस तरीके में सूत का नंबर जितना ज्यादा होगा, अुतना ही वह ज्यादा महीन होगा। अिसी तरीके से हम नंबर निकालते हैं और हम सब को यह तरीका मालूम है।

गुणित अंक—अिकहरा सूत जब दुहरा, तिहरा कर बटा जाता है, तब अुस सूत का नंबर अिकहरे सूत पर से ही लिखा जाता है। जिस नंबर का सूत होगा अुसके नीचे जितने धागे बटे होंगे अुनकी संख्या दी जाती है। यानी धागों की संख्या सूत के नंबर का भाजक होती है। २०/४ का मतलब होगा कि यह सूत २० नंबर के ४ धागे अेक साथ बटकर तैयार किया गया है। अगर धागों में दो बार या अुससे ज्यादा बट दिया हो तो गुणा का चिन्ह देकर धागों की संख्या देनी चाहिये। जैसे, २०/३×३ अिसका अर्थ यह होगा कि २० नंबर के तीन धागों को अेक साथ बट कर अिस बटे हुअे सूत को पुनः तिगुना कर बटा गया है। पहले को हम यौगिक सूत (Ply-yarn) और दूसरे को गुणित सूत (Cable-yarn) कह सकते हैं। क्यों कि पहले में हम सिर्फ कअी धागों का योग (जोड) कर बट देते हैं और दूसरे में धागों को गुणा कर के बट देते हैं।

अिस तरह यौगिक या गुणित सूत का बटने के बाद का नंबर अगर मालूम करना है तो, सूत के नंबर को बटे हुअे धागों की संख्या से भाग देने पर वह निकल आयेगा। जैसे २०/४ के सूत का यौगिक नंबर २०/४ = ५ होगा। अिसी तरह २०/२×२ का गुणित नंबर २०/२ × २ = २०/४ = ५ होगा। यह ध्यान रहे कि अिस तरह भाग देकर निकला हुआ नंबर यौगिक या गुणित सूत में दिया नहीं जाता। क्योंकि बटे हुअे सूतों में किस नंबर का सूत काम में लाया गया है और अुस सूत के कितने धागे बटे हुअे हैं, यही जानने की जरूरत होती है। अूपर के बटे सूत का नंबर ५ न देकर २०/४ और २०/२×२ अैसा ही देना चाहिये।

फलित अंक—लेकिन कभी कभी दो या तीन अलग अलग नंबर का सूत अेक साथ बट कर बटा सूत तैयार किया जाता है। अिस तरह के सूत का नंबर दूसरे तरीके से निकालना पडता है। मान लीजिये कि अेक बटे हुअे सूत में १६/२+२०/२ नंबर का सूत काम में लाया गया है। अिस सूत का नंबर अूपर के तरीके से हम निकालें तो वह गलत होगा।

अिसके लिये हमें हरअेक नंबर के सूत का अलग अलग वजन ध्यान में लेकर अुस पर से अुस बटे हुअे सूत का नंबर निकालना चाहिये।

मान लीजिये कि अूपर के सूत की अेक गुंडी हमने ली। अुसमें २ धागे १६ नंबर के और २ धागे २० नंबर के हैं। यानी १६ नंबर की २ गुंडियां और २० नंबर की २ गुंडियां मिला कर अिस बटे सूत की अेक गुंडी बनी है। १६ नंबर की २ गुंडियों का वजन ५ तोले और २० नंबर की दो गुंडियों का वजन ४ तोले होगा। अिसलिये बटी हुअी गुंडी का वजन ५+४=९ तोले होगा। अिसलिये बटे सूत का फलित नंबर ६४०/९×१६=६४०/१४४=४.४ होगा।

सही नंबर—मौसम के अनुसार सूत में नमी की तादाद हमेशा कम-ज्यादा होती रहती है, और अिस तरह सूत का वजन कम-ज्यादा होते रहने से सूत का नंबर भी कभी कम और कभी ज्यादा होता रहेगा। अिसलिये सूत का सही वजन निकाल कर अुस पर से सूत का सही नंबर निश्चित करना चाहिये। सही वजन किस तरह निकाला जाता है, यह पहले हम देख चुके हैं। गरमी के दिनों में सूत का नंबर सही नंबर से कुछ ज्यादा होगा और बरसात के दिनों में कुछ कम। मौसम की वजह से सूत के नंबर में ज्यादा से ज्यादा अेक दो नंबर का फर्क हो सकता है।

लंबाअी

कते हुअे सूत की ६४० तार (८४० गज) की गुंडियां बना कर रखी जाती हैं। लेकिन जब बहुत सा सूत खरीदा जाता है अुस वक्त गुंडियों में तार बराबर हैं या नहीं यह देखना जरूरी हो जाता है। अगर तार कम होंगे तो सूत का नंबर बढ़ जायगा और खरीदने वाला घाटे में रहेगा। अिसलिये कुल सूत में से अलग अलग जगह से चार पांच गुंडियां लेकर अुन्हें परेते पर परेत लिया जाता है। और अुनके तारों या गजों का औसत निकाल कर सारी गुंडियों की लंबाअी अुस औसत के बराबर

मानी जाती है। मान लीजिये कि १० पौंड सूत है और अुसमें २०० गुंडियां हैं। यानी सूत का नंबर २० बताया गया है। अुनमें ५ गुंडियां लेकर अुनको परेतने पर अुनके गज निम्न प्रकार पाये गये—

८३०	१ ली गुंडी
८२०	२ री गुंडी
८१०	३ री गुंडी
८१५	४ थी गुंडी
८२०	५ वी गुंडी
४०९५	कुल गज
८१०	प्रति गुंडी गज

यानी प्रत्येक गुंडी में २१ गज सूत कम है, अिसलिये अेक पौंड यानी २० गुंडियों में २१×२०=४२० गज यानी आधी गुंडी कम है। यानी अेक पौंड में १९॥ गुंडी होंगी और अुस सूत का नंबर भी २० के बदले १९॥ ही होगा।

मजबूती

सूत की मजबूती की जांच वह कितना वजन अुठा सकता है अिस पर से की जाती है। लेकिन अच्छी तरह देखा जाय तो हम जिस तरह की सूत की मजबूती देखना चाहते हैं, अुस तरह की मजबूती की अिस जांच से परीक्षा नहीं होती। सूत से कपडा बुनते वक्त सूत कितना तन सकता है और कितनी रगड सह सकता है यही खास देखने की बात होती है। अिसी तरह कपडा तैयार होने पर भी अिन्हीं दो बातों पर अुसका टिकाअूपन निर्भर करता है। लेकिन सूत की वजन अुठाने की ताकद जांचना सुभीते का और आसान होने से यही जांच आज ज्यादातर काम में लायी जाती है। सूत की वजन अुठाने की ताकद अगर ज्यादा है तो अुसकी स्थितिस्थापकता और रगड सहने की शक्ति भी ज्यादा होगी, अैसा मानना गलत न होगा, अिसलिअे भी यह जांच सूत की असली मजबूती बता सकती है अैसा हम मान सकते हैं।

सूत का सही कस निकालना काफी मुश्किल काम है। अुसे कअी बातों से फर्क होना संभव है। कस निकालने के अनेक से अनेक सूक्ष्म यन्त्र निकाले गये हैं। लेकिन अुन यन्त्रों पर से भी सही कस निकालने में गलतियां हो सकती हैं। हाथ कते सूत के कस निकालने के तरीके में तो यह त्रुटियां होने की और भी ज्यादा संभावनाअें हैं।

कौन कौन सी बातों से कस में फर्क पड सकता है, अिन पर हम थोडा विचार करें। अलग अलग मशीनों या कस-कांटों पर कस निकालने से या अलग अलग लोगों के कस निकालने पर कस में फर्क पडने की संभावना रहती है। लेकिन मान लें कि अेक ही कसकांटे पर जांच की जा रही है और कस निकालने वाले के असर से अुस कांटे के काम करने में कोअी फर्क नहीं हो सकता है तो भी नीचे लिखी बातों से कस में फर्क हो सकता हैं।

नमी का असर—सूत में नमी का परिमाण कम-ज्यादा होने से अुसका कस भी कमज्यादा होता है। नमी ज्यादा होने पर सूत की मजबूती बढती है और कम होने पर मजबूती भी कम होती है। हवा की सापेक्ष नमी हमेशा कमज्यादा होती है। दिन की सापेक्ष नमी और रात की सापेक्ष नमी में भी फर्क पड जाता है। हिन्दुस्तान में मामूली तौर पर जाडे के दिनों में यानी दिसंबर से मार्च तक हवा की नमी सब से कम यानी ५० से ६० प्रतिशत होती है और बरसात के दिनों में यानी जुलाअी से सितंबर तक सब से ज्यादा यानी ७० से ८० तक होती है। मअी, जून और अक्टूबर में मध्यम यानी ६० से ७० तक नमी होती है। साल भर में हवा की नमी में ३० प्रतिशत फर्क हो जाता है और अिसलिये अुसके मुताबिक सूत के कस में भी १५-२० प्रतिशत का फर्क पड सकता है।

हमें अगर सही कस निकालना हो तो सूत में सही नमी रख कर अुस पर से अुसका कस निकालना होगा। लेकिन अिस तरह कस निकालने के लिये हमेशा सही नमी रखना संभव नहीं है। अिसी तरह सूत

की नमी की जांच करना भी मुश्किल है। अिसलिये जिस सूत का कस निकालना हो अुस सूत को हवा में ४८ घंटे खुला रख दिया जाता है। अिस तरह हवा में रखने से सूत हवा की नमी से अेकरूप हो जाता है। यानी हवा की जो सापेक्ष नमी होगी अुसके अनुसार सूत में नमी का प्रतिशत आ जायेगा। बरसात के दिनों में यानी जब हवा की नमी ८० प्रतिशत से भी ज्यादा होती है, सूत में साधारण तौर पर८–८। प्रतिशत नमी होनी चाहिये। लेकिन डिब्बे में बन्द कर के रखे हुअे सूत के बंडल में ६ प्रतिशत ही नमी हो सकती है। अिसलिये अिस बंडल को दो दिन हवा में खुला रखने पर वह बाहरी हवा से अेकरूप हो जायगा और अुसकी नमी बढ कर ८–८॥ प्रतिशत हो जायगी। अिसलिये कस निकालने के पहले हमें यह देख लेना चाहिये कि सूत हवा में अेक दो दिन खुला रखा गया है। अिसके बाद कस निकालने पर हम कह सकेंगे कि यह जुलाअी या और किसी महीने का कस है और कस से तुलना करनी हो तो दूसरे सूत के अुसी महीने के कस से अुसकी तुलना करनी चाहिये।

यह देखा गया है कि हवा की सापेक्ष नमी में जितना फर्क होता है, अुससे करीब आधा फर्क कस में पडता है। यानी हवा की साक्षेप नमी ८० प्रतिशत है अुस वक्त अगर किसी सूत का कस ६० प्रतिशत है तो हवा की नमी जब ६० प्रतिशत होगी तब अुस सूत का कस करीब ५० प्रतिशत होगा। हिंदुस्थान में नार्मल आबहवा वह मानी जाती है जिसमें अुष्णतामान ८२ प्रतिशत और साक्षेप नमी ६५ प्रतिशत होती है। अिसलिये जून में सूत का जो कस होता है वही सूत का सही कस माना जाता है।

लंबाअी का असर–नमी के बाद कस पर परिणाम करनेवाली बात है, कस निकालने के लिये ली गयी सूत की लंबाअी। अलग अलग कस निकालने के तरीकों में सूत की लंबाअी अलग अलग रखी जाती है। अिसलिये अेक तरीके से निकाले हुअे कस से दूसरे तरीके से निकाले हुअे कस की

तुलना करना गलत होगा। सूत का कस असमें जो कमजोर स्थान रहते हैं अनपर निर्भर करता है। अिसलिये यह स्पष्ट है कि अेक फुट सूत में जितने कमजोर स्थान होंगे, १२ फुट सूत में कमजोर स्थान असने ज्यादा होंगे। अिसलिये अेक फुट सूत के कस में और १२ फुट सूत के कस में फर्क होगा, अिसमें शक नहीं। यह देखा गया है कि कस निकालने के सूत की लंबाअी १० अिंच से ३०, अिंच बढाने पर असका कस ६ प्रतिशत कम हो गया। हाथ के सूत में हम १२ फुट सूत की लटी पर कस का प्रयोग करते हैं। अिसलिये हर जगह अगर यही तरीका चलता हो तो लंबाअी के कारण कस में जो फर्क पडता है वह फर्क हमारे कस में नहीं पडेगा।

वजन डालने के वक्त का असर—वजन डालने के लिये हम जितना वक्त लगाते हैं, असका भी कस पर असर होता है। यानी अगर अेक सूत अेक मिनिट तक २०० तोले वजन अुठाता हो तो अगर हम दो मिनिट तक असपर वजन रखना चाहें तो वह २०० तोले अुठा न सकेगा। अिसलिये अगर ठीक कस निकालना है तो हमें वजन डालने का वक्त भी बिल्कुल निश्चित कर देना चाहिये। अगर हाथ के सूत के कस निकालने के तरीके में हम अेक मिनिट में कसकांटे के पलडे में वजन डाल देने का नियम बनावें तो अच्छा होगा। लेकिन हर कस निकालने वाला बिलकुल ठीक अेक मिनिट में पूरा वजन रख सकेगा अैसा नहीं कहा जा सकता। तो भी अिस तरह का कोअी नियम होना जरूरी है। रेत डालने के तरीके से यह बात हो सकती है और सेवाग्राम में अैसा कसकांटा काम में लाया जा रहा है। मिल के यंत्रों में वजन की गति अेक मिनिट में अमुक अेक निश्चित रखी गयी है अिसलिये अुनके कस में समय के कारण फर्क नहीं हो सकता।

मजबूती निकालने के तरीके

कस निकालने के पांच तरीके हैं। अेकतार की जांच, लटी की जांच, झटका जांच, फटने की जांच और घिसने की जांच। अि

आखरी दो तरीके कपडे की मजबूती देखने के लिये काम में आते हैं। हाथ के सूत का कस निकालने के लिये, हम सिर्फ लट्टी-जांच का तरीका ही काम में लाते हैं। अिस तरीकों से जांच करने के लिये अलग अलग तरह के यन्त्र बनाये गये हैं।

अेकतारी जांच—यह जांच सूत के अेकहरे धागे पर की जाती है। धागे की लंबाओी साधारण तौर पर अेक फुट रखी जाती है। यह अेक फुट लंबा धागा कितना वजन अुठाता है, अुसके अनुसार अुसका कस निश्चित किया जाता है। अिस जांच के जो यन्त्र हैं, अुनमें सूत कितना तनता है यह भी नापा जाता है। अिसलिये अुस कस के साथ सूत की स्थितिस्थापकता की भी जांच होती है। अेकतारी जांच की विशेषता यह है कि अुससे सूत की सच्ची जांच होती है। बुनने तक की सारी क्रियाओं में सूत के अेक अेक धागे की मजबूती ही काम में आती है। अिसलिये सूत के अेक धागे का कस देखना ज्यादा महत्व रखता है। लट्टी की जांच में सूत के अेक अेक धागे की जांच न होकर पूरी लट्टी की जांच होती है। बुनने आदि क्रियाओं में लट्टी के रूप में सूत को कहीं भी काम में नहीं लाया जाता। अिसलिये लट्टी-जांच से सूत की मजबूती की असली परीक्षा नहीं होती। लेकिन लट्टी की जांच करना सुभीते का होने से और अुससे काफी ज्यादा सूत का थोडे समय में कस देखा जा सकता है, अिसलिये यही जांच सब से ज्यादा प्रचलित है। अेक धागे की जांच में सिर्फ अेक फुट सूत की ही जांच होती है। अिसलिये सारे सूत के कस निकालने के लिये बहुत ज्यादा प्रयोग कर अुसका औसत निकालना पडता है। अुसके लिये काफी समय लगता है।

लट्टी-जांच—अिस जांच में भी सूत की लट्टी जितना वजन अुठाती है, अुसके अनुसार अुसका कस निश्चित किया जाता है। मिलों में १२० गज की ४½ फुट घेरे की लट्टी पर प्रयोग करते हैं। हाथ के सूत में १२ गज की दो फुट घेरे की लट्टी पर प्रयोग किया जाता है। अेक

धागे की जांच का और लट्टी-जांच का तरीका अेकसा ही है। दोनों में वजन अुठाने की ताकत पर सूत का कस निश्चित किया जाता है।

झटका-जांच–झटका जांच का सिध्दान्त अूपर के दोनों तरी‍के से अलग है। अिसमें सूत के अेक धागे को, बहुत से धागों को या सूत की लट्टी को झटके से तोडकर अुसका कस निश्चित किया जाता है, अिस तरीके की विशेषता यह है कि अुसमें सूत तनने की ताकत और अुसकी झटका सहने की ताकत अिन दोनों ताकतों पर अुसका कस निश्चित होता है। अिसलिये यह जांच अूपर की दोनों जांचों से अच्छी है। अिसके लिये मामूली तौर पर सूत का अेक फुट लंबा धागा या लट्टी ली जाती है। अुसका अेक सिरा अेक पक्के हुक में अटका दिया जाता है और दूसरा सिरा घड़ी के लंबक के समान झूलते हुअे अेक लंबक के सिरे में अटका दिया जाता है। लंबक के नीचे साधारण तौरपर अेक पौंड गोला लगा होता है। लट्टी फंसाने के बाद लंबक को अूपर अुठा कर छोड दिया जाता है। लंबक नीचे आते ही सूत तोड देता है और अुसी वेग से दूसरी तरफ अूपर अुठता है। वह जितना अूपर अुठता है अुतना अुस सूत का कस होता है। लंबक जितना अूपर अुठेगा अुतना सूत तना गया है, अैसा समझना चाहिये। दो धागों पर प्रयोग किया और अुसकी मजबूती और तनने की लंबाअी अिस तरह निकली—

१ ला धागा—१ पौंड–$\frac{१}{२}$ अिंच
२ रा धागा—१ पौंड–$\frac{१}{४}$ अिंच

अिसलिये पहले का १×$\frac{१}{२}$=$\frac{१}{२}$ अिंच-पौंड और दूसरे का १×$\frac{१}{४}$=$\frac{१}{४}$ अिंच-पौंड कस होगा। दोनों धागों की मजबूती अेक सी है, लेकिन तनने की ताकत अेक सी न होने से दूसरे धागे से पहले धागे का कस दुगुना हो गया है।

अिसी तरह कपडे की पट्टियों को झटके से तोडकर कपडे की मजबूती की जांच की जाती है। कपडे की दो तरह से जांच की जाती

है, अेक ताने की और दूसरी बाने की। कपडे की पट्टी में ताने के धागे खडे रख कर जांच करने पर यह ताने की जांच होती है और पट्टी में बाने के धागे खडे रख कर जो जांच होती है यह बाने की जांच होती है।

फटने की जांच

यह जांच कपड़े पर ही हो सकती है। कपडे का अेक टुकडा लेकर अुसे अेक गोल प्लेट में फंसाया जाता है, जो बीच में पोली होती है। अिस तरह फंसाने के बाद कपडे को फटने तक दबाया जाता है। फटने के लिये जितना जोर लगेगा अुसके अनुसार अुस कपडे की मजबूती निश्चित की जाती है। अिस जांच में कपडे के ताने और बाने के धागों की मजबूती की अेक साथ जांच हो जाती है।

घिसने की जांच

यह भी कपडे पर ही होती है। कपडे के टुकडे को खडा फंसा कर अुसके नीचे वजन लटका दिया जाता है, जिससे अुसके अूपर तनाव बना हुआ रहे। बाद में अिस कपडे को फटने तक घिसा जाता है। घिसने में जितना समय लगेगा या प्रति मिनिट जितनी घसीटें (Strokes) अुसे देनी पडेंगी अुसके अनुसार अुसकी घिसने की ताकत निश्चित की जाती है।

हम कपडे पहनते हैं तब वे हमेशा ताने जाते और खींचे जाते हैं। अुसी तरह अुन्हें झटके भी लगते हैं। वे शरीर से और पहने हुअे दूसरे कपडों से रगड खाते हैं। धुलाअी के वक्त भी कपडों को खिंचाव, रगड और झटके बरदाश्त करने पडते हैं। अिसलिअे कपडे का टिकाअूपन देखने के लिये अिन तीनों बातों की जांच करनी पडती है। दरी, गलीचा वगैरे चीजों की मजबूती देखने के लिये वे कितना खिंचाव और झटके सहते हैं यह देखना बेकार होगा। अुनका टिकाअूपन सिर्फ घिसने की जांच से ही मालूम हो सकता है। क्यों कि अुन्हें हमेशा पैर और जूतों की रगड सहनी पडती है। अिसलिये जिस काम के लिये कपडा अुपयोग में लाया जाता हो, अुसके अनुसार अुसकी मजबूती की जांच करनी चाहिये।

बट की जांच

सूत की मजबूती ज्यादा तर बट पर निर्भर करती है। अिसलि बट की जांच करना भी आवश्यक हो जाता है। बट की जांच कि बिना सूत में ठीक बट दिया जा रहा है या नहीं अिसका असली प हमें नहीं लग सकता। बट जांचने के लिये कअी तरह के यन्त्र हैं बट की जांच का सिद्धान्त अेक ही है। सूत में दिये हुअे बट को खोल से बट की संख्या मालूम की जाती है। बट की जांच मामूली तौर सूत के अेक अिंच से दस अिंच तक लंबे टुकडे पर की जाती है।

बट की जांच करने के यन्त्र में दो चिमटे होते हैं जिसमें धा फंसाया जाता है। बाद में चिमटे के साथ लगे हुअे चक्र को सूत में जि तरफ बट होगा अुसकी अुलटी तरफ घुमाना शुरू कर धागे का बट खोल जाता है। जैसे जैसे धागे का बट खुलता है वैसे वैसे दूसरे चिमटे के सा लगी हुअी सुअी पर खिचाव कम होकर वह नीचे अुतरती जाती है पूरा बट खुल जाने के बाद भी चक्र अुलटी तरफ घुमाते जाते हैं। अैस करने से धागे का पहला बट खुल कर वह अुलटी तरफ बट खाने लग है। अिस तरह धागा जैसे जैसे बटता जाता है सुअी पर खिचाव ब कर वह फिर से अूपर की तरफ सरकने लगती है। अिस तरह सुअी ज अपने पहले स्थान पर आ जाती है, तब बट देना बंद कर देते हैं। च पर दांते होते हैं और वह सूत को पकडने वाले चिमटे से जुडा होता है अिसलिये चक्र के घुमाने से अुसके कितने फेरे हुअे यह तुरन्त मालूम ह जाता है। अिसमें सूत का पहला बट खोल कर फिर से अुसे अुतना ह बट दिया जाता है, अिसलिये सुअी नीचे अुतर कर फिर से अपने स्थान प आने तक जितने फेरे हुअे होंगे अुससे आधा अुस सूत का बट होगा यह स्पष्ट है। अगर हमने १० अिंच धागे की जांच की, और अुस चिमटे के ६०० फेरे हुअे तो अुस सूत का प्रतिअिंच बट $\frac{६००}{१०\times२}$=३ होगा। सूत का बट पूरे तौर पर खुल गया है या नहीं यह हम जान

नहीं सकते अिसलिये यन्त्र में सुअी लगाअी जाती है और अुस पर खिचाव की मदद से बट की जांच की जाती है। दोसूती बटे हुअे सूत के बट की जांच करना हो तो सुअी की जरूरत नहीं होती। हम आंख से ही पूरा बट खुल गया है या नहीं यह जान सकते हैं, अिसलिये सिर्फ चक्र घुमा कर अुसके बट की जांच हो सकती है।

चरखे के स्थल-काल पर विचार

अितिहास-पूर्व काल

हिन्दुस्तान के अन्य अनेक महत्वपूर्ण विषयों की तरह चरखे का भी अितिहास सिलसिले से हमें प्राप्त नहीं है। कातने की कला हजारों वर्षपूर्व मनुष्य को ज्ञात थी, अिसमें अब कोअी शक नहीं रह गया है। अिंकापूर्व पेरू, प्राचीन मिश्र और हिंदुस्तान में मोहन-जो-दडो से कपडे के जो नमूने मिले हैं, वे अुत्तम कारीगीरी के नमूने हैं। अुनसे यह निश्चित मालूम होता है कि आज से ५ हजार वर्षपूर्व कातने व बुनने की कला आज के समान ही पूर्ण अवस्था में पहुंच चुकी थी। लेकिन हमारे सामने सवाल यह है कि अुस समय कातने का औजार कौनसा था? अुस वक्त चरखा मौजूद था या नहीं? मालूम पडता है कि अुस जमाने में चरखे का आविष्कार नहीं हुआ था। अुस समय सब सूत तकली पर ही काता जाता था। मोहन-जो-दडो में तकली की हजारों चकतियां मिली है, लेकिन चरखे का कहीं भी पता नहीं है। पेरू की अिंका पूर्व सभ्यता की छोटी-मोटी सभी चीजें सुरक्षित अवस्था में प्राप्त हुअी है। मरुभूमि होने और वर्षा के अभाव के कारण पेरू में हजारों वर्षों तक चीजें जैसे की तैसी रह सकी हैं। वहां पर सूत लिपटी हुअी और खाली तकलियां और पूनी, कपडा, करघे आदि कताअी की सारी साधन सामग्री

प्राप्त हुआी है, लेकिन अुनमें भी चरखा नहीं है। अिजिप्त के पिरामि
से निकले हुअे सामानों में भी चरखे का कहीं पता नहीं है।

पाषाण युग, ताम्र युग और लोह युग की मनुष्य बस्तियों के प्रदे
से तकली की अनेक चकतियां बार-बार पाअी गअी हैं, लेकिन कहीं
चरखे का पता नहीं मिला है।

अिसका अेक कारण यह हो सकता है कि तकली की चकति
पत्थर या धातु की बनी होने की वजह से हजारों वर्षों तक जमीन के अं
सुरक्षित रह सकी हैं, लेकिन चरखा पत्थर या धातु का न होकर लक
जैसी जल्दी ही खराब हो जानेवाली चीज का बना होने से अुसके पां
हजार वर्ष के पूर्व के अवशेष मिलना असंभव है। बात ठीक है। लेकि
आगे चलकर हम देखेंगे कि औसा के पूर्व चरखे का आविष्कार नहीं हु
था, जिसके कअी सबूत हम दे सकते हैं।

संस्कृत और पाली साहित्य

अिस अति प्राचीन काल को छोडकर जब हम औसा पूर्व अे
हजार के आगे आते हैं तब हमें हिन्दुस्तान, यूनान और चीन के प्राचं
साहित्य में कताअी का अुल्लेख मिलता है। यूनान के महाकाव्य ओडे
और अिलियड में कताअी-बुनाअी के बारे में अनेक सुंदर कविताअें मिल
हैं। वेद, अुपनिषद्, स्मृति और रामायण-महाभारत में कताअी के अने
अुल्लेख भरे पडे हैं। लेकिन अुस समय चरखा चालू था, अिसका क
साफ तौर पर जिक्र नहीं पाया जाता। कअी लेखकों ने "वेदों
चरखा" शीर्षक से पुस्तकें लिखी हैं, और अुनमें यह दिखाया है
वेदकाल में घर घर चरखा चलता था। लेकिन अन ग्रंथकारों का य
लिखना शास्त्रीय नहीं है। अुन्होंने वेदों से अनेक अुद्धरण देकर
दिखाया है, वह सिर्फ यही है कि वेद के समय सूत कातने का अ
रिवाज था। लेकिन अिसका मतलब यह नहीं होता कि अुस वक्त लो
चरखे पर सूत कातते थे।

अिसके बाद बौद्धों के पाली ग्रंथ, कौटिल्य का अर्थशास्त्र और अले-क्जेण्डर के आक्रमण के समय के ग्रीक लेखक मैगेस्थनीज, टॉलेमी और हिरोडोटस आदि के ग्रंथ आते हैं, जिनमें हिन्दुस्तान की कताअी-बुनाअी की कला का काफी जिक्र मिलता है। लेकिन अुनमें भी हम चरखे का अुल्लेख नहीं पाते हैं। बौद्धों की अेक जातक कथा में तकली पर सूत कातती हुअी स्त्री का अुल्लेख आता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में कातने और बुनने वालों के लिये बने अुस समय के कानूनों का और कताअी-बुनाअी सम्बंधी सूक्ष्म बातों का विस्तृत बयान मिलता है। अूपर लिखे ग्रीक ग्रंथकारों ने भी हिंदुस्तान की कताअी-बुनाअी की अद्भुत कला का आश्चर्य से वर्णन किया है। लेकिन अिन ग्रंथों में भी हमें चरखे का जिक्र नहीं मिलता।

मुस्लिम काल

मैं जहांतक जानता हूं, अीसा की पहली शताब्दि से लेकर मुसलमानों के आक्रमणों तक के संस्कृत साहित्य में भी चरखे का जिक्र कहीं नहीं है। मुस्लिम शासन काल के हिन्दी साहित्य में हमें पहले-पहल चरखे का अुल्लेख मिलता है। संस्कृत में चरखे के लिये कोअी शब्द नहीं है। हिंदी में चरखे के लिये चरखा और रहटा ये दो शब्द हैं। देहात में ज्यादातर रहटा शब्द काम में लाया जाता है, चरखा शब्द खास कर शहरों में चलता है। फारसी चर्ख शब्द से चरखा बना है। चर्ख का अर्थ है, चक्र या पहिया। रहटा शब्द संस्कृत 'अरघट्ट' शब्द से निकला है। संस्कृत के चक्र शब्द से भी चरखा शब्द निकल सकता है। अिस शब्द के गाडी का पहिया आदि अनेक अर्थ होते हैं। लेकिन सूत कातने के चरखे के अर्थ में अिसका कहीं भी अुपयोग नहीं किया गया है। संस्कृत में अरघट्ट शब्द का अर्थ है, कुअें से पानी खींचने का रहंट। हिन्दी में रहंट का मुख्य अर्थ भी वही है। अर यानी पहिये के आरे। पानी खींचते वक्त रहंट के आरे खम्भों से रगड कर 'घट्ट घट्ट' (खटखट) आवाज करते हैं, अिसपर से 'अरघट्ट' शब्द पानी खींचने के रहंट के अर्थ में प्रचलित हुआ होगा। पाली भाषा में अरघट्ट के अर्थ में

चक्रमद्र शब्द भी कहींकहीं मिलता है। फिर भी संस्कृत या पाली में सूत कातने के अर्थ में अिन शब्दों का कहीं भी अुपयोग नहीं किया गया है। क्या अिससे हम यह अनुमान निकाल सकते हैं कि मुसलमानों के पहले हिंदुस्तान में चरखे का आविष्कार नहीं हुआ था?

यूरोप तथा अन्य देश

लेकिन अिसका निर्णय करने के पहले हिंदुस्तान के बाहर दूसरे देशों में चरखे का कहीं पता चलता है या नहीं यह हम देख लें। अीसा के पहले कहीं भी चरखे का जिक्र नहीं है; यह हम अूपर देख चुके हैं। यूरोप में १४ वीं शताब्दि में चरखा दाखिल हुआ। अुससे पहले यूरोप में सूत कातने का साधन सिर्फ तकली ही था। कोलंबस ने १४९२ में अमेरिका को खोज निकाला, अुस समय वहां कपास की खेती और कताअी-बुनाअी सर्वत्र प्रचलित थी, लेकिन वहां चरखा नहीं था, सूत तकली पर ही काता जाता था। जब यूरोपवाले अमेरिका जा बसे, तो वे अपने साथ वहां चरखे को ले गये। यूरोप में चरखे का प्रवेश मुसलमानों के द्वारा हुआ। १४ वीं शताब्दि के पहले भी अरब व्यापारियों का यूरोप के साथ व्यापार चालू था। यह व्यापार ज्यादातर हिंदुस्तान में बने सूती वस्त्रों का ही होता था। अरब व्यापारी हिन्दुस्तान से कपडा लेकर समुद्री और खुश्की रास्तों से अुसे यूरोप ले जाते थे। अिन रास्तों से बहुत प्राचीन काल से यानी सिकंदर के आक्रमण के भी पहले से हिन्दुस्तान और यूरोप के बीच व्यापार चलता था। यह सारा व्यापार अरब व्यापारियों के द्वारा ही होता था। अिसलिये यूरोप में १४ वीं शताब्दि में जो चरखा दाखिल हुआ, वह अरब वालों ने हिन्दुस्तान से ही प्राप्त किया होगा, अिसमें शक नहीं है। चूंकि मुसलमानों के आक्रमणों के पूर्व हिंदुस्तान में चरखे का कहीं जिक्र नहीं है और यूरोप में मुसलमानों के द्वारा ही चरखा दाखिल हुआ है, अिसलिये अरबवालों ने ही पहले-पहल चरखे का अविष्कार किया होगा, अैसा अनुमान निकालने का कुछ लोग प्रयत्न करेंगे, लेकिन वह गलत होगा। यह हम आगे दिखायेंगे।

डियन व्हील

चरखा जैसे अत्यंत शास्त्रीय कातने के यंत्र का आविष्कार वहीं हो
कता है, जहां कातने की कला बहुत ऊंचे दर्जे की होगी और जहां
देयों से लोग घर-घर कातने का काम करते होंगे। अरबस्तान सूत
तने का कभी केन्द्र नहीं था और आज भी नहीं है। वहां का ९०
तिशत प्रदेश केवल मरुभूमी है, जहां घास भी नहीं उग सकती। अरब
ा पश्चिमी किनारे का थोडासा हिस्सा कुछ अच्छा है, जहां मामूली फसलें
ती हैं। कातने के लिये कपास, अलसी या ऊन चाहिये। ये तीनों
ीजें अरब में नहीं होतीं। अर्थात् अिससे यह निश्चित है कि अरब में
तने का अुद्योग हो नहीं सकता। और अितिहास भी बताता है कि वहां
कसी जमाने में कातने का अुद्योग लोगों में चालू नहीं था। अिससे
ाफ जाहिर होता है कि अरब जैसे शुष्क प्रदेश में चरखे की खोज नहीं हुअी
। अिसलिये अब दूसरी बात यही रह जाती है कि अरबवालों ने
हिंदुस्तान से चरखे का ज्ञान प्राप्त किया होगा और वहां से वह यूरोप
ालों को हासिल हुआ होगा और बात भी वही है। यूरोप में १४ वीं
ताब्दि में जब चरखा दाखिल हुआ, तब वे चरखे को अिंडियन व्हील
Indian wheel) के नाम से ही पुकारते थे। हिंदुस्तान से चरखा
ाया गया था, अिसका यह प्रत्यक्ष प्रमाण है।

चीन और जपान

यूरोप, अमेरिका और मुस्लिम देशों के बारे में हमने देखा। अब
हमें देखना है कि चीन और जपान में चरखे का कब पता चलता है।
चीनवाले बहुत प्राचीन काल से कताअी की कला जानते थे। बौद्ध
काल से चीन और हिंदुस्तान का घनिष्ट संबंध हुआ और तब से अिन
दोनों देशों में विचारों का व थोडा बहुत व्यापार का भी आवागमन
चलता रहा है। चीन के अितिहास से पता चलता है कि ७ वीं शताब्दि
में कपास का पौधा शोभा के लिये वहां बगीचों में लगाया जाता था।
परन्तु १३ वीं शताब्दि के बाद ही चीन में चरखा दाखिल हुआ है, और

वह भी मुसलमानों के द्वारा ही दाखिल हुआ मालूम पडता है। मुसलमानों के पहले चीन में चरखे का पता नहीं है। चीन से वह जपान गया होगा।

चरखे का मूल स्थान भारत

ऊपर के विवरण से हम अिस नतीजे पर पहुंचते हैं कि चरखे का मूलस्थान भारत है और १२ वीं और १४ वीं शताब्दि में मुसलमानों के द्वारा वह यूरोप और चीन में दाखिल हुआ होगा। आठवीं सदी के शुरू में महम्मद बिन कासीम ने सिंध में मुसलमानों का राज्य कायम किया। ग्यारहवीं सदी की शुरू में सुल्तान महमुद गजनवी ने पंजाब पर मुसलमानों का अधिकार जमाया और अुसी सदी के अन्त में महम्मद गोरी ने पृथ्वीराज को हरा कर दिल्ली पर मुस्लिम अमल कायम किया। अिस तरह १२ वीं सदी में मुसलमानों का हिंदुस्तान के साथ घनिष्ट संबंध स्थापित हुआ। अुस समय हिंदुस्तान में चरखा प्रचलित था, और अुसे ही मुसलमानों ने यूरोप व चीन में दाखल किया होगा। मुसलमानों का हिंदुस्तान पर राज्य कायम होने के पहले भी अरबवालों का हिंदुस्तान के साथ व्यापारिक संबंध था; यह पहले ही हम देख चुके हैं। लेकिन अुन व्यापारियों ने चरखे को यूरोप में दाखिल किया होगा अैसा दिखाअी नहीं देता। हमें मानना होगा कि मुसलमानों के आक्रमण के समय हिंदुस्तान में चरखे का सर्वत्र प्रचार हो चुका था। कश्मीर से कन्याकुमारी तक और सिंध से आसाम तक के सभी प्रान्तों में घर-घर में चरखा चलता था और सूत काता जाता था। अिस विस्तृत प्रदेश में चरखे को अेक नित्य की कताअी का साधन बनाने के लिये कम-से-कम ८–१० सदियां लग गअी होंगी। अिसलिये अगर अरब व्यापारियों ने चरखे का प्रचार किया, अैसा हम मान लें तो १२ वीं शताब्दि में ही अुन्होंने चरखे का प्रचार क्यों किया, अिसका जवाब देना होगा। अीसा की ३ री ४ थी शताब्दि से ही अगर चरखा हिंदुस्तान में प्रचलित था तो व्यापारियों को १२ वीं शताब्दि के पहले ही अुसे यूरोप में ले जाना था, क्यों कि हिंदुस्तान से अुनका बहुत प्राचीन काल से व्यापार चलता था। लेकिन अिन व्यापारियों की पहुंच सिर्फ

हिंदुस्तान के बंदरगाहों तक सीमित थीं। अुन्हें सिर्फ कपडे से मतलब था। कपडा किस तरह बनता है, अुसके बनाने में कौन से औजार काम में आते हैं, यह जानने की व्यापारियों को जरूरत नहीं होती। अगर ये अरब के व्यापारी स्वयं कपडे का अुत्पादन करना चाहते तो शायद अिस बारीकी में अुतरते। लेकिन अुनका सिर्फ व्यापार से मतलब था, अिसलिये अिन व्यापारियों द्वारा चरखे का ज्ञान हिन्दुस्तान से बाहर नहीं गया, यह साफ है। लेकिन जब १२ वीं सदी में पंजाब पर मुसलमानों का राज कायम हुआ, तब मुसलमान पंजाब में बस गअे और अुनका हिंदुस्तान के सामाजिक जीवन में प्रवेश हुआ। हिंदुस्तान के कला-कौशल्य और रस्मोरिवाजों से अुनका परिचय हुआ और अिस तरह वे चरखे के संपर्क में आये। अभी तक अिन मुसलमानों को कातने का अेक साधन तकली ही मालूम था। हिन्दुस्तान में बस जाने के बाद कअी लोगों ने अपनी जीविका के लिये चरखा चलाना शुरू किया होगा, और तब सूत कातने के लिये चरखा तकली की अपेक्षा कितना अुपयोगी है, अिसका पता चला होगा। अिस तरह अिस अनोखे और महान अुपयोगी कातने के औजार की ख्याती सारे मुस्लिम राष्ट्रों में फैल गअी होगी और साथ साथ अुसका प्रचार भी हो गया होगा। थोडे ही समय में मुसलमानों की विजयिनी सेनाओं के साथ यह हिंदुस्थान का चरखा भी यूरोप और चीन में पहुंच गया होगा।

संस्कृत साहित्य और चरखा

जब कि संस्कृत साहित्य में चरखे का कहीं भी अुल्लेख नहीं है, तब मुसलमानों के आगमन के पहले वह हिंदुस्तान में सर्वत्र प्रचलित था, अिसका क्या सबूत है, अैसी अेक शंका पैदा होती है। हमें यह निश्चित मालूम है कि यूरोप में १४ वीं शताब्दि में चरखा दाखल हुआ अिसलिये अुससे पहले ही वह हिंदुस्तान में चालू होगा, यह साफ है। हिंदुस्तान से यूरोप तक चरखे का प्रचार होने में अुस समय के आवागमन के साधनों की ओर नजर डालने पर कम से कम २०० साल लग गये होंगे अैसा

अगर हम मानें तो १२ वीं शताब्दि में हिंदुस्तान में चरखा चालू था यह निश्चित हो जाता है। हिंदुस्तान में सर्वत्र चरखे का प्रचार होने के लिये सात आठ सौ साल लगे होंगे, अैसा हम मान सकते हैं। असि लिये ४ थी या ५ वीं शताब्दि के लगभग हिंदुस्तान में चरखा औजाद हुआ होगा, अैसा कह सकते हैं। चरखे का काल निश्चित करने के लिये खाली अंदाज से ही काम लेना पड रहा है, यह दुःख की बात है। लेकिन जब कि दूसरा कोअी साधन हमें अुपलब्ध नहीं है, अैसी हालत में अनुमान का सहारा लेने के सिवाय दूसरा रास्ता नहीं है।

अीसा के बाद जो संस्कृत साहित्य निर्माण हुआ, अुसका समाज के जीवन से कोअी संबंध नहीं था। कालीदास, भवभूति, श्रीहर्ष, बाण भट्ट आदि महा कवियों ने अुस समय के राजाओं के जीवन को ही अपना लक्ष्य बनाया। समाज की सर्वसामान्य जनता की आशा-आकांक्षा अुनके रीति-रिवाज, अुनके अुद्योग धंधे, अुनके जीवन की घटनाओं को संस्कृत साहित्य ने अछूतों की तरह दूर ही रखा। यही कारण है कि हिंदुस्तान के सामाजिक जीवन का चरखा अेक प्रमुख अंग होते हुअे भी अुसका अुसमें पता नहीं चलता। संस्कृत, पाली और प्राकृत साहित्य का चरखे के दृष्टि से अध्ययन होना जरूरी है। भारत के प्राचीन साहित्य में यदि हम चरखे का पता लगा सकें तो वह अेक महत्व की खोज होगी। फिर भी भाषाशास्त्र की दृष्टि से अुसका कुछ पता लगाने की हम कोशिश करते हैं।

चरखे के प्रतिशब्द

हिंदुस्तान में चरखे के लिये रहंटा और चरखा ये दो शब्द चलते हैं, यह पहले हम देख चुके है। हिंदुस्तान की दूसरी भाषाओं में चरखे के लिये कौन से शब्द चालू हैं, अिसे हम देख लें। वैसे १९२० के भारतीय राजकारण में महात्मा गांधी का प्रवेश होने के बाद और राष्ट्रीय आंदोलन का चरखा यह अेक प्रमुख अंग होने के कारण आज हिंदुस्तान

की सभी भाषाओं में चरखा शब्द प्रचलित हो गया है। अिसके अलावा भी दूसरे जो शब्द चरखे अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, वे नीचे दिये हैं—

प्रान्त	भाषा	शब्द
पंजाब	पंजाबी	चरखा
राजस्तान	हिंदी	चरखा, रहटा
युक्तप्रांत	,,	चरखा, रहटा
हिंदी मध्यप्रान्त	,,	चरखा, रहटा
बिहार	,,	चरखा, रहटा
बंगाल	बंगाली	चरखा, अरट, अट
मणिपुर	आसामी	रामुअी
अुडिसा	अुडिया	अरट
महाराष्ट्र	मराठी	चरखा, रहाट
गुजरात	गुजराती	चरखा, रेंटियो
कर्नाटक	कानडी	राटि
आन्ध्र	तेलुगु	रातम्
तामिलनाड	तामिल	राट्
केरल	मलयालम्	राट्

निजाम राज्य के अुत्तरी जिलों में, जहां मराठी और तेलुगु भाषाओं की सरहदें मिल जाती हैं, रहाटनम् और गिरका ये दो शब्द प्रचलित हैं। पंजाब की तरफ १८ वीं शताब्दि में 'घरका' शब्द भी चलता था, अैसा कुछ अंग्रेज लेखकों के विवरण से पता चलता है।

प्रतिशब्दों का नतीजा

अिन सारे शब्दों की छानबीन करने पर हम देखते हैं कि ये 'चरखा' और 'रहटा' अिन दो शब्दों के ही थोडे बहुत बदले हुअे हैं। तमिळ, तेलुगु और कनडी अिन द्रविड भाषाओं ने रहटा से ही अपने शब्द बनाये हैं, यह खास ध्यान देने की बात है।

और घरका ये चरखा शब्द पर से बने हुअे दीखते हैं। अिन शब्दों से हम कह सकते हैं कि चरखे का आविष्कार अुत्तरी हिंदुस्तान में ही हुआ होगा। दक्षिण भारत में अगर चरखे की खोज हुअी होती तो तमिळ, तेलुगु आदि भाषाओं में कोअी दूसरा शब्द जरूर होता। लेकिन वहां के शब्द भी संस्कृत के अरघट्ट या हिंदी के रहटा शब्द से ही निकले हैं। अिसीसे दूसरी बात यह मालूम होती है कि पहले रहटा शब्द प्रचलित था। चरखा शब्द बाद में प्रचलित हुआ। नहीं तो द्रविड भाषाओं में चरखा शब्द से निकले हुअे शब्द भी मिलने चाहिये थे। केरल में चरखे के लिये खादी के आंदोलन के पहले राट् शब्द था। हाल में ही वहां चरखा शब्द चालू हो गया है। चरखा शब्द फारसी चर्ख शब्द से निकला है, यह हम पहले ही देख चुके हैं। अिसलिअे मुसलमानों के आगमन के बाद ही यह प्रचलित हुआ यह निश्चित है। रहटा शब्द चरखा शब्द से प्राचीन है, यह भी हम निश्चित कर चुके हैं। अिसलिये मुसलमानों के आगमन के पहले हिन्दुस्तान में चरखा चालू था यह जो हम पहले सिद्ध कर चुके हैं, वह अिससे साबित हो जाता है। 'चरखा' फारसी शब्द है, अिसलिये फारस से चरखा हिंदुस्तान में आया होगा, -अैसे अनुमान के लिये भी अिसमें कोअी जगह नहीं रह जाती। और जो बात हम अरबस्तान के बारे में देख चुके हैं, वही फारस को भी लागू होती है। वह भी अरब के समान ही वीरान मुल्क है और वहां कातने के रेशे भी बहुत कम होते हैं और कातने की कला का वहां अभीतक अभाव ही रहा है। हिंदुस्तान में आने के बाद ही मुसलमानों ने 'रहटा' को अपनी भाषा में चरखा नाम दिया होगा। खास फारसी भाषा में 'चर्ख' का अर्थ पहिया है, कातने का यंत्र नहीं।

आधार-सूची

(पुस्तक में दिये गये क्रम से लेखों के आधार नीचे दिये हैं।)

1-2. The Effect of Storage on Indian Cottons by Nazir Ahmad and A. N. Gulati—Indian Central Cotton Committee Technological Bulletin.

3. I. C. C. C. Tech. Bull.

4. Wax content and feel of Cotton, I. C. C. C. Tech. Bull.

5. R. L. N. Iyengar, The Cotton Growing Review, 1948

6. The Indian Textile Journal, 1948

7. A. N. Gulati—The Indian Cotton Growing Review, Apr. 1947

8. I. C. C. C. Tech. Bull.

9. The Indian Textile Journal, 1945

10. The Indian Textile Journal, Sep. 1945

11. Effect of Twist on Cotton yarn by R. Rama Iyar, The Indian Textile Journal, Nov. 1947.

12. Double Standard in clothing by Dr. W. Schweisheimer—The Indian Textile Journal, May 1947.

13. Clothes that Breath by Dr. W. Schweisheimer—The Indian Textile Journal, Nov. 1947

14. Intolerance of Skin to Textiles by Dr. W. Schweisheimer—The Indian Textile Journal, Oct. 1945

15. Some fundamental characteristics of Cotton by S. Venkatram—The Indian Textile Journal, Dec. 1948

16. Textile Testing.

खादी-विज्ञान का साहित्य

१. घरेलू कताओी की आम बातें

२. घरेलू कताओी की आम गिनतियाँ

३. कताओी गणित

प्रकरण १, २, ३, ४

४. कताओी प्रवेश

५. सरंजाम परिचय

६. किसान चरखा

७. खड़ा चरखा

८. मध्यम पिंजन

९. सुलभ पूनी

१०. बुनाओी

अखिल भारत चरखा संघ, सेवाग्राम

पशु एवं मनुष्य-शक्ति-संचालित

सुधरे हुए खेती औजार

चंदनसिंह

तीसरी बार : २,०००
दिसम्बर, १९५८
मूल्य : पचास नये पैसे
(आठ आना)

प्रकाशक :
अ० वा० सहस्रबुद्धे,
मंत्री, अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ,
वर्धा (बंबई-राज्य)

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, काशी

निवेदन

आज की दुनिया यंत्रों के पीछे लगी है। जहाँ देखो, वहाँ ट्रैक्टर के ही गुणगान होते हैं। नयी ईजाद ट्रैक्टर से चलनेवाली बड़ी-बड़ी मशीनें नित्य हो रही हैं। सरकारें और विशेषज्ञ कृषि का यंत्रीकरण करने में पूरी ताकत से जुटे हैं। इस यंत्र-युग में ग्रामोद्योग की बात करना प्रवाह के विपरीत चलने जैसी बात है। प्रवाह के विपरीत चलना आसान नहीं होता, इसे सभी जानते हैं। जैसी शोषण-विहीन समाज-रचना हम करना चाहते हैं, वह विकेंद्रित अर्थ-व्यवस्था से ही हो सकती है। विकेंद्रित अर्थ-व्यवस्था का आधार बैल-शक्ति है। इसलिए हमें सारी रचना गो-केंद्रित करनी होगी। यही कारण है कि मनुष्य एवं पशु-शक्तियों से संचालित औजारों के प्रयोग में हम लगे हैं।

सन् १६५३ से कृषि-औजार-सुधारों के प्रयत्न किये जा रहे हैं। श्री चंदनसिंहजी और श्री गोविन्द रेड्डीजी इस काम के लिए देशभर में घूम आये हैं। जहाँ से जो औजार लाना आवश्यक समझा, ले आये हैं। श्री बालाप्रसादजी धूत, देगलूर, जि० नांदेड़, हैदराबादवालों ने अपने वहाँ औजार-सुधार के काफी प्रयत्न किये हैं। देगलूर के आसपास किसानों में काफी मात्रा में सुधरे औजार प्रचलित हुए हैं और उनसे खेती में भी तरक्की हुई है। प्राणलाल भाई कापड़िया, कोरा ग्रामोद्योग केंद्र, बोरीवली, बंबई को भी इस काम में काफी दिलचस्पी रही है। वे जापान से पशु एवं बैल-शक्ति से चलनेवाले कितने ही औजार लाये हैं। श्री डी० एन० खेरडेकर, असिस्टेंट इंजीनियर, खेती-विभाग, मध्यप्रदेश सरकार ने भी काफी औजार बनाये हैं। इनके औजारों में लोहा अधिक रखने की नीति रही है। श्री रेड्डीजी सेवाग्राम-आश्रमवासी हैं। आश्रम का विचार ऋषि-खेती को बढ़ावा देने का है। इसलिए मनुष्य-शक्ति से चालित औजारों में इन्होंने विशेष रूप से सुधार किये हैं। इन सबकी सहायता से ता० २, ३, ४, फरवरी १६५४ को कृषि-औजारों की प्रदर्शनी मगनवाड़ी, वर्धा में हुई थी। उसमें जाँच के बाद निम्न औजार उपयोगी साबित हुए हैं।

१. कर्नाटक-(१) धान्य पावड़ी अनाज बटोरने की, (२) बारती सुधरी हुई लकड़ी के गट्ठे सहित।

२. जापानी—(१) लोहे की दतारी, (२) चौकोने छेदवाला फावड़ा (३) एक बैल का नागर, (४) धान के हाथ गुड़ाई औजार।

३. सौराष्ट्र—(१) गुजराती बक्खर।

४. देगलूर-प्रयोग—(१) नागर डौरा, (२) चाड़ा, (३) नागर।

५. मध्य-प्रदेश सरकार-प्रयोग—(१) कंपोस्ट चलनी, फाँस बदलनेवाला बक्खर।

६. सेवाग्राम-प्रयोग—(१) सुधरा-डवरा, (२) लाइनें बनाने की लोहे की दतारी, (३) सेवाग्राम बक्खर।

७. पीपरी के नये प्रयोग—(१) दाँतेवाला हँसिया, (२) धारवाला हँसिया, (३) उड़ाने का पेटी पंखा, (४) सर्वांगी नागर, (५) दो चाड़ी तिफन, (६) चक्रवाला हाथ डौरा, (७) एकबैली नागर, (८) एकबैली बखर।

बहुत से अन्य औजार बचे हैं, जिन पर जाँच चालू है।

जगह-जगह से औजारों के नमूनों की माँग आ रही है। पीपरी-वर्धा में नमूने तैयार करवाने की और नमूने बनाने-सिखाने की व्यवस्था की गयी है। इस सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार किया जा सकता है। कितने किसान सुधरे औजारों को अपनाते हैं, इसी पर औजारों की सफलता मानी जायगी।

जो भाई ऐसे प्रयोगों में रुचि रखते हों, उन सबके सहयोग की हम अपेक्षा रखते हैं। वे अपना पता व प्रयोगों की जानकारी देंगे, तो उससे लाभ उठाने का प्रयत्न किया जायगा।

—राधाकृष्ण बजाज
संचालक, अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ,
कृषि गो-सेवा केंद्र, पीपरी-वर्धा

दूसरे, इसका उपयोग फसलों की मड़ाई में अच्छा होता है। इसे एक बैल-जोड़ी से एक आदमी के द्वारा चलाया जाता है। जिसे सौ मन की पैरी अथवा पाथ पर चलाने के लिए कम-से-कम आठ जोड़ी बैलों की जरूरत होती है, उस पर दो बैलों द्वारा इस रोलर से आधे समय में काम हो जाता है। इस यंत्र से आठ घंटों में १ सौ मन ज्वार की मड़ाई की जा सकती है; यानी आठ जोड़ी बैलों का काम एक जोड़ी से ही हो जाता है।

इसकी कीमत ९०) नब्बे रुपये है। पचासों साल काम देता है। एक हजार की जनसंख्यावाले देहात में तीन या चार रोलर हों, तो फसलों की मड़ाई का काम आसानी से हो सकता है।

वैसे यह कोई नया आविष्कार नहीं है। सेवाग्राम-आश्रम के श्री गोविन्द रेड्डीजी इसे कर्नाटक से लाये हैं। वहाँ ज्वार की मड़ाई के लिए इसका आम उपयोग होता है। पंजाब में भी चना, गवार, बाजरी आदि की मड़ाई के लिए इसका उपयोग करते हैं। लेकिन हमारे इस प्रान्त के लिए यह नया ही है। ४-५ सालों से हम लोग सर्व-सेवा-संघ की खेती में इसका उपयोग कर रहे हैं। हमारा यह अनुभव है कि इसके द्वारा काम काफी सरलता से कम खर्च तथा कम समय में होता है।

---

२. अनाज उड़ाने का पंखा
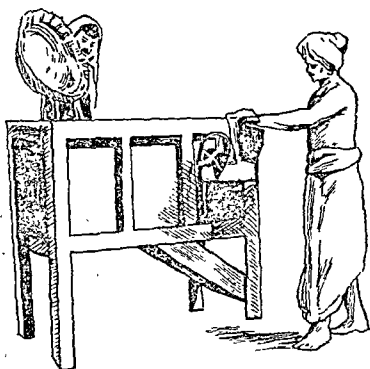
मड़ाई की हुई फसलों को उड़ाने के लिए यह पंखा बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है।

यदि गौर से देखा जाय, तो मड़ाई की हुई फसलों को उड़ाने (बरसाने) का काम बड़े ही महत्त्व का है। अच्छे-अच्छे जानकारों से भी कभी-कभी भारी गलतियाँ हो जाती हैं और बहुत-सा अनाज भूसे में मिल जाता है; क्योंकि यह काम हवा पर निर्भर है। हवा कभी भी समान गति से नहीं चलती। कभी तेज झोंकों के रूप में चलती है और बारीक अनाज के दानों को भी भूसे के साथ उड़ा ले जाती है। कभी-कभी इतनी मंदगति से चलती है कि किसान को घंटों टोकरी लिये खलिहान में खड़ा रहना पड़ता है। कभी-कभी मड़ाई की हुई फसलें हवा न होने से कई-कई रोज खलिहानों में ही पड़ी रहती हैं, जिसमें चोरी तथा बारिश का भय किसान को बना रहता है। हवा की यह कमी किसानों को बहुत ही खलती है, परन्तु लाचारी से सब सहना पड़ता है।

किसानों की इन सब छोटी-मोटी कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए आजकल कई तरह के पंखे हवा की इस कमी को दूर करने के लिए बनाये गये हैं। इनके द्वारा मड़ाई की हुई फसलें आसानी से उड़ायी जा सकती हैं। हमारे अनुभव में उन सारे पंखों में यह पंखा अधिक उपयोगी साबित हुआ है।

इन मशीनों के अंदर पंखे लगे रहते हैं। बाहर से जब पंखे घुमाये जाते हैं, तब हवा पैदा होती है और जब इसमें मड़ाई की हुई फसलों का दाना-भूसा डाला जाता है, तो वह पंखों की हवा के द्वारा साफ होकर अलग-अलग गिरता जाता है।

इस मशीन के द्वारा ४-५ आदमियों की सहायता से दिनभर में ढाई-तीन सौ मन अनाज की सफाई सुगमता से की जाती है, ऐसा हमारा अनुभव है। इसकी कीमत १६०) एक सौ साठ रुपये है। यदि देहातों के बड़े-बड़े किसान अपने यहाँ इन पंखों को रख लें और सहकारी पद्धति से काम चलायें या किसानों को किराये पर दें, तो तीन-चार पंखों से गाँवभर का काम हो सकता है।

२. सर्वांगी नागर
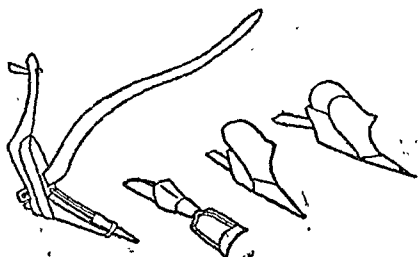
१. हरिस के छेद आधा इंच मोटे।
२. हरिस ९ फुट लंबी, ३ इंच चौड़ी, २ इंच मोटी।
३. हल साढ़े ३ फुट लंबा, ५ इंच चौड़ा, ५ इंच मोटा।
४. खूँटी ६ इंच लंबी, १ इंच मोटी।
५. मोढ़िया (नं० १) २ फुट लंबा, ४ इंच चौड़ा।
६. फार १ फुट लंबा, ३ इंच चौड़ा, २ सूत मोटा।
७. फार की पकड़ के लिए ईड़ी (सेंबी)।
८. मोढ़िया (नं० २) १७ इंच लंबा, ३ इंच मोटा।
९. फाँस ९ इंच लंबी, ३ इंच चौड़ी, डेढ़ सूत मोटी।
१०. २ नं० मोढ़िया लकड़ी का भाग।
११. ,, ,, सामने का फार।
१२. मिट्टी पलटने का पंखा।

यह हिंदुस्तान के उत्तरी भागों में बड़ी आसानी से चलाया जा सकता है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, बिहार, बंगाल, आसाम और उड़ीसा आदि प्रान्तों में इसका अच्छा उपयोग हो सकता है, क्योंकि सभी प्रान्तों में आजकल चलनेवाले हलों को मद्देनजर रखते हुए नागर का निर्माण किया गया है।

बनावट :

सर्वांगी नागर सीधा-सादा, सरल व लकड़ी का बना होने से किसान आसानी से गाँव में बढ़ई, लुहारों द्वारा बनवा सकते हैं। इसमें फिलहाल अलग-अलग कामों के लिए चार मोढ़िये फिट किये गये हैं, जिनका काम निम्न प्रकार है :

मोढ़िया नं० १ : यह मोढ़िया गहरी जोताई (नागरन) के उपयोग में आता है। बड़ी आसानी से ६ इंच से ९ इंच तक गहरा जाकर जमीन को चीरता हुआ चलता है। दूसरे हलों की अपेक्षा इसमें बैलों को कम जोर लगाना पड़ता है। इसलिए मामूली बैल-जोड़ी भी ४-६ घंटे काम कर सकती है। इसके फाल की रचना कुछ विशेष प्रकार की होने से पुराने नागरों की अपेक्षा जमीन में कुछ अधिक चौड़ी और चौरस नाली (चर) बनाती है। इससे जमीन एक समान गहरी और चौड़ी जोती जाती है। किसी भी चालू जमीन को दो बार उलटी-सीधी जोतने से पूरी मशक्कत हो जाती है, जब कि पुराने नागर से कम-से-कम चार-पाँच बार नागरन करने पर होती है, क्योंकि उसकी फार नुकीली होने से जमीन में त्रिकोणाकृति व कम चौड़ी नाली-सी बनती है।

मोढ़िया नं० २ : यह मोढ़िया किसानी कामों के लिए बहुत जरूरी है। यह खड़ी फसलों में निकाई व गोड़ाई (इण्टर कल्टिवेशन) करने के लिए उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसके द्वारा एक आदमी और एक बैल-जोड़ी दिनभर में एक एकड़ तक फसल की गोड़ाई आसानी से कर सकते हैं। गोड़ाई के साथ-ही-साथ पौधों की जड़ों पर मिट्टी भी चढ़ती जाती है, जो पौधों के लिए, खासकर ऊँचे बढ़नेवाले पौधों के लिए, बहुत जरूरी है। फसलों को पानी देने के बाद थोड़ी सूखने पर इसके द्वारा गोड़ाई करके छोड़ देनी चाहिए। यह तीन-चार इंच तक मिट्टी को भुरभुरी बनाकर नमी को अधिक दिनों तक कायम रखता है। इस तरह से खड़ी फसलों में इसे बार-बार चलाकर मिट्टी को कार्य-क्षम स्थिति में रखना अत्यन्त जरूरी है।

मोढ़िया नं० ३ : यह मोढ़िया भी वैज्ञानिक दृष्टि से बहुत

उपयोगी है। फसलें कट जाने पर यदि खेत में कुछ नमी बाकी हो, तो यह मोढ़िया मिट्टी को पलटने का काम बड़ी खूबी के साथ करता है, जिससे कटी फसलों के बचे हुए डंठल व गिरी हुई पत्तियाँ आदि कचरा मिट्टी के नीचे दबकर खाद के रूप में परिणत हो जाता है और सूर्य की किरणों तथा हवा का पूरा लाभ जमीन को मिलता है।

मोढ़िया नं० ४ : यह मोढ़िया रिजेन हल को मद्देनजर रखते हुए बनाया गया है। इससे हर किस्म के सारे (वाफे) आसानी से बनाये जाते हैं। खासकर गन्ना बोने की नालियाँ इसके द्वारा समान अंतर पर और काफी गहरी बनती हैं।

नागर से होनेवाले फायदे : वैज्ञानिक ढंग से खेती करने के लिए आज किसानों को तीन-चार प्रकार के नागर व बखर रखना जरूरी है, जो छोटे-छोटे किसानों के लिए आर्थिक दृष्टि से किसी भी हालत में लाभदायक नहीं है। क्योंकि कई औजार ऐसे भी होते हैं, जिनका उपयोग सालभर में कुछ घंटों के लिए ही होता है और उनकी कीमत ३०-३५ रुपये तक होती है। जैसे, गन्ने की खेती में नालियाँ बनाने का नागर।

इस नागर का काम सर्वांगी नागर में मोढ़िया नं० १ फिट करके पीछे की ओर हलके निचले भाग में गन्ने के छोटे-छोटे टुकड़े बाँध दीजिये या दोनों ओर दो लकड़ी की पट्टी लगा दीजिये। ऐसा करने से जितनी चौड़ी नालियाँ चाहिए, आसानी से बनायी जा सकती हैं। इसी प्रकार इस एक ही नागर से कई किस्म के काम अलग-अलग मोढ़िये फिट करके किसान ले सकता है। हर काम के लिए अलग-अलग औजार रखने की जरूरत नहीं। इसलिए यह नागर किसानों के लिए आर्थिक दृष्टि से बड़े फायदे की चीज है। इसकी कीमत ४०) चालीस रुपये है।

---

४. सौराष्ट्र का बक्खर
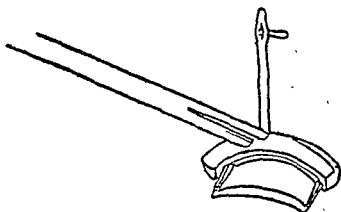
यह बक्खर खेती-काम के लिए कुछ अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। दूसरे बक्खरों की अपेक्षा इसमें एक खास सुविधा तो यह है कि इसके जानकुड़ आवश्यकता के अनुसार आगे-पीछे कम-ज्यादा किये जा सकते हैं।

अक्सर देखा गया है कि कड़ी जमीन में बक्खर कुछ उचकते हुए अथवा झटका खाते हुए चलता है, जो बैलों के लिए काफी कष्टदायी तो होता ही है, साथ ही खोड़ तथा जानकुड़ों के टूटने-फूटने का भय भी बना रहता है। ऐसे समय में यदि जानकुड़ों को कुछ छोटा कर लिया जाय, तो बक्खर के उछलते हुए चलने का दोष एकदम कम हो जाता है। इसी प्रकार जैसे-जैसे जमीन मुलायम और पोली होती जाती है, वैसे-वैसे ही जानकुड़ लम्बे किये जा सकते हैं। जानकुड़ों को आगे-पीछे कम-ज्यादा करने का यह सुधार किसानों को विशेष पसन्द आया है।

दूसरे इसका खोड़ चित्र में दिये अनुसार कुछ गोलाई लिये हुए होता है, ताकि बक्खर से खुदनेवाली मिट्टी व घास-फूस आदि कचरा खोड़ में न अड़कर आसानी से निकलता रहे।

---

५. सेवाग्राम वक्खर
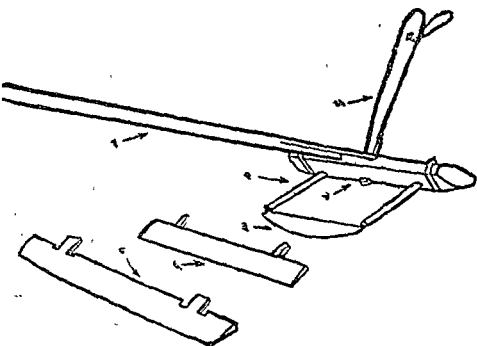
१. हरिस १० फुट लंबी, ४ इंच मोटी।

२. जानकुड़ १० इंच लंबे, ३/४ इंच मोटे लोई के।

३. फाँस तीन १, २७, ३६ इंच लंबी, ३ इंच चौड़ी, २ सूत मोटी।

४. खोड़ २७ इंच लंबा-चौड़ा, ३ इंच मोटा।

इस वक्खर को श्री रेड्डीजी ने श्री गांधी आश्रम, सेवाग्राम में खुद प्रयोग करके काफी छानबीन के बाद बनाया है। इसकी बनावट और विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं :

बनावट :

इसके निम्न चार मुख्य हिस्से हैं :

१. खोड़

२. जानकुड़

३. फाँस

४. हाँड़ी

१. खोड़ : यह बबूल की लकड़ी से बनाया गया है। इसकी

लंबाई २७ इंच और चौड़ाई १० इंच रखी गयी है। इसमें जानकुड़ बैठाने के लिए छेद सीधे खोदे गये हैं। चूँकि सीधे छेद करने से खोड़ के फटने का भय नहीं रहा, लोहे के जानकुड़ होने से जानकुड़ों को ही झुका लिया जाता है। इसलिए छिद्रों को तिरछे खोदने की जरूरत नहीं रहती। तिरछे छेदों की अपेक्षा सीधे छिद्र शीघ्र और सुगमता से खोदे जाते हैं।

२. **जानकुड़ :** यह लोहे के बनाये गये हैं। उनकी लंबाई खोड़ के छिद्रों से अलग (अलावा) १० इंच रहती है। यह जानकुड़ छिद्रों के पास से सामने की ओर झुकाये गये हैं। इनके आखिरी छोर पर जहाँ फाँस बैठायी जाती है, कुछ चौड़े करके चौरस (फाँस के कान बैठ सकें उतनी) मोड़कर गड्ढेनुमा बना लिये गये हैं। ऐसा करने से फाँस के कान उसमें अंदर फिट हो जाते हैं। इसलिए इसमें ईड़ी की जरूरत नहीं। (ईड़ी जानकुड़ों को जमीन में घुसने से रोकती है।) बल्कि छोटी-बड़ी २-३ तरह की फाँस इनमें फिट हो जाती हैं। अक्सर किसान को छोटी-बड़ी फाँस के लिए अलग-अलग बक्खर रखने पड़ते हैं।

इसके जानकुड़े लोहे के होने की वजह से तीन किस्म की लंबाई वाली फाँस इसमें आवश्यकता के अनुसार फिट करके एक ही बक्खर से तीनों प्रकार का काम लिया जाता है।

३. **फाँस :** इस बक्खर के लिए ३ फाँस लगती हैं, जिनकी लंबाई क्रमशः १८, २७, ३६ इंच होती है। चौड़ाई ३ से ४ इंच रखी जाती है। साधारण फाँसों से उनकी बनावट कुछ भिन्न प्रकार की होती है। चित्र में देखिये, इनका इस्तेमाल इस प्रकार किया जाता है। १८ इंच वाली फाँस फसल काटने के बाद की पहली बखरनी (नर कसनी) के काम आती है, क्योंकि उस वक्त जमीन काफी सख्त होती है। लंबी फाँस लगाने से बैलों को खींचने में काफी जोर लगाना पड़ता है और बक्खर भी ठीक से नहीं लग पाता। दूसरी २७ इंच की फाँस पहली बखरनी या जोत के बाद से बोने तक की सारी जोतों में काम आती है। तीसरी ३६ इंच की फाँस बोते वक्त तिफन के पीछे की बखरनी के काम आती है।

४. डाँड़ी : इस बक्खर में एक ही डाँड़ी (हरिस) लगायी जाती है, जो १० फुट लंबी होती है। इस डाँड़ी को आधे तक चीरकर दो भाग कर लिये जाते हैं। ये दोनों भाग खोड़ में अलग-अलग फिट किये जाते हैं। इस प्रकार एक ही डाँड़ी दो डाँड़ियों का काम करती है और दोनों बैलों पर बक्खर खींचने का समान जोर पड़ता है। डेढ़ डाँड़ीवाले बक्खर से यह ज्यादा निर्दोष सिद्ध हुई है।

इसमें लकड़ी के जानकुड़ और ईड़ी न होने की वजह से यह जमीन में अधिक गहराई तक जाता है और काफी हलका चलता है। मामूली बैल-जोड़ी भी ४-६ घंटे काम करके ढाई-तीन एकड़ तक बखरन कर लेती हैं।

इस बक्खर से मुख्य फायदा तो यही है कि किसान अपना सारा काम इस एक से ही कर लेता है, जब कि आज उसे तीन बक्खर रखने पड़ते हैं।

सामान्य बक्खरों की अपेक्षा यह मिट्टी को अधिक भुरभुरी और मुलायम बनाता है, जिसकी वजह से फसल निकलने तक जमीन में नमी कायम रहती है।

---

६. तिफन व चौफन
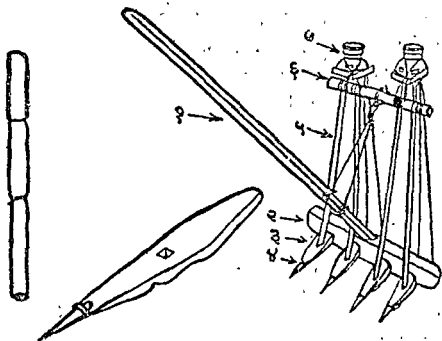
१. हरिस ९ फुट लंबी, ढाई इञ्च मोटी।

२. खोड़ साढ़े चार फुट लंबा, ९ इञ्च चौड़ा, साढ़े तीन इञ्च मोटा।

३. दाँत २५ इञ्च लंबा, ढाई इञ्च चौड़ा, २ इञ्च मोटा।

४. फार ६ इञ्च लंबा, पौने दो इञ्च चौड़ा, २ इञ्च मोटा।

५. नली ढाई फुट लंबी बाँस की, १ इञ्च मोटी।

६. डंडी दोनों चाड़ों को बाँधने की लकड़ी।

७. चाड़ा बीज बोने का साधन।

यह बीज बोने का एक उत्तम साधन है, जो दक्षिण भारत के कई प्रांतों में इस्तेमाल किया जाता है। इसके द्वारा दो से लेकर तीन-चार-पाँच तक कतारें एक साथ बोयी जाती हैं। एक बैल-जोड़ी इसके द्वारा चार-छह घंटों में आसानी से तीन-चार एकड़ जमीन की बोआई कर लेती है।

तिफन से बोआई की हुई फसलों की निकाई, गुड़ाई डौरा, दुंडा आदि औजार चलाकर कम खर्च और कम समय में आसानी से की जा सकती है।

भारतवर्ष के अधिकांश हिस्सों में हाथ से फेंककर बीज बोने की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है, जो इस युग के लिए वैज्ञानिक दृष्टि से किसी भी सूरत में ठीक नहीं कही जा सकती। क्योंकि इस तरीके से बीज बोने में एक तो बीज अधिक लगता है, दूसरे कहीं-कहीं अधिक पड़ने से असमान उग आता है, तीसरे उसे समान करने के लिए उखाड़कर फेंकने का खर्च उठाना पड़ता है। चौथे इस तरह से बोयी हुई फसलों की निकाई-गुड़ाई किसी डोरा, डुरडा आदि औजार चलाकर नहीं की जा सकती। इसी प्रकार से अनेक दोष इस पद्धति में भरे पड़े हैं।

इसलिए बीज बोने के लिए सुलभ तिफन और सुलभ चाड़े का उपयोग करना चाहिए। वैसे तो और भी कई तरह के सीडड्रील (बीज बोने के यंत्र) निकले हैं। लेकिन उनमें पहिये आदि लगे रहने के कारण वे ठीक से काम नहीं देते। खासकर खरीफ की फसलों में इनका कोई उपयोग नहीं हो सकता। क्योंकि वह समय वर्षा का होने से अक्सर खेत की मिट्टी काफी गीली रहती है, जो यंत्रों के पहियों (चक्कों) को लिपट-कर उनका चलना बंद कर देती है। इसलिए तिफन ही हमारे लिए उपयोगी साधन है, ऐसा मानकर उसीमें सुधार करना चाहिए।

---

७. दो चाड़ोंवाली तिफन
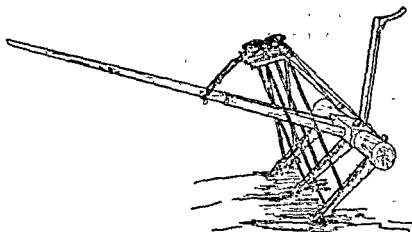
इस तिफन में बीज के साथ ही साथ खाद बोने की व्यवस्था भी जोड़ी गयी है। ऐसा करने से खाद का पूरा-पूरा उपयोग पौधों के लिए ही होता है। दूसरे खर-पतवारों को खाद का लाभ न मिलने से वह नहीं पनपने पाते और कम खाद से भी अच्छी फसल उगायी जा सकती है।

चित्र में बताये अनुसार इस तिफन में आगे-पीछे दो चाड़ बाँधे गये हैं, जिसमें आगेवाले चाड़े से बीज बोया जाता है और पीछेवाले से खाद बारीक पीसकर बोयी जाती है। यानी जमीन में पहले बीज पड़ता है और बीज के ऊपर मामूली मिट्टी आने पर ऊपर खाद पड़ती है। इस प्रकार खाद का पूरा-पूरा उपयोग हो जाता है और फसल भी अच्छी आती है।

खाद की समस्या को हल करने के लिए इस यंत्र का काफी हद तक उपयोग करना चाहिए।

———

८. सुलभ चाड़ा
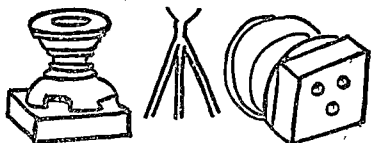
इस चाड़े को श्रीयुत बालप्रसादजी ने बड़ी खोज के साथ बनाया है। इसके निर्माण से पेरनी (बोआई) का काम काफी सरल हो गया है। कैसा भी नौसिखिया आदमी इसके द्वारा अच्छी तरह से बोआई कर लेता है, जब कि पुराने चाड़े से पेरनी करने के लिए काफी चतुर और अभ्यस्त आदमी की जरूरत होती है। आजकल ऐसे अभ्यस्त आदमी किसी भी छोटे-बड़े गाँव में ५, ७, १० से अधिक न मिलने से पेरनी के काम में काफी हरज हो जाता है, क्योंकि पुराने चाड़ों की रचना ही ऐसी है कि उससे बीज जाने के छिद्र ऊपर से ही अलग-अलग होने के कारण बीज छोड़ते समय मुट्ठी से ही तीन या चार भागों में विभक्त करना पड़ता है, जो काफी कठिन काम है। लगातार करते रहने पर मुट्ठी दुखने लगती है और बीज छोड़ने के क्रम में गड़बड़ हो जाती है, जिससे बीज समान न गिरकर कम-ज्यादा परिमाण में गिरने लगता है। इसलिए कहीं जमीन खाली रह जाती है और कहीं-कहीं इतना अधिक गिर जाता है कि उखाड़कर फेंकना पड़ता है। इसके अलावा पुराने चाड़े में एक दोष और भी पाया जाता है। इसमें बीज आगे-पीछे न पड़कर आमने-सामने ही पड़ते हैं, जिससे बीच की जगह का उपयोग नहीं हो पाता। इन सब दृष्टियों से सुलभ चाड़ा सर्वोपरि है। इसमें कोई भी अनजान आदमी बखूबी तौर से पेरनी का काम कर सकता है। क्योंकि इसकी रचना में एक खास गुण यह है कि इसमें ऊपर की कटोरी में एक ही छेद होता है, जो अन्दर जाकर दो-तीन या चार भागों में बँट जाता है। इसलिए ऊपर से बीज डालने पर

अन्दर आकर अपने-आप समान भागों में विभक्त होकर घूमते हुए और आमने-सामने न पड़कर (अल्टरनेट) पद्धति से आगे-पीछे ठीक स्थान पर इस तरह से पड़ते हैं कि बीच की जगह खाली नहीं रह पाती, सारी जमीन का ठीक उपयोग होता है। चाड़ा देहाती बढ़ई, लुहारों द्वारा आसानी से बनवाया जा सकता है।

---

९. नागर डवरा
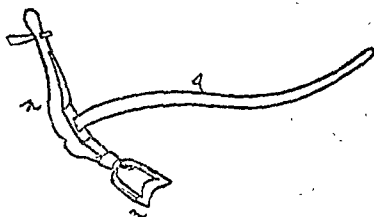
१. दांडी (हरिस) १० फुट लंबी, ३ इंच मोटी।

२. खोड़ अखंड २½ फुट लंबा, ४ इंच मोटा।

३. फाँस ९ इंच लंबी, २ इंच चौड़ी, २ सूत मोटी।

यह एक ऐसा औजार है, जो फसलों के दरमियान चलाने के लिए विशेष उपयोगी है। फसलें बड़ी होने पर फूलों के समय भी पौदों को नुकसान पहुँचाये बगैर चलाया जा सकता है। यह इण्टर कल्टिवेशन के लिए बहुत उपयोगी है। खासकर ज्वार जैसी ऊँची बढ़नेवाली फसल में इसका अच्छा उपयोग होता है।

बनावट :

इसकी बनावट छोटे नागर जैसी होती है, लेकिन इसका खोड़ अखंड और लंबाई में ३½ फुट होता है। फाँस बैठाने का सामने का मुँह १० इंच चपटा व चौकोन होता है। इसकी हरिस नागर के समान ही सामान्यतः आठ-दस फुट लंबी होती है। इसमें लगनेवाली फाँस २ सूत मोटी, २ इञ्च चौड़ी लोहे की चादर से कतारों के बीच अंतर के अनुसार बनायी जा सकती है। एक बैल-जोड़ी पर दो-तीन नागर डवरे चलाये जा सकते हैं।

उपयोग :

इस नागर डवरे का उपयोग हर फसल में तीन-चार बार निकाई-गोड़ाई (इण्टर कल्टिवेशन) में किया जाता है। यह पौधों को बगैर किसी किस्म का धक्का लगाये चलता है। खासकर नमी के दिनों में ७-८ इंच तक गहरा धँसता है। नीचे की सतह सख्त नहीं होने पाती, मिट्टी भुरभुरी करके पलटते हुए चलता है। इससे खेतों में दरार नहीं होने पाती। सभी फसलों में इसका उपयोग करने से पैदावार सवाई-डेढ़ी तक बढ़ती है। एक बैल-जोड़ी और दो-तीन आदमी मिलकर इसके द्वारा ४-६ घंटों में २-३ एकड़ की निकाई-गोड़ाई आसानी से कर लेते हैं।

---

१०. कल्टिवेटर
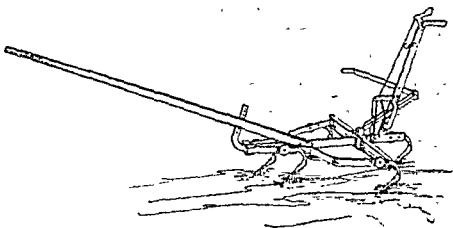
निकाई-गोड़ाई व खेती के कई अन्य कामों में इस औजार का अच्छा उपयोग होता है। हमारे देश में यह ट्रैक्टर के साथ बाहर से आया है और ट्रैक्टर की ही शक्ति से बड़े-बड़े फार्मों में इसका उपयोग होता रहा है। परन्तु आजकल इसकी बनावट में कुछ हेर-फेर करके बैलों द्वारा भी इसे चलाया जाता है और अब छोटे-बड़े सभी किसानों को इसका लाभ मिलने लगा है।

इसके द्वारा काम करने में समय व श्रम दोनों की काफी बचत होती है और हर फसल के लिए इसका उपयोग सुलभता से किया जा सकता है। दो बैल और एक आदमी दिनभर में चार-पाँच एकड़ जमीन की निकाई-गोड़ाई आसानी से कर लेता है।

चित्र में दिखाया गया मॉडल सुधरा हुआ है, जो पुराने की अपेक्षा काफी सुलभ है। इसमें दो हैण्डलों (मूठ) की बजाय एक हैण्डल लगाया गया है, जिससे एक आदमी ही बैलों को हाँकता हुआ आसानी से काम कर सकता है। इसी प्रकार सामने के हिस्से से पहिया और साकल को हटा-कर हरिस लगाने की व्यवस्था की गयी है, जिससे खेत के एक सिरे से दूसरे सिरे तक आसानी से हल के समान ही चलाया जाता है। जमीन छूटने नहीं पाती। इन सुधारों से अब यह और अधिक उपयोगी हो गया है।

११. जोड़ डवरा
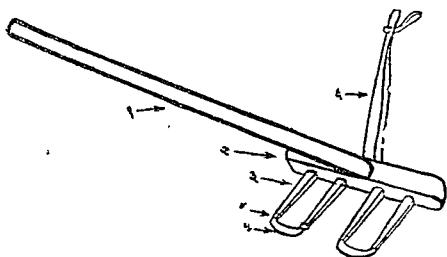
१. दांडी (हरिस) १२ फुट लंबी, ३ इंच मोटी। २. खोड़ २½ फुट लंबा, ७ इंच चौड़ा, ३ इंच मोटा। ३. फन (जानकुड़) ११-१२ इंच लंबे, २ इंच मोटे। ४. ईड़ी (सेंवी) लोहे की आधा सूत मोटी पट्टी की। ५. फाँस ६ इंच लंबी, १½ इंच चौड़ी, १½ सूत मोटी।

इसकी आकृति बक्खर के समान ही, परंतु कुछ छोटी होती है। इसमें चार फन (जानकुड़) और दो सीधे फाँस ६ इंच लंबे और १½ इंच चौड़े लगाये जाते हैं। दो फाँसों के बीच का अन्तर सात इंच का रहता है। इसको एक दांडी और कम-ज्यादा दबाकर चलाने, उठाने या हटाने के लिए एक रुमना होता है। खोड़ की लम्बाई २½ फीट व चौड़ाई ७ इंच, मोटाई ३½ इंच होती है। इसके फन ११-१२ इंच लंबे होते हैं और बक्खर के समान ही ४ इंच आगे को झुके रहते हैं। एक बैल-जोड़ी पर दो डवरे लादकर चलाये जाते हैं।

उपयोग : इसके एक साथ दो तासों (खुंडों) की निकाई का काम होता है। खासकर जब फसलें छोटी रहती हैं, तो इसका उपयोग ठीक होता है। इस औजार का परिणाम पौधों पर अच्छा होता है। खर्च भी लगभग आधा आता है। जरूरत के मुताबिक पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ायी जा सकती है, तासों में पूरा इण्टर कल्टिवेशन होता है,

कतारों का फासला कुछ अधिक रहे, तो हर कतार में से डवरे को फिराना ठीक रहता है। खासकर इसका उपयोग बरसाती फसलों को शुरू की पाल्याँ देने में अच्छा होता है। इससे मिट्टी भुरभुरी होकर पौधों को पुष्टि मिलती है और फसलों की बाढ़ अच्छी होती है।

---

१२. हाथी डवरा
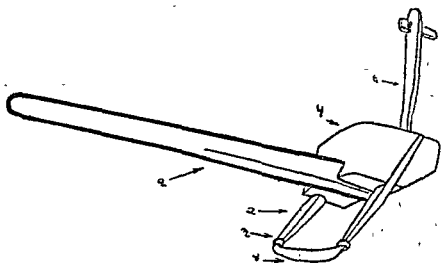
१. हरिस ८ फुट लंबी, ३ इंच मोटी चौकोनी। २. फन (जानकुड़) २० इंच लंबे, २ इंच मोटे। ३. फाँस १२ इंच लंबी, २ इंच चौड़ी, २ सूत मोटी। ४. खोड़ १½ फुट लंबा, १ फुट चौड़ा, ८ इंच मोटा।

यह श्री बालाप्रसादजी का प्रयोग है। इसे हाथी डवरा कहते हैं। इसका खोड़ सवा से डेढ़ फुट लंबा, ११-१२ इंच चौड़ा और ८-९ इंच मोटा होता है। इसकी आकृति कुछ गोलाई लिये हुए होती है। इसमें लगनेवाली दंडी (हरिस) तीन-साढ़े तीन इंच मोटी और आठ फुट लंबी चौकोनी होती है, जो खोड़ में नीचे की सतह पर खाँचा डालकर बैठायी जाती है। खोड़ के पिछले हिस्से में रुमना भी खाँचा करके बैठाया जाता है। इसके फन (जानकुड़) बीस इंच लंबे खोड़ के बाजुओं में खाँचे करके बैठाये गये हैं। दोनों जानकुड़ों का अन्तर एक फुट होता है।

इसकी फाँस ढाई-तीन सूत मोटी और दो इंच चौड़ी बाहर की ओर गोलाई लिये हुए एक इंच धारवाली, ईड़ियाँ सुधरे हुए वक्खर के समान नीचे से चपटी व ऊपर से गोल आकृतिवाली होती हैं।

लाभ : यह दुंडा मिर्च और तम्बाकू के दरमियान चलाने के लिए बड़ा फायदेमंद सिद्ध हुआ है। इसके चलाने से मिट्टी कुछ अधिक भुरभुरी होती है। बार-बार मेहनत करने की जरूरत नहीं रहती। इसका वजन साधारण दुंडों की अपेक्षा कुछ अधिक होता है। इसलिए बगैर दबाये ही ४-६ इंच तक जमीन में धँसता हुआ चलता है। इससे गोड़ाई करने पर जमीन में काफी दिनों तक दरारें नहीं फटने पातीं। इसलिए गीलापन अधिक दिनों तक ठहरता है, जो किसी भी फसल के लिए निहायत जरूरी है। हैदराबाद राज्य के नांदेड़ जिले में इसका प्रचार दिनों-दिन बड़ी तेजी के साथ बढ़ रहा है।

---

१२. एक बैली वखर
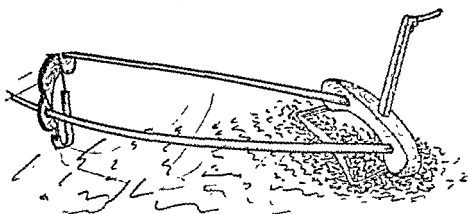
माप :

१. डाँडी (हरिस) ९ फुट लंबी, ८ इंच मोटी।
२. जानकुड़ १६ इंच लंबे, ३ × ३ सूत मोटे लोहे के।
३. खोड़ २। फुट लंबा, ६ × ६ इंच मोटा।
४. फाँस १८ इंच लंबी, २ इंच चौड़ी, २ सूत मोटी।

यह बखर एक बैल की ताकत से अच्छी तरह चलाया जाता है। बड़े बखर का ही यह कुछ छोटा स्वरूप है। इसमें दो हरिस कुछ गोलाई-वाली लगायी गयी हैं, ताकि बैल को हरिस की रगड़ न लगने पाये। फाँस चौड़ाई में बड़ी के मुकाबले आधी कर दी गयी है, जिससे बैल को औजार की खैंच भी आधी ही पड़ती है। इन बातों की ओर काफी ध्यान रखकर ही इसे बनाया गया है।

मिर्च जैसी कुछ फसलों में डौरे की जगह भी इसका उपयोग किया जा सकता है।

---

१४. एक बैली नागर

माप :
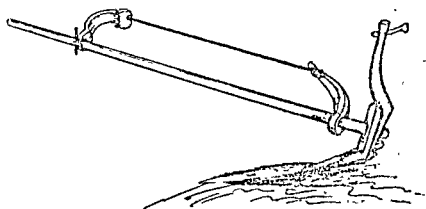
१. हरिस (डाँडी) ९ फुट लम्बी, ८ इंच गोलाई की।

२. दाँता १४ इंच लम्बा, ३॥ इंच चौड़ा।

३. फाल १९ इंच लम्बा, ३ इंच चौड़ा, २ सूत मोटा।

यह नागर बड़े नागर का ही छोटा रूप है। लेकिन एक बैल से चलने के लिए चित्र में दिखाये अनुसार हरिस के पिछले भाग में एक टंडा बैठाया गया है, जिसमें रस्सी बाँधकर बैल के दाहिनी ओर जुए में बाँध दी जाती है। यानी बैल के बायीं ओर हरिस और दाहिनी ओर रस्सी रहने से मोड़ पर बैल को घूमने में आसानी रहती है और हल का

फाल भी बैल के पीछे न रहकर बायीं ओर आ जाता है। फाल लगने का भी डर नहीं रहता।

इस हल में एक खास बात यह भी है कि कभी जरूरत पड़ने पर हरिस में फिट किये हुए डंडे को निकालकर दो बैलों से भी काम लिया जा सकता है।

काम की दृष्टि :

बैल को अकेले चलने की आदत होने पर दो बैलवाले हल के बराबर ही इससे काम होता है। जापान व चीन आदि देशों में एक बैली औजारों का ही उपयोग होता है।

१५. महाराष्ट्र का जुआ
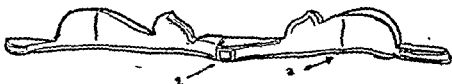
१. इसकी लम्बाई साढ़े पाँच फुट होती है।

२. कंधों पर चौड़ाई १० इंच होती है।

जहाँ तक हमारा खयाल है, यह जुआ हिंदुस्तान के अन्य प्रान्तों में चलनेवाले जुओं से सर्वश्रेष्ठ है। वैसे तो उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, बिहार आदि प्रान्तों के जुओं में भी कुछ सुधार हुए नजर आते हैं। लेकिन इसके मुकाबले में बहुत कम हैं।

इसमें कई बातें ऐसी हैं, जो अन्य प्रांतों के जुओं में नहीं पायी जातीं। जैसे कि यह अपनी एक खास रचना के कारण बैलों के कंधों पर पकड़ के साथ फिट बैठता है, जिसकी वजह से इसके द्वारा बैल अपनी पूरी ताकत लगाकर काम करता है। किसी किस्म की कोई तकलीफ इसके द्वारा बैलों को नहीं होती, जब कि अन्य प्रांतों में चलनेवाले जुए बैलों के कंधों में गड़ते (रगड़ते) रहते हैं। कभी-कभी भारी जख्म भी कर देते हैं, जिससे बैल को काफी तकलीफ उठानी पड़ती है और उसकी ताकत का पूरा इस्तेमाल नहीं हो पाता।

इसलिए महाराष्ट्र के इस जुए को हम सब दृष्टियों से श्रेष्ठ मानते हैं। इसकी बनावट काफी मजबूत होती है। हल्के-भारी दोनों तरह के काम इससे लिये जा सकते हैं। यह बैलों के लिए बड़ा आरामदेह होता है।

---

१६. कड़बा तोड़ी
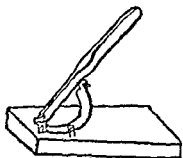
इसका प्रयोग पहले-पहल सेवाग्राम-आश्रम में श्री पारनेरकरजी ने किया था, उसके बाद इसमें काफी फेर-बदल आवश्यकता के अनुसार सरल व सुलभ बनाने के लिए होते रहे। कड़बा तोड़ी का जो रूप आज आपके सामने है, वह काफी मजबूत और बनाने में सरल है। जिन-जिन प्रान्तों में मवेशियों को चारा बारीक करके खिलाने का रिवाज नहीं है, उन-उन प्रान्तों के लिए इसका अच्छा उपयोग हो सकता है।

अक्सर देखने में आता है कि किसान लोग हमेशा अपने मवेशियों के आगे कड़बे की पूरी पेंडी (पूली) या एक पेंडी के दो टुकड़े करके डाल देते हैं, उसमें से जानवर सिर्फ पत्तियाँ और नरम भाग खाकर बाकी का वैसे ही छोड़ देते हैं, जो बाद में फेंक दिया जाता है। इस तरह से किसान अपनी गाढ़ी कमाई का ३०-४० प्रतिशत चारा अपने आलस और अज्ञानता के कारण बरबाद कर देते हैं। चारे की इस बरबादी को रोकने के लिए यह कड़बा तोड़ी काफी उपयुक्त साबित हुई है। दो आदमी इसके द्वारा एक घंटे में ५०-६० कड़बे की पेंडी के ४ से ६ इंच लम्बे टुकड़े आसानी से कर लेते हैं, जो २५-३० जानवरों को दिनभर के लिए पर्याप्त होते हैं। इस यंत्र की कीमत २० रुपये होती है। गाँव का लुहार इसे आसानी से बना सकता है।

अलग-अलग प्रान्तों में चलनेवाले नागर

अलग-अलग प्रान्तों में चलनेवाले जेली व जुए
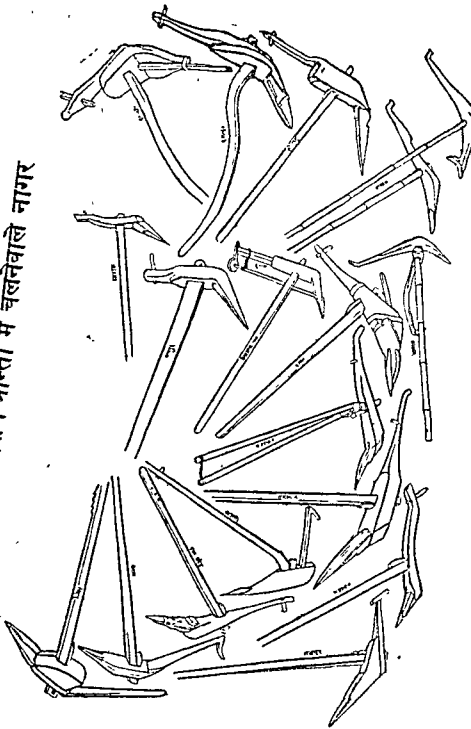
१७. गोरस मथनी

[क्रिया : यह मथनी ९-१० मिनट में १०-१२ सेर दही को बिलोकर मक्खन निकालती है ।]

माप : यह मथनी फूल व लकड़ी सहित ५ फुट की ऊँचाई की है ।

नं० १ इस लकड़ी की गोलाई का घेरा ४¼' है । यह भाग मथनी लगाते समय रस्सी या लकड़ी की कैंची के बंधन में रहता है ।

नं० २ यह रस्सी ६' लम्बी व १½' परिधि (घेरे) की है ।

नं० ३ इस मध्य की लकड़ी का घेरा ५¼' है । मथनी लगाने की रस्सी २ से ३ नंबर के बीच फिराते रहते हैं ।

नं० ४ यह घेरा ६ इंच के लगभग है । मंथन-क्रिया के वक्त यह बर्तन के मुहाने पर लकड़ी के चने

औजार की पकड़ में रहता है, ताकि ठीक तरह से वर्तन के मध्य स्थिर रहकर वर्तन को न हिला सके।

नं० ५ ये कमचियाँ ६ इंच लंबी हैं तथा लचीली बनायी गयी हैं, ताकि दही को मार लगते रहने पर भी टूट न सके।

नं० ६ फूल सागौन की लकड़ी का बनाया जाता है। यह दो लकड़ियों में कटाव करके आपस में मिलाकर बनाया जाता है। प्रत्येक लकड़ी की लंबाई ६ इंच और मोटाई डेढ़ इंच और ऊँचाई ढाई इंच होती है। इसके चारों ओर के बीच की जगह समान होती है।

विशेषताएँ :

१. इस मथनी में बिलोने की क्रिया में रस्सी का महत्त्व अत्यधिक है। यह रस्सी ६ फुट से ज्यादा लंबी न हो। बहुत मोटी न हो तथा बहुत पतली भी न हो। साधारण डेढ़ इंच गोलाई की रस्सी ठीक साबित हुई है। बिलोते समय मथनी के डंडे पर रस्सी के पाँच घेरे से अधिक आना मथनी की क्रिया को भारी बना देता है। मथनी लगाते वक्त हाथ में पकड़ी जानेवाली रस्सी के दोनों छोर डेढ़-डेढ़ फुट से ज्यादा लंबे न हों। यह रस्सी आवश्यकतानुसार नं० २ और नं० ३ के मध्य घुमाते रहना चाहिए।

२. ये चार कमचियाँ लचीले बाँस की बनी होती हैं, जिससे बार-बार दही का मार लगने पर भी टूट न सकें। यह दही बिलोने में फूल के साथ-साथ दुहरी क्रिया करती रहती है, याने दही को बार-बार पतला चीरती है। इस कारण इसका मौजूदापन मथनी के लिए बहुत ही अच्छा साबित हुआ है।

३. यह फूल सागौन की लकड़ी से बना है और काफी हलका भी है। इसे अखंड लकड़ी का बनाना ज्यादा सुविधा का होगा। इस फूल में मथनी का डंडा फँसाया गया है। प्रत्येक समय मथने की क्रिया फूल के चारों भागों में दही के टकराते रहने से होती है, लेकिन ज्यादा महत्त्व की चीज फूल की लकड़ी के नीचे के भाग में गोलाई का किंचित् कटाव

है, जिसके कारण दही पतला चीरता हुआ आगे-पीछे घूमता रहता है, जिससे बिलोने की क्रिया तत्काल होती है।

नोट : अक्सर हमारे ग्रामीण भाइयों की यह शिकायत रहती है कि गाय के दही से मक्खन जल्दी नहीं निकलता। बहुत समय खराब करने पर भी मक्खन पूरा न निकलने के कारण ही हम गायों का दूध निकालने की ओर इतना ध्यान नहीं देते।

अतः मैं सोचता हूँ कि उनकी मथनी की बनावट साधारण होने के कारण (मक्खन जल्दी न निकलने के कारण) हिलाते रहने की क्रिया करते रहते हैं, जिससे मक्खन निकलने की बजाय (ज्यादा हिलाने से) उसके घृत-कण (पार्टिकल्स) फूट जाते हैं और मथनी के गर्म हो जाने से वे पिघलकर छाछ में मिल जाते हैं। इसी कारण गाय के दही से मक्खन निकालने की क्रिया को सफल बनाने के लिए इस प्रकार की मथनी का उपयोग करना जरूरी है।

---

१८. जैली पाँचा
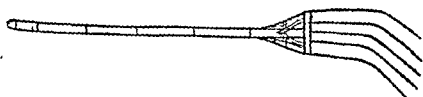
१. डंडा ४ फुट लंबा, १½ इंच मोटा।

२. सींग (पंजा) २ फुट लंबा, २ सूत मोटा, २ सूत चौड़ा लोहे का।

जैली भी खेती के औजारों में महत्त्व का स्थान रखती है। लेकिन हिन्दुस्तान में राजस्थान, पंजाब और उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों में इसका उपयोग देखने में नहीं आया। इसके अभाव में दूसरे प्रान्तों के किसान दतारी नाम के एक औजार से काम चलाते हैं, जो किसी भी हालत में जैली की बराबरी नहीं कर सकता।

२०. सुधरा हुआ हँसिया (दरांती)
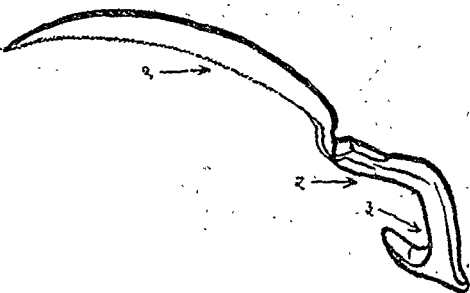
१. ब्लेड (पान) १० इंच लंबा, १ इंच चौड़ा।
२. बेंट (दस्ता) ६ इंच लंबा, १ इंच मोटा।
३. बेंट पीछे से २ इंच झुका हुआ।

खड़ी फसलों को खेतों से काटने के लिए हँसिया या दरांती का उपयोग प्राचीनकाल से चलता आ रहा है। यह औजार काफी सीधा-सादा देहातों में बढ़ई, लोहारों द्वारा बनाया तथा बेचा जाता है। इसकी कीमत कहीं ६ से ८ आना और कहीं-कहीं एक रुपये से सवा-डेढ़ रुपये तक देनी पड़ती है। फसलों की कटाई के समय हर किसान और खेतिहर मजदूरों के पास इसका होना निहायत जरूरी है।

परंतु खेती के काम के लिए इतना आवश्यक होते हुए भी सुधार की दृष्टि से बहुत कम लोगों का ध्यान इस ओर गया प्रतीत होता है। चूँकि कई प्रान्तों की दरांती इतनी पिछड़ी हुई है कि उससे काम कम और कठिनाई से होता है और अधिकांश प्रान्तों की दरांतियों में लगे हुए बेंट (दस्ते) सीधी लकड़ी के बने होते हैं, जो काम करते वक्त मुट्ठी से फिसलते रहते हैं। इसलिए मुट्ठी को भींचकर काम करना

पड़ता है। इसकी वजह से हाथ जल्द ही दुखने लगता है और काम करने में रुकावट आती है। साथ ही कभी-कभी मुट्ठी भी जमीन से रगड़ खा जाती है। क्योंकि हँसिये से काम करने की क्रिया पीछे की ओर खेंचते हुए करनी पड़ती है। इसलिए दस्ता सीधा रहने पर खेंचने की क्रिया करने में फिसलना स्वाभाविक ही है। इसलिए हँसिये का बेंट पीछे की ओर से चित्र में दिये अनुसार कुछ गोलाई में झुका हुआ होना चाहिए। ऐसा करने से काम करने में फिसलन की वजह से रुकावट नहीं आयेगी और जमीन से हाथ को रगड़ खाने का भय भी नहीं रहेगा। हम आशा करते हैं कि किसान भाई इस ओर ध्यान देकर अपने हँसिये को अधिक कार्यक्षम बनाने की कोशिश करेंगे।

---

२१. धान-खेती में मशागत करने का हाथ डोरा

यह औजार धान की खेती में गोड़ाई का काम करने के लिए विशेष उपयोगी है। इसे जापान से यहाँ लाया गया है। जापानी लोग हर १०-१५ दिनों के बाद इस औजार की सहायता से धान की जमीन को गोड़कर मुलायम और पोली बनाते रहते हैं। इसलिए उनके यहाँ एक-एक पौधा सैकड़ों की तादाद में परिवर्तित होकर खूब फलता-फूलता है, जब कि हमारे यहाँ इस ओर ध्यान न देने की वजह से पौधों की जड़ों में निरंतर पानी भरा रहने के कारण एक किस्म की काई लगकर जमीन बैठ जाती है और पौधों का बढ़ना, फूलना तथा फलना सीमित हो जाता है। इसलिए हमारे किसानों को भी इस ओर ध्यान देकर इस औजार का इस्तेमाल करना चाहिए।
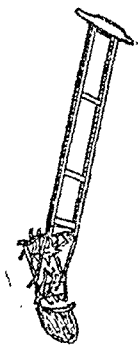
यह भी श्री रेड्डीजी का प्रयोग है, जो हाथ से चलाया जाता है। इसकी बनावट बक्खर जैसी ही है। इसमें भी आवश्यकता के अनुसार २-३ किस्म की लंबाईवाली फाँस बैठायी जा सकती है। इससे खरीफ और रबी दोनों फसलों में निंदाई का काम बड़ी खूबी के साथ होता है। खासकर बागवानी के लिए यह बहुत ही जरूरी है। इसे दो आदमी चलाते हैं, एक पीछे से पकड़ता है और दूसरा आगे को खींचते हुए चलता है। बड़ी आसानी से ४-६ घंटे में एक एकड़ की निंदाई की जा सकती है। इससे निंदाई के साथ-ही-साथ पौधों की जड़ों पर मिट्टी भी चढ़ती जाती है और खासकर जब फसलें काफी बढ़ जाती हैं, तो बैलों से डोरन करना प्रायः असंभव हो जाता है। उस समय हाथ-डौरा बगैर किसी नुकसान या रुकावट के चलाया जा सकता है।

गत दो-तीन सालों से हम लोग आश्रम की खेती में सभी प्रकार की फसलों की निंदाई का काम इससे करते हैं। हमारा अनुभव है कि जिस काम को १०-१२ बाई (स्त्री-मजदूर) ४-६ घंटों में करती हैं, उतना काम २-३ आदमी इस हाथ-डौरे की सहायता से ४-६ घंटे में बड़ी आसानी के साथ कर लेते हैं। यह निंदाई के लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है।

३. चक्रवाला हाथ-डौरा

इस औजार में पहिया लगाकर काम करने की व्यवस्था की गयी है, ताकि एक आदमी आसानी से ठेलकर काम कर सके। क्योंकि खींचने की अपेक्षा ढकेलकर काम करने में आसानी रहती है।

इस यंत्र में नाना प्रकार के फाल फिट करके निंदाई, गुड़ाई व जुताई का काम मनुष्य-शक्ति से हो सकता है।

बनावट :

आसानी से चलाने के लिए इसमें ३ फुट ऊँचाई का एक पहिया लगाया गया है। पहिये के मध्य भाग से साढ़े चार फुट का एक हैंडल

जोड़ा गया है। ऊपर-नीचे करने के लिए हैंडल में दो लोहे की पट्टियाँ जोड़ी गयी हैं, जो पहियों के मध्य भाग से भी जोड़ी गयी हैं।
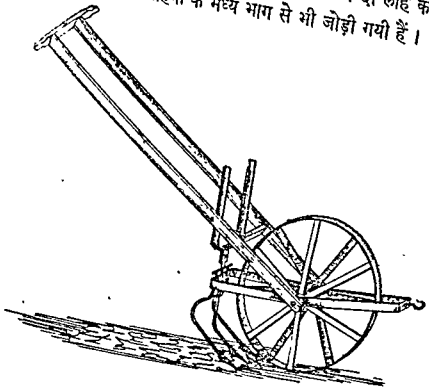
४. फोर्क

यह एक विदेशी औजार है। आजकल हिन्दुस्तान की कई कंपनियाँ इसे बनाती हैं तथा बेचती भी हैं। सर्वत्र सुलभता से मिलता है। छोटी हाथ-खेती में जमीन खोदने के लिए फावड़े के बदले इसका अच्छा उपयोग होता है। कीमत १५, २० रुपये।
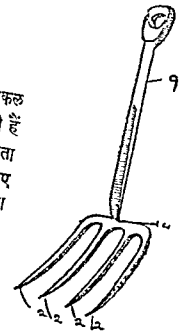
१०. लाइन दतारी
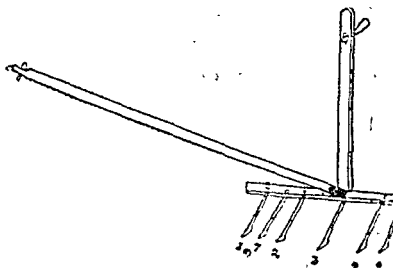
चित्र में दिखाये अनुसार इस दतारी में सात खूँटियाँ लगायी
जिनको कम-ज्यादा करने पर पाँच प्रकार की कतारें आवश्यकता
आसानी से खींची जा सकती हैं। खेती में हर किस्म की फसल
बोने के लिए इसका अच्छा उपयोग होता है। क्रम निम्न प्रकार

(१) खूँटी नं० १,२,३,४,५ को कायम रखनेपर १,१ फुट अंतर की

(२) ,, ,, ३,६,७ को कायम रखनेपर १॥,१॥ फुट ,,

(३) ,, ,, १,३,५ को कायम रखनेपर २,२ फुट ,,

(४) ,, ,, ६,७ को कायम रखनेपर ३,३ फुट ,,

(५) ,, ,, १,५ को कायम रखनेपर ४,४ फुट ,,

नोट : बजाय इसके कि हर प्रकार की कतारों के लिए अलग-अल
रखे जायँ, यह एक ही औजार भिन्न-भिन्न अन्तर की
काम में लाया जा सकता है। मूल्य १२ रुपये मात्र।

११. त्रिशूल डौरा
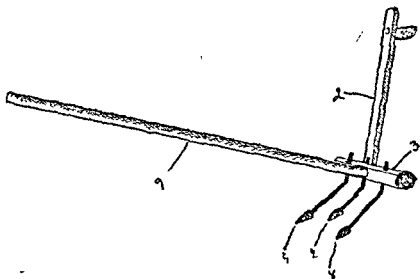
सिंचाई के बाद फसलों में नमी टिकाये रखने के लिए गुड़ाई करना आवश्यक कार्य है। इस औजार द्वारा दो मनुष्य आठ-दस घंटों में एक एकड़ जमीन की गुड़ाई कर लेते हैं। कीमत १२ रुपये।

१२. त्रिशूल हाथ-डौरा

यह सरकारी फार्मों में सर्वत्र मिलता है। इससे एक आदमी खड़े-खड़े फसलों की गुड़ाई आसानी से कर लेता है। कीमत ३ रुपये।

१३. खड़ी हातोड़ी

यह खड़े-खड़े खेतों के ढेले फोड़कर बारीक करने का अच्छा साधन है। दक्षिण भारत में इसका अधिक चलन है। कीमत ८ आने।

२०. खाद ढुलाई टोकरी
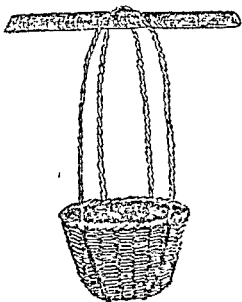
इस टोकरी के द्वारा दो आदमी मिलकर दो मन बोझ आसानी से एक खेत से दूसरे खेत तक ढुलाई कर लेते हैं। जब कि एक आदमी अकेला एक मन बोझ उठाकर नहीं ले जा सकता।

२१. कटिंग कैंची

यह पौधों की काट-छाँट का उत्तम साधन है। सर्वत्र सुलभता से मिलती है। कीमत २५ रुपये।

२२. हाथ मोगरी
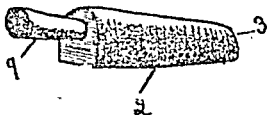
यह लकड़ी का बना हुआ मामूली साधन है, जो खेत-खलिहान व घर में अनेक कामों में कूट-पीट करने के लिए उपयोगी है। कीमत ६ आने मात्र।

२३. लोहे की दतारी
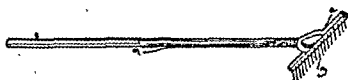
खेत तैयार होने पर इस साधन के द्वारा कचरा बटोरने, क्यारियों को बराबर करने व मिट्टी में बीज मिलाने आदि कई काम सुगमता से होते हैं।

---

२३. सुधरे हुए खेती औजारों की मूल्य-सूची

नवंबर १९५८

	रुपये		रुपये
(१) पत्थर का रोलर (स्टैंड सह)	९०	(१२) कल्टिवेटर	६०
(२) उड़वनी पंखा	१६०	(१३) लाइन दतारी	१२
(३) सुलभ नागर	२०	(१४) नागपुरी जुआ	१०
(४) सर्वांगी ,,	४०	(१५) जेलो पंजा	८
(५) सुलभ बखर	२५	(१६) एक-बैली नागर	२०
(६) सुलभ तिफन (तुपारी)	४५	(१७) ,, ,, बखर	२५
(७) ,, ,, (कठानी)	५५	(१८) जापानी हाथ डवरा	२५
(८) ,, चाड़ा	६	(१९) सुलभ खुरपा	१
(९) नांगर डवरा	१२	(२०) दाँतवाला हँसुआ	।।।)
(१०) हाथी ,,	१५	(२१) गोरस मथनी	६
(११) चक्रवाला हाथ-डवरा	२५	(२२) कडबा-कैंची	२५

●

मुद्रक : विश्वनाथ भार्गव, मनोहर प्रेस, जतनबर, वाराणसी।

कृषि-ग्रामोद्योग-साहित्य

हमारे गाँवों का पुनर्निर्माण	गांधीजी (नवजीवन)	१—५०
रचनात्मक कार्यक्रम	” ”	०—१८
ग्राम-सेवा के दस कार्यक्रम	जुगतरामभाई दवे	१—२५
हमारी खुराक की समस्या	जे॰ कों॰ कुमारप्पा	१—५०
हिन्दुस्तानी खाद्य पदार्थों की उपयुक्तता और उनसे प्राप्त जीवन-तत्त्व		०—६२
हमें क्या खाना चाहिए ?	झवेरभाई पटेल	३—००
ग्रामोद्योग जाँच प्रश्नावली		१—७५
हाथ-कागज बनाना		४—००
मगनदीप		०—५०
धोती जामा		०—१२
तांदुळ (मराठी)		०—५०
हाथ-चक्की	एम॰ विनायक	०—५०
सफाई : विज्ञान और कला	वल्लभस्वामी	०—७५
खुराक की कमी और खेती		२—५०
गो-सेवा	गांधीजी (नवजीवन)	१—५०
गोसेवा की विचारधारा	राधाकृष्ण बजाज	०—५०
वृषभ-सुधार	य॰ म॰ पारनेरकर	०—५०
खाद और पेड़-पौधों का पोषण	मथुरादास पु॰	१—००
भारत में गाय (हिन्दी)	सतीशचन्द्र दास गुप्त	११—००
Bee Keeping		1—75
Questionnaire for the Rural Survey	J. C. Kumarappa	0—25
Questionnaire for the Survey of Village Industries	”	1—50
Table of Indian Food Values & Vitamins		0—50
What Shall We Eat ?		3—00
Grinding of Cereals		0—50
Magan Chulha		0—38
Magan Deep		0—50
Palm Gur		1—00
Paper Making		4—00
Rice		1—50
Soap Making		1—50
How to Serve the Cow	Gandhiji	1—25
Cow in India (Part I and II)	Satish Chandra Das Gupta	16—00
Why Go-Seva ?	Suresh Ramabhai	1—00
Deceptive Oil	Radhakrishna Bajaj	0—35
The Cow in our Economy	J. C. Kumarappa	0—75

अगर मैं आपकी जगह होऊँ, तो मैं शुरू में हल से काम न लूँ। मैं बच्चों के हाथों में कुदाली पकड़ा दूँगा और उससे अच्छी तरह काम लेना सिखाऊँगा। यह भी एक कला है। बैलों की ताकत से खाद में काम लिया जा सकता है। इसी तरह मैं यह पसंद नहीं करूँगा कि खराब या हलकी किस्म की जमीन के कारण आप नाउम्मीद हो जायँ। चिकनी मिट्टी या खाद की हलकी परत डालकर हम कई तरह की उपयोगी साग-सब्जी और गमलों में पैदा होनेवाली पत्तियाँ उगा सकते हैं। थोड़े गहरे गड्ढों में पाखाना डालकर हम उसकी खाद बनाने का काम फौरन शुरू कर सकते हैं। इस खाद के तैयार होने में एक पखवाड़े से ज्यादा समय नहीं लगता। नहाने-धोने या रसोईघर के पानी की हर बूँद को पिछवाड़े की तरकारियों की क्यारियों में पहुँचाया जा सकता है। पानी की एक बूँद भी व्यर्थ नहीं जाने दी जानी चाहिए। हरी पत्तियाँ मिट्टी के गमलों में और बेकाम पुराने टीन के डिब्बों में उगायी जा सकती हैं। छोटे-से-छोटे मौके को भी हाथ से न जाने दिया जाना चाहिए। अगर यह सब देशव्यापी पैमाने पर हो सका, तो उस हालत में कुल मिलाकर उसका नतीजा बहुत बड़ा होगा।

—गांधीजी

एम० विनायक

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

हाथ-चक्की

एम० विनायक

प्रस्तावना
जे० सी० कुमारप्पा

१९५५
अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, काशी

प्रकाशक :
अ० वा० सहस्रबुद्धे,
मंत्री, अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ,
वर्धा (म० प्र०)

पहली बार : २०००
नवम्बर, १९५५
मूल्य : आठ आना

मुद्रक :
पं० पृथ्वीनाथ भार्गव,
भार्गव भूषण प्रेस,
बनारस

भूमिका

यह आश्चर्य की बात है कि यद्यपि हमारा जीवन मूलतः भोजन पर आश्रित है, फिर भी भोजन के विषय पर हम बहुत कम ध्यान देते हैं। डाक्टर लोग भी भोजन-शास्त्र के विषय में शून्य अथवा अल्प ज्ञान रखते हैं। अनाज को खाने के उपयुक्त बनाना और उसमें प्रयुक्त होने-वाले यन्त्रों के बारे में जानकारी रखना भोजन-शास्त्र का एक मुख्य अङ्ग है। काफी प्रयोगों पर आधारित यह पुस्तिका इस आशा से प्रकाशित की जा रही है कि यह भोजन-शास्त्र के विषय पर यथोचित प्रकाश डालेगी। इसके द्वारा इस विषय का ज्ञान बढ़ेगा तथा इससे लोगों के स्वास्थ्य और सुख के संवर्धन में सहायता मिलेगी। साथ ही इसमें बताये गये तरीके बेरोजगारी की समस्या को सुलझाने में भी सहायक होंगे। इस पुस्तिका में दिये गये तथ्यों से स्पष्ट हो जायगा कि यन्त्र-शक्ति के द्वारा प्रेरित मशीनों की प्रशंसित कार्य-क्षमता, केवल कल्पना मात्र है; क्योंकि इस कार्य-क्षमता का अधिकांश बहुत ही कम दामों पर बेची गयी प्राकृतिक शक्तियों के रूप में मिलनेवाली अप्रत्यक्ष सरकारी आर्थिक सहायता पर ही अवलम्बित है।

श्री एम० विनायक कई वर्षोंतक 'अखिल भारत ग्रामोद्योग संघ' के धान-कुटाई और अनाज-पिसाई-विभाग के निरीक्षक रहे हैं। आपने इन सब तथ्यों का संकलन और संग्रह करके जनता का उपकार किया है। इस प्रकार अपने ज्ञान और अनुभव को जनता तक पहुँचाने के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

कोवळम आश्रम,
कारैनगर (श्री लंका)
२० नवम्बर, १९५३

—जे० सी० कुमारप्पा

अ नु क्र म

•

सहायक पुस्तकें

१. शत प्रतिशत स्वदेशी—महात्मा गांधी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद
२. भोजन की कमी और कृषि ,, ,, ,, ,, ,,
३. खादी का अर्थशास्त्र ,, ,, ,, ,, ,,
४. भोजन और उसमें सुधार ,, ,, ,, ,, ,,
५. हिन्द स्वराज्य ,, ,, ,, ,, ,,
६. खद्दर का अर्थशास्त्र रिचर्ड बी. ग्रेग ,, ,, ,,
७. आशा की राह किस ओर ,, ,, ,, ,,
८. भोजन सर राबर्ट मैक्केरिसन, मैकमिलन कम्पनी
९. स्वास्थ्य बुलेटिन २३,२८,३०; भारत सरकार-प्रकाशन
१०. भारत और बर्मा में गेहूँ का व्यापार ,, ,, ,, ,,
११. मद्रास में चावल के० रामय्या, सरकारी प्रेस, मद्रास
१२. स्वास्थ्य और बीमारी में हमारा भोजन हेरी बेंजामिन, हरिजन आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद

हाथ-चक्की

संक्षिप्त इतिहास :१:

हमारे भोजन में अधिक भाग अनाजों का ही होता है। हमारे देश में धान, गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा, रागी, मक्का तथा कूटू जैसे अन्न पैदा किये जाते हैं। इनमें से चावल का मुख्य स्थान है और लगभग आधी जनसंख्या का वह मुख्य भोजन है। भारतवर्ष के अधिकांश क्षेत्र में धान पैदा किया जाता है। उसका क्षेत्रफल ६३५ लाख एकड़ है; जो कुल जोत का २६ प्रतिशत है। धान के बाद गेहूँ का स्थान है, जिसका रकबा २०३½ लाख एकड़ है, और करीब-करीब कुल जोत का ८·३ प्रतिशत है। धान की पैदावार लगभग २३९ लाख टन है, जब कि गेहूँ की केवल ५६½ लाख टन है। सब प्रकार के अनाजों का क्षेत्र और उनकी उपज की सूची नीचे दी जा रही है। ये आँकड़े भारत सरकार द्वारा प्रकाशित सन् १९५० के विवरण से लिये गये हैं।

जोत के अन्तर्गत भूमि का क्षेत्रफल —२४,३८,३२,००० एकड़

क्षेत्र	[१००० एकड़ में]	पैदावार [१००० टन में]
धान	६,३५,२८	२,२५,९७ बिना छिलके के (चावल)
गेहूँ	२,०३,५०	५६,५०
जौ	७६,०५	२२,०६
ज्वार	३,४३,३४	५०,२२
बाजरा	१,६५,७२	२१,७१
रागी	५५,८०	अप्राप्त
मक्का	६९,४९	२०,७२
चने की दाल	१,९३,०२	४५,३५
दूसरे अनाज और दालें	४,०९,१२	अप्राप्त
अनाजों और दालों का कुल योग—	२१,५१,३२	

सब अनाज साधारणतः दो भागों में विभाजित हो सकते हैं:—(१) धान-जो केवल कूटा जाता है और (२) गेहूँ तथा दूसरे प्रकार के सब अनाज, जिनको खाने योग्य बनाने के लिए पीसने की जरूरत होती है। ऐसा माना जाता है कि मनुष्य ने सभी अनाजों में धान को सबसे पहले पैदा किया होगा। श्री के० रामय्या, जो एक उच्च कोटि के कृषि-अन्वेषक हैं, अपनी 'मद्रास में धान' नामक पुस्तक में इस प्रकार लिखते हैं: "वानस्पतिक अनुसंधानों से ज्ञात होता है कि हमारी प्रत्येक फसल का जन्म आदिकाल की जंगली वनस्पतियों से हुआ। आधुनिक उन्नत अवस्था की फसलों के विषय में यह अनुमान लगाया जाता है कि यह विकसित अवस्था उन जंगली वनस्पतियों पर कई प्रकार के किये गये प्रयोगों का परिणाम है। आज यह बताना एक प्रकार से सम्भव है कि आधुनिक काल के गेहूँ और गन्ना किस मूल वनस्पति के विकसित रूप हैं, और इनका जन्मस्थान कहाँ है, जहाँ से ये सारे संसार के भिन्न-भिन्न भागों में फैल गये। लेकिन धान के विषय में जो जानकारी उपलब्ध है, उससे उसके बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। यह केवल कल्पना का विषय है। भारतीय शास्त्रों में उसका वर्णन मिलता है। सभी पूजा-पद्धतियों में चावल का प्रयोग होता है, जिससे चावल की प्राचीनता का प्रमाण मिलता है। तमिल के कुछ अति प्राचीन पुराणों में भी, अलग-अलग धार्मिक कृत्यों में भिन्न-भिन्न प्रकार के चावलों का प्रयोग बताया गया है। इससे हमें इस बात का पता चलता है कि प्राचीन समय में भी चावल के विशेष प्रकारों का लोगों को पता था। चीन के एक प्राचीन ग्रन्थ में लिखा है कि ५००० वर्ष पूर्व वहाँ धान का बोना एक मुख्य धार्मिक कार्य माना जाता था।" 'भारत और बर्मा में चावल का व्यापार' नामक पुस्तक में लिखा है: "गेहूँ भारतवर्ष में अत्यन्त प्राचीनकाल से पैदा किया जाता रहा है। सिन्ध घाटी के ३००० वर्ष पुराने मोहनजोदड़ो के ध्वंसावशेषों से निकाले गये अनाजों में दो प्रकार का गेहूँ भी देखने में आया है। उसमें से छोटे प्रकार का गेहूँ आज भी दक्षिण-पश्चिम पंजाब के शुष्क जिलों में पैदा होता है।"

खाने की वस्तुएँ बनाने से पहले गेहूँ पीस लिया जाता है। पहले 'आटा' शब्द का मतलब गेहूँ का आटा ही था, परन्तु आज 'आटा' शब्द

सभी प्रकार के अनाजों के आटे के अर्थ में प्रयुक्त होता है। बहुत प्राचीनकाल से आटा पीसने के लिए पत्थर-चक्की का उपयोग होता रहा है।

कूटना

चक्की के आविष्कार से पहले पत्थर के गोल मूसल का उपयोग किया जाता था। उसकी मोटाई मनुष्य की कलाई के बराबर होती थी। इससे अनाज तथा अन्य वस्तुओं को कूटकर उनका चूर्ण कर लिया जाता था। यह मूसल विशेष प्रकार के सख्त पत्थर का बनाया जाता था। नीचे एक दूसरा पत्थर रखकर मूसल से कूटा जाता था। इस प्रकार लगातार कूटे जाने से नीचेवाले पत्थर में गढ़ा पड़ने लगा होगा।

'मल्लर्स'

इसके बाद ऐसा पता लगा कि कूटने के बदले नीचेवाले पत्थर के गढ़े में गीला अनाज डालकर मूसल से पीसना शुरू हुआ। यह तरीका दक्षिण भारत के 'इडली' बनाने के तरीके से मिलता-जुलता है। मूसल कई प्रकार के होते थे, उनका प्राचीन गोलाकार रूप बदलते-बदलते आज के लम्बाकार मूसल की सूरत में आया। नीचे प्रयोग होनेवाले पत्थर में प्याले की तरह गढ़ा होता था। इस पत्थर और मूसल को पाश्चात्य देशों में 'मल्लर्स' नाम दिया गया। कई सभ्य देशों में आज भी इनका प्रयोग होता है।

चित्र संख्या १
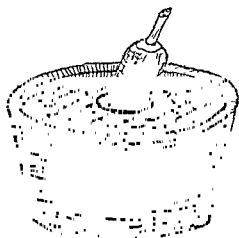
इडली स्टोन

सैडिल स्टोन

प्राचीनकाल के 'मल्लर्स' के बाद और फिर आविष्कृत चक्की के पहले पीसने के जो साधन रहे होंगे, उन्हें 'सैडिल स्टोन' कहा गया है। यह पीसने का पहला पूर्ण साधन था। इसमें नीचे का पत्थर खोखला

होता था, जिसमें अनाज डालकर ऊपरवाले पत्थर के घर्षण से उसे चूर्ण बना लिया जाता था।

जाँता (क्वेर्न)

'अनाज पिसाई का इतिहास' पुस्तक के रचयिता श्री रिचार्ड बेनेट के अनुसार पिसाई के पहले पूर्ण यंत्र जाँता (क्वेर्न) का आविष्कार, ईसा से दो शताब्दी पूर्व इटली में हुआ था। 'क्वेर्न' के आविष्कार ने पिसाई के साधनों में क्रान्ति उत्पन्न कर दी थी। पत्थर-चक्की का क्रमशः घूमना अनाज पीसने का एक अनिवार्य सिद्धान्त बन गया। बड़े-बड़े पिसाई के कारखाने आज भी इसी सिद्धान्त के अनुसार कार्य करते हैं। प्राचीन जाँता गोलाकार था और मध्यकालीन 'जाँता' से भिन्न था। नीचे का पत्थर इस विचार से गुम्दाकार बनाया गया था कि चक्की से आटा नीचे उतर सके। यह तरीका बहुत दिनों तक नहीं चला। उसका गुम्दाकार क्रमशः लोप हो गया और दोनों पत्थर चिपटे बनने लगे। ऊपरवाले पत्थर में अनाज डालने के लिए एक पनारी थी। ऊपर के पत्थर को घुमाने से अनाज धीरे-धीरे अंदर जाता और आटा बनकर चारों ओर गिरता था। ऊपरवाले पत्थर में एक मुठिया लगायी गयी जिसको पकड़कर घुमाते थे।

यंत्र-शक्ति द्वारा चालित चक्की

कुछ अन्वेषकों ने पत्थर-चक्की में प्रथम बार यंत्र-शक्ति के प्रयोग का श्रेय रोम निवासियों को दिया। उन्होंने पनचक्की का आविष्कार किया। एक लकड़ी के पहिये से लगे धुरे पर चक्की के पाट रखकर, गिरते हुए पानी के दबाव से पाट घुमाया जाता था। आज की पनचक्की का पूरा विवरण इस पुस्तक के ग्यारहवें अध्याय में दिया गया है। इसके बाद पनचक्कियाँ चलने लगीं। ऐसा माना जाता है कि १८वीं शताब्दी के अन्त में ब्रिटेन की एक आटा-चक्की में भाप-शक्ति का प्रयोग किया गया था। आटा पीसने के बड़े-बड़े कारखानों के चालू होने के पूर्व यंत्र-शक्ति से चालित चक्की में लगे पत्थर ४ से ४½ फुट व्यास के और १ फुट मोटे हुआ करते थे।

'रोलर मिल्स' (बड़े कारखाने)

'रोलर मिल्स' वे बड़े कारखाने हैं, जिनमें कई रोलरों से गेहूँ को कुचलकर आटा बनाया जाता है। उन रोलरों में कई प्रकार के मोटे और बारीक दाँत बने होते हैं, और अनाज को इन रोलरों तक पहुँचने के पूर्व कई यांत्रिक क्रियाओं को पार करना पड़ता है। रोलर मिल्स में सारा कार्य यंत्र द्वारा ही होता है। अनाज के कारखाने में पहुँचने से लेकर मैदा, रवा बनाने की क्रिया और बाजार के लिए तैयार करने की सारी क्रियाओं तक, विना मनुष्य के हाथ लगाये ही यंत्र के द्वारा होती है। रोलर मिल्स के आविष्कार का इतिहास १९वीं शताब्दी के पूर्वार्ध से आरंभ होता है।

[आटा पीसने के उद्योग के आविष्कार तथा उसके विकास-क्रम का यह संक्षिप्त इतिहास इनसाइक्लोपेडिया ब्रिटेनिका के ११वें संस्करण से संकलित किया गया है।]

❀ ❀ ❀

चित्र संख्या २

मगनवाड़ी, वर्धा का हाथ-चक्की विभाग

आटा पीसने के बड़े कारखाने :२:

आटा पीसने के बड़े-बड़े कारखानों का आविष्कार औद्योगिक सभ्यता का एक महत्त्वपूर्ण कदम है। सारे देश में आटा पीसने के लगभग ८० बड़े कारखाने हैं। इन कारखानों की मशीनें इंग्लैंड और जर्मनी से बनकर आती हैं। आटा पीसने की एक मिल कई लाख रुपयों की लागत से खड़ी होती है। ये मिलें प्रथम श्रेणी के बढ़िया आटे से लेकर द्वितीय और तृतीय श्रेणी का आटा और भूसी तक तैयार करती हैं।

आटा पीसने के इन कारखानों की कार्य-प्रणाली का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है*। छोटी-छोटी चक्कियों में पिसाई की क्रिया एक बार में होती है; परन्तु बड़े-बड़े कारखानों में गेहूँ कई प्रकार की यांत्रिक क्रियाओं को पार करता है, और प्रत्येक यांत्रिक क्रिया में यह क्रमशः महीन होता जाता है। एक यांत्रिक क्रिया में महीन होने के बाद उसको छलनी में डालकर रवा और आटे को अलग कर मोटे रवे को दूसरी मशीन में डाला जाता है। इस प्रकार कई यांत्रिक क्रियाओं के बाद तैयार किये माल को एक जगह लाकर बाजार के लिए बोराबन्दी करते हैं।

कई छलनियों और सफाई की मशीनों से गेहूँ का कूड़ा-कर्कट तथा अन्य वस्तुएँ और अशुद्धियाँ साफ कर ली जाती हैं। इसके बाद गेहूँ को मलकर धो लिया जाता है। चुम्बकीय शक्ति द्वारा गेहूँ में मिले लोहे आदि धातुओं के टुकड़ों को इसलिए अलग कर लिया जाता है कि मशीन खराब न होने पाये। सफाई के बाद गेहूँ में यथोचित नमी कायम रखने के लिए उसको एक विशेष यांत्रिक क्रिया से गुजरना पड़ता है। इस क्रिया का यह अर्थ है कि गेहूँ की भूसी और गूदी अलग-अलग हो सके। गेहूँ की उचित नमी कायम रखने के लिए नमी को आवश्यकतानुसार बढ़ाते-घटाते हैं। जैसे-जैसे गेहूँ यंत्रों से पिसता जाता है, वैसे-वैसे उसकी नमी का एक अंश सूखता जाता है, फिर

---

* 'भारत और बर्मा में गेहूँ का व्यापार', पृष्ठ २१७।

भी नमी का एक अंश पदार्थ में अन्त तक बना रहता है। नतीजा यह होता है कि तैयार किया पदार्थ गेहूँ के वजन से कुछ-न-कुछ ज्यादा रहता है। इस वजन को 'यांत्रिक लाभ' कहते हैं।

"नीचे दिये गये आँकड़ों से इस 'यांत्रिक लाभ' के बारे में थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त हो जायगी—

गेहूँ की खरीद १९३४-३५ में—	८,७३,९०२ मन
साल के अंत में मौजूद गेहूँ का स्टाक—	३,००५ ,,
गेहूँ इस्तेमाल किया गया—	८,७०,८९७ ,,
गेहूँ में मिली वस्तुएँ तथा अशुद्धियाँ—	१८,२३५ ,,
पीसा गया गेहूँ—	८,५२,६६२ ,,
प्राप्त पदार्थ का वजन—	८,८४,७४५ ,,
कुल यांत्रिक लाभ—	३२,०८२ ,,

नमी के कारण प्राप्त लाभ साफ गेहूँ का ३·८ प्रतिशत है।"

बड़ी आटा-मिलों में मैदा प्रायः ४१ प्रतिशत, आटा ३४ प्रतिशत, सूजी और रवा ८ प्रतिशत और भूसी १७ प्रतिशत प्राप्त होती है। इन मिलों की कार्यक्षमता २० से २१ मन तक प्रति घंटा है, और अनुमानतः २० लाख टन प्रतिवर्ष है। परन्तु सौभाग्य से ये अपनी आधी गति से ही कार्य करती हैं और इनमें कुल मिलाकर साल में १० लाख टन गेहूँ पीसा जाता है।

इन आटा-मिलों का मुख्य काम मैदा बनाना है। आहार-विशेषज्ञों से लेकर सामान्य जनता तक, सब लोगों का एकमत है कि मैदा खाने योग्य पदार्थ नहीं है। श्री मैक्केरिसन अपनी 'भोजन' नामक पुस्तक में लिखते हैं :

"मैदा गेहूँ के अंदर की गूदी से बनता है। इसके तैयार करने में गेहूँ का वह ऊपरी भाग, जिसमें अच्छे प्रकार का प्रोटीन, विटामिन और अधिकांश क्षार रहते हैं, निकाल फेंकते हैं। मैदे में कार्बोहाइड्रेट और अपाच्य तथा गरिष्ठ प्रोटीन रह जाता है। मैदा बनाने में शरीर की पोषक एक आवश्यक वस्तु मैंगनीज नष्ट हो जाती है। इस प्रकार तुल्य खाद्य पदार्थों में मैदा आटे से भी बहुत ही निम्न कोटि का पदार्थ है। मैदा सब प्रकार के बिनाकुटे चावल, रागी, जौ आदि से भी

हल्के दर्जे का होता है और इसका प्रयोग इन अनाजों के स्थान पर भी न करना चाहिए। लेकिन आजकल भारत के शहरों में रहनेवाले लोग मैदे का अधिक प्रयोग करने लगे हैं, क्योंकि मैदे की बनी पावरोटी आसानी से मिल जाती है और इसका कारण यही है कि ऐसी चीजें खरीदने तथा पीसने से लेकर पकाने तक की सारी मेहनत नहीं करनी पड़ती।

"जो चीजें हमें आसानी से बिना अधिक कष्ट उठाये मिलती हैं, उनका हमें गहरा मूल्य चुकाना पड़ता है। मैदे की बनी चीजों में भले ही हम कम पैसे खर्च करें, पर उसके कारण स्वास्थ्य पर हमें बहुत खर्च करना पड़ता है। या फिर हम गेहूँ की भूसी, प्रोटीन, क्षार और विटामिनवाले अन्य खाद्यों को खरीदें, क्योंकि मैदा बनाते समय ये चीजें आटे से निकालकर फेंक दी जाती हैं। मैदे की डबलरोटी बनाने में खमीर (ईस्ट) का प्रयोग किया जाता है। इस खमीर में विटामिन 'बी' होता है। इसलिए कुछ लोग सोचते हैं कि मैदे की डबलरोटी में हमें पर्याप्त विटामिन 'बी' प्राप्त हो जाता है। लेकिन यह भ्रममात्र है, क्योंकि मैदे की डबलरोटी में प्रयुक्त 'ईस्ट' खमीर की मात्रा बहुत कम होती है और उससे प्राप्त विटामिन 'बी' किसी भी हालत में उतने ही साधारण आटे से प्राप्त विटामिन की बराबरी नहीं कर सकता।"

इन बातों से स्पष्टतः प्रमाणित होता है कि आटा पीसने की बड़ी मिलें, हमारे राष्ट्र के मुख्य भोजन के एक आवश्यक तत्त्व को नष्ट कर डालती हैं, जिसकी पूर्ति करना असंभव है। इसके कारण राष्ट्र का सामान्य स्वास्थ्य गिरता जा रहा है और लोग सहज ही नाना प्रकार के रोगों के शिकार बन रहे हैं। जब यह स्थिति है, तो सरकार को तत्काल इस उद्योग को बंद करने के लिए निश्चित कदम उठाना चाहिए। इस उद्योग में लगी पूँजी तथा मशीनों को दूसरे लाभप्रद कार्यों में लगाया जा सकेगा।

चावल के विषय में यह कहा जाता है कि कारखाने में कूटने और पॉलिश करने से वह अधिक समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। लेकिन भूसी, जिसमें सभी पौष्टिक प्रोटीन, क्षार और विटामिन होते हैं, चावल को सफेद करने में पूरी तरह निकाल देते हैं। इस प्रकार

वना सफेद चावल कीड़े और पतिंगों तक के खाने योग्य नहीं रहता। इसी कारण चावल अधिक समय तक रखा जा सकता है। पर मैदे में अधिक दिनों तक टिकाये रखने की बात भी नहीं रह जाती। हम देख चुके हैं कि बाजार के लिए तैयार किये गये मैदे में ३·८ प्रतिशत नमी बनी रहती है, जिसके कारण मैदा जल्दी सड़ने लगता है।

"यह तैयार मैदा बोरों में भरकर पक्के गोदामों में रखा जाता है। नमी से बचाने के लिए उत्तरप्रदेश और बंगाल की कुछ मिलों में लकड़ी की पट्टियों पर बाँस की बनी चटाइयाँ बिछाकर उन पर मैदा रखते हैं। गर्मी के दिनों में मैदे को बहुत थोड़े समय तक ही रखते हैं। ऐसा मानते हैं कि जाड़े में ५-६ सप्ताह तक वह खराब नहीं होता, बरसात में मैदा जल्दी खराब होने लगता है, और २-३ महीने तक रखने पर लगभग दो प्रतिशत खराब हो जाता है। ताजा पिसा हुआ मैदा भी पहले सप्ताह के अन्दर १ प्रतिशत सूख जाता है* ।"

ये आटा मिलें जो क्षति पहुँचाती हैं, वह अक्षम्य है। जब कि हमारा देश खाद्य-पदार्थों की कमी के खतरे से खाली नहीं, ऐसी अवस्था में इन मिलों को बन्द कर देने के लिए केवल यह एक कारण ही पर्याप्त है। १७ प्रतिशत गेहूँ को ये मिलें नष्ट कर डालती हैं। प्रतिवर्ष १,७०,००० टन भूसी गेहूँ से अलग निकालकर बेची जाती है, जिसको शहर और कस्बों में पाली जानेवाली गायें, भैंसें या घोड़े खाते हैं। सारे देश की करीब ३० प्रतिशत भूसी कण्टून्मेंट के घोड़े खा जाते हैं। इतनी महान् क्षति बर्दाश्त करने का कोई औचित्य नहीं है। भारत के प्रत्येक नागरिक पर साल भर में औसतन १७० पौंड गेहूँ की खपत होती है। बेकार जानेवाले गेहूँ की जो १,७०,००० टन भूसी निकालकर पशुओं को खिला देते हैं, उससे २२,४०,००० पुरुषों का साल भर गुजारा चल सकता है। बहुमूल्य प्रोटीन, क्षार और विटामिन आदि सत्त्वों की हानि ऊपर से है। जो सरकार देश के स्वास्थ्य की रक्षा करने को उत्सुक है, उसका कर्तव्य है कि वह इस मामले में कदम उठाये। सरकारी हस्तक्षेप के लिए यह सर्वथा उपयुक्त मामला है। ❀ ❀ ❀

* 'भारत और बर्मा में चावल का व्यापार' पुस्तक से।

यंत्र-शक्ति द्वारा चालित चक्कियाँ

यन्त्र-शक्ति से चालित चक्कियाँ दो प्रकार की होती हैं : (१) तेल से चलनेवाली और (२) बिजली से चलनेवाली। ये दोनों प्रकार की चक्कियाँ अधिकतर नगरों में चलती हैं। जिन नगरों में बिजली नहीं है, वहाँ तेल की चक्कियाँ चलती हैं। देश में जैसे-जैसे बिजली का प्रचार बढ़ रहा है, वैसे-वैसे बिजली-चक्कियों की संख्या भी बढ़ती जा रही है और तेल की चक्कियाँ पुरानी पड़ती जा रही हैं। बिजली-चक्कियों में कई प्रकार की सुविधाएँ होती हैं। इनमें से अधिकतर चक्कियाँ किराये पर चलती हैं। बड़ी आटा-मिलों की भाँति ये चक्कीवाले गेहूँ खरीदकर आटे का व्यापार नहीं करते। तेल-चक्की के कम प्रचार का कारण यह है कि उसे चलाने और बंद करने में देर लगती है। जब चाहे तब तुरंत उसके इञ्जन को रोका नहीं जा सकता, उसके इञ्जन की आवाज बहुत होती है और धुआँ भी बहुत निकलता है। इन कारणों से कई जगह म्यूनिसिपैलिटियाँ इन्हें लगाने की अनुमति नहीं देतीं।

इस समय भारत में ३००० बिजली-चक्कियाँ और १३००० तेल-चक्कियाँ काम कर रही हैं। एक चक्की ३० मन अनाज प्रतिदिन पीस सकती है, यानी इन छोटी-छोटी चक्कियों से साल भर में ५१३ लाख टन अनाज पीसा जा सकता है। परन्तु उनकी शक्ति का ४० प्रतिशत ही उपयोग में आता है और साल भर में उनसे कुल २० लाख टन अनाज पीसा जाता है।

एक बिजली-चक्की के कार्य-विवरण के आँकड़े इस प्रकार हैं :

माह	पिसा अनाज (मनों में)
जनवरी	४०२.५
फरवरी	३६५.६
मार्च	४६४.७
अप्रैल	५२७.८
मई	४१४.७
जून	४६२.८
जुलाई	४८३.८
अगस्त	३५४.५
८ माह का कुल योग	३,४७६.४

इससे यह साबित होता है कि ४३४½ मन तक एक माह में पीसा, जो पूरी शक्ति के हिसाब से पन्द्रह दिन का कार्य है। इसलिए यह बात गलत है कि यन्त्र-शक्ति से चालित चक्कियों की तादाद बढ़ने से पिसे अनाज की भी उसी मात्रा में तादाद बढ़ जाती है। ऐसे कितने ही उदाहरण हैं कि यन्त्र-चालित चक्कियाँ काम न मिलने से बंद हो गयी हैं।

इन चक्कियों की यांत्रिक कार्य-क्षमता बैल-चक्की से ज्यादा नहीं है। दो बैलों की शक्ति एक 'हार्स पावर' के बराबर होती है। दो बैल की चक्की से एक घण्टे में कम-से-कम २५ सेर आटा पीसा जाता है। इस प्रकार ८ घण्टे के एक दिन में ५ मन अनाज पीसा जाता है। १० हार्स पावर की यन्त्रवाली चक्की से १६ मिनट में १ मन ज्वार और २० मिनट में १ मन गेहूँ पीसा जाता है। इन दो प्रकार के अनाजों की पिसाई के समय का औसत हम १८ मिनट के हिसाब से मान लें, तो एक चक्की ८ घण्टे में २६⅔ मन अनाज पीसती है। और १० हार्स पावर चक्की के बराबर १० बैल-चक्कियाँ, एक दिन में ८ घण्टे काम करके ५० मन अनाज पीसती हैं। इस प्रकार यन्त्र-चक्की में बैल-चक्की की केवल ५३⅓ प्रतिशत कार्य-क्षमता है। यानी बिजली-चक्की की क्षमता बैल-चक्की से आधी ही रहती है।

एक बैल-चक्की में कार्य करनेवाले दो बैलों को अच्छी तरह खिलाने का खर्च कम-से-कम २ रुपया रोज आता है, किन्तु बिजली-चक्की से उतना ही गेहूँ पीसने में १¼ रुपया और तेल-चक्की में ११ आने से ज्यादा खर्च नहीं पड़ता।

बिजली-चक्कियों से देश में बेरोजगारी बढ़ती है। बैल-चक्की को सँभालने के लिए एक व्यक्ति की जरूरत होती है। एक बैल-चक्की में दो बैलों के खिलाने का खर्च २ रुपया और एक व्यक्ति की मजदूरी एक रुपया आठ आना, इस प्रकार कुल तीन रुपया आठ आना खर्च से ५ मन अनाज पीसा जाता है।

एक बिजली-चक्की केवल एक आदमी से लगभग ५½ बैल-चक्कियों का काम करती है। इसका अर्थ यह हुआ कि एक बिजली-चक्की ४½ व्यक्तियों को और ४¼ जोड़ी बैलों को बेकार कर देती है। अगर इस मानव-दृष्टिकोण को सरकार अपने सामने रखे, तो बिजली-चक्की में खर्च होने-

वाली शक्ति के लिए ५½ × ३।।) यानी १९।) चक्कीवालों से लेना चाहिए, जब कि उनसे केवल ६।।=)।। लिया जाता है। ३० सेर अनाज पीसने में लगभग १ यूनिट बिजली खर्च होती है। इस प्रकार एक दिन में ८ घंटे काम करके, २६⅔ मन अनाज पीसने के लिए, ३५ ५/९ यूनिट बिजली खर्च होगी, जिसकी कीमत १९ रुपया ४ आने लेनी चाहिए। यानी १ यूनिट की कीमत ८ आने ८ पाई हुई। इसी प्रकार एक बॅरल डीजल तेल की कीमत जो बैल-चक्की से ८० गुना काम करता है; २८० रुपया ली जानी चाहिए, जब कि आज उसका केवल ५५ रुपया ही लिया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि हर ५ मन अनाज की पिसाई में बिजली खर्च में २।), और तेल खर्च में २।।।-), इन चक्कियों के चलानेवालों को सरकार की ओर से परोक्ष रूप से सहायता मिल जाती है+ ।

हमारे देश में काम करनेवालों की कमी नहीं है। हमारे उद्योग जहाँ तक हो सके, खेती के साथ चलनेवाले और गाँवों में फुरसत के समय में काम करने योग्य होने चाहिए। गाँवों में बैल ही चालक-शक्ति का एक अच्छा साधन है। इसलिए हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हमारे उद्योग ऐसे हों, जिनसे बैल और मनुष्य-शक्ति का पूरा-पूरा उपयोग हो। इसलिए इस बात की जरूरत है कि इन यंत्र-चक्कियों को सस्ती बिजली के रूप में जो परोक्ष सहायता देकर प्रोत्साहित किया जाता है, उस पर सरकार को पुनः विचार करना चाहिए। ❀❀❀

+ सर्वोदय वेतन स्तर के अनुसार लिये गये आंकड़े परिशिष्ट नं० १ में देखिये।

हाथ-चक्की

'स्वास्थ्य और बीमारी में आपका भोजन' नामक पुस्तक में श्री हैरी बेंजामिन इस प्रकार लिखते हैं :

"शरीर की आवश्यकताओं के अनुसार भोज्य-पदार्थों का आहार में शामिल करना और उचित मात्रा में उसका सेवन करने के अलावा आहार से पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए आहार शुद्ध और प्रकृति से जैसा मिले वैसा ही लेना चाहिए।"

शुद्धता और ताजगी के खयाल से ही हाथ-चक्की का आविष्कार हुआ था। मय भूसी के ताजे पिसे गेहूँ के आटे की रोज आवश्यकता होती है, और इसे प्राप्त करने का एकमात्र साधन हाथ-चक्की ही है।

भारत में बहुत पुराने जमाने से हाथ-चक्की हमारे रसोईघर का एक मुख्य अंग रही है। हाथ-चक्की की जरूरत गेहूँ खानेवालों के लिए ही नहीं, वरन् चावल खानेवालों के लिए भी रवा, आटा आदि तैयार करने की दृष्टि से है। गेहूँ खानेवाले प्रदेशों में प्रातःकाल स्त्रियों का चक्की पीसने से लाभप्रद शारीरिक व्यायाम हो जाता है, जिससे उनका शरीर मजबूत और स्वस्थ बनता है तथा स्वस्थ, सुन्दर और प्रसन्न बालकों के उदय का मार्ग प्रशस्त होता है। स्त्री-वर्ग का शारीरिक विकास ही देश में सुख-शांति का आधार है। महिलाओं के स्वास्थ्य पर ध्यान न देने से परिवार में असंतोष, गर्भपात, रोगी बच्चों का जनन, बाल-मरण और नाना प्रकार के रोग आदि फैलते हैं। इस प्रकार हाथ-चक्की से दोहरा लाभ है : एक तो उससे स्वादिष्ट एवं पौष्टिक आटे की प्राप्ति होती है और दूसरे उससे उपयोगी व्यायाम का अवसर मिलता है। 'भोजन' नामक पुस्तक में डा० मैक्केरिसन हाथ-चक्की की प्रशंसा करते हुए कहते हैं : "गेहूँ के उपयोग का हाथ-चक्की सबसे अच्छा साधन है। इससे गेहूँ में रहनेवाले प्रोटीन, चर्बी, कार्बोहाइड्रेट, क्षार और विटामिन पूरे-पूरे प्राप्त होते हैं। उत्तर भारत की गेहूँ खानेवाली जनता इसी प्रकार से गेहूँ का उपयोग करती है। गेहूँ की भूसी में पचने योग्य प्रोटीन, विटामिन-'बी',

मैंगनीज और क्षार पाये जाते हैं। चूँकि उत्तर भारत में गेहूँ खाने-वाले व्यक्ति दूध और दूध की बनी चीजें, शाकभाजी और फल आदि का भी उपयोग करते हैं। इससे वे भारत में सबसे अधिक मजबूत, मेहनती और अच्छे कद के होते हैं। उनमें से जो लोग उचित मात्रा में दूध, शाकभाजी, फल आदि का उपयोग नहीं करते, वे कई प्रकार की बीमारियों के शिकार होते हैं; क्योंकि केवल आटा ही शरीर के सब पोषक तत्त्वों को पूरा नहीं कर सकता। जो लोग स्वयं गेहूँ पैदा करते हैं अथवा खरीद सकते हैं, वे ही इस प्रकार का ताजा और गुणकारी आटा प्राप्त कर सकते हैं। हमें प्रतिदिन भूसी समेत ताजा आटा पीसकर उपयोग में लाना चाहिए। यह आटा रखने से जल्दी ही खराब हो जाता है और इसलिए बाजार में बेचने के लायक नहीं रहता।"

कुछ लोगों में ऐसी धारणा उत्पन्न हो गयी है कि वे हाथ-चक्की को बिलकुल पिछड़ी और अक्षम वस्तु समझते हैं। पर यह धारणा गलत और सर्वथा थोथी है। भार उठाने के यंत्र पर एक मनुष्य आवश्यक होने पर कुछ क्षण के लिए बड़ी मुश्किल से ६० पौंड दबाव का प्रयोग कर सकता है, ३० पौण्ड दबाव थोड़ी देर तक मुश्किल से, २० पौंड के दबाव को थोड़ी देर आसानी से और पंद्रह पौंड दबाव को दिन भर ८ घंटे के काम में आसानी से सहन कर सकता है, वह भी २२० फुट प्रति मिनट के वेग से। इससे यह प्रकट है कि मनुष्य की कार्यशक्ति १५×२२०=३३०० फुट पौंड प्रति मिनट है और यह एक "हार्स पावर" का दसवाँ हिस्सा है। एक स्त्री हमारी सुधरी हुई हाथ-चक्की से ८ घंटे में १५ सेर अनाज पीसती है। ऊपर हम बता चुके हैं कि १० हार्स पावरवाली यंत्र-चक्की ८ घंटे में २६$\frac{2}{3}$ मन गेहूँ पीसती है। $\frac{1}{10}$ हार्स पावर की यंत्र-चक्की ८ घंटे में $\frac{4}{15}$ मन आटा पीसेगी। $\frac{1}{10}$ हार्स पावर की मनुष्य-शक्ति १५ सेर गेहूँ पीसती है। और उतनी ही शक्ति की यंत्र-चक्की १०$\frac{2}{3}$ सेर पीसती है, जो हाथ-चक्की का ७१.१ प्रतिशत है। ऐसी दशा में यह बात समझ में नहीं आती कि लोग न जाने क्यों हाथ-चक्की को पिछड़ी और अक्षम समझते हैं।

इस देश की जनता अभी तक हाथ-चक्की को अपनाये हुए है; इसका यही कारण है कि वह अपना सही मार्ग समझती है और देश के सर्व-सुलभ साधनों को लूटकर अपना स्वार्थ नहीं साधना चाहती। उसे

अत्यन्त प्राचीनकाल से इस बात का ज्ञान है कि भोजन ताजा ही करना चाहिए। यह इसीसे स्पष्ट है कि उसने हजारों वर्ष पहले ही आयुर्वेद शास्त्र की रचना कर डाली थी। ताजी वस्तुओं को खाने से होनेवाले लाभ का ज्ञान उसने आज भी नहीं भुलाया है। तभी तो वह आज भी भोजन की सामग्रियों को तैयार करने के ग्राम-उद्योग के साधन और हाथ-चक्की को अपनाये हुए है।

अंग्रेज सरकार इस देश के यंत्रीकरण की बड़ी इच्छुक थी, और उसने यंत्र-शक्ति से चलनेवाली आटा पीसने की चक्कियों का २०वीं शताब्दी के शुरू में श्रीगणेश किया। साथ ही तेल और बिजली-शक्ति भी बहुत सस्ते दामों पर देने की व्यवस्था की। इन सब प्रोत्साहनों के बावजूद ५० साल के बाद हम आज देश में १६ हजार यंत्र-शक्ति से चालित चक्कियों और ८० आटा पीसने की मिलों को लगभग ३० लाख टन अनाज पीसते पाते हैं। देश को जितने आटे की आवश्यकता है, यह उसका पाँचवाँ हिस्सा है। क्या इन तथ्यों से शेष ४/५ भाग आटे की मशीन से पीसने की आशा की जा सकती है? इसके लिए ९६००० यंत्र-चक्कियों और उनको चलाने के लिए बिजली, तेल आदि की बड़ी भारी व्यवस्था करने की आवश्यकता पड़ेगी।

एक साधारण यंत्र-चक्की में इतनी पूँजी लगती है :

भारी खर्च			
चक्की की कीमत	रु०	३२५	
१० हार्स पावर की बिजली मोटर	,,	१०००	
स्थान बनाने में खर्च	,,	८००	२१२५
दूसरे आवश्यक खर्च			
चक्की लगाने का खर्च	रु०	१००	
पट्टे आदि का खर्च	,,	७५	
बिजली लगवाने में	,,	१६५	
स्विच बोर्ड फिटिंग	,,	१८५	५२५
अमानत बिजली के लिए	,,		३००
		कुल	२९५०

इस प्रकार कुल खर्च ३००० रु० माना जा सकता है। तेल-चालित चक्की में १५०० रुपया अधिक खर्च है। (उसमें १००० रु० की बिजल मोटर के बजाय २५०० रु० का तेल का इंजन बैठाना होगा।)

हम देख चुके हैं कि बिजली-चालित चक्कियाँ कुल यंत्र-चक्कियों का ३/१६ है। शेष १३/१६ तेल-चालित चक्कियाँ हैं। उपर्युक्त अनुपात से हिसाब लगाने पर १८००० बिजली-चालित चक्कियों का खर्च ५,४०,००,००० रु० है और तेल से चलनेवाली ७८,००० चक्कियों का खर्च ३५,१०,००,००० रु० है। इनके लिए कुल ४०,५०,००,००० रु० की आवश्यकता होगी। इसमें अन्य खर्चों को शामिल नहीं किया गया है। क्या हमारे देश में इतनी खर्चीली व्यवस्था के लिए पर्याप्त धन है? यदि नहीं है, तो हम हाथ-चक्की को आसानी से अपनाकर राष्ट्र के स्वास्थ्य की रक्षा कर सकते हैं। आज भी देश यदि हाथ-चक्की अपनाने का निर्णय करे, तो अभी तक बन्द पड़ी कितनी ही हाथ और बैल-चक्कियाँ फिर से बाहर निकल पड़ेंगी और राष्ट्र-निर्माण के कार्य में योगदान करने लगेंगी। तब बहुत संभव है कि दूसरे साधनों की जरूरत ही न पड़े। फिर भी यदि हम मान लें कि आज यंत्र-चक्कियों द्वारा पीसे जानेवाले आटे के लिए हमें कुछ नयी चक्कियाँ बैठानी पड़ें, तो भी अधिक खर्च नहीं होगा। हम ऊपर हिसाब लगा चुके हैं कि एक हाथ-चक्की ८ घंटे में १५ सेर अनाज पीसती है। इस हिसाब से साल में ३०० दिन में ४ टन अनाज पीसा जायगा। ३० लाख टन अनाज पीसने के लिए ७॥ लाख हाथ-चक्कियों की आवश्यकता होगी, जिनकी लागत ३० रुपया प्रति चक्की के हिसाब से कुल २२५ लाख रुपयों से अधिक न होगी। अथवा, एक दिन में ५ मन अनाज पीसनेवाली ५६,००० बैल-चक्कियों की हमें जरूरत होगी। इनमें ८५० रुपया प्रति चक्की के हिसाब से ४७६ लाख रुपया और बैलों की प्रति जोड़ी ६५०) के हिसाब से बैलों की कीमत ३६४ लाख रुपया होगी। इस प्रकार सब मिलाकर ८४० लाख रुपया खर्च होगा। यह ८४० लाख रुपया देश में ही खर्च होगा, जिससे देश के दस्तकारों और पशु जाति-सुधारकों को काम मिलेगा। हमें ध्यान रखना चाहिए कि अज्ञान और गलतफहमी हमारे कर्तव्य-मार्ग को कहीं अंधकारमय न कर दे*।

---

* ३० लाख टन अनाज को पीसने के लिए विभिन्न प्रकार के कारखानों में लगनेवाली पूंजी और मनुष्य तथा पशु-शक्ति के उपयोग के अवसर के आंकड़े परिशिष्ट नं० २ में देखिये।

समय-समय पर पूछा जाता है कि इस स्थिति में सरकार को क्या करना चाहिए ? क्या सरकार के लिए यह उचित है कि वह आटा पीसने की यंत्र-चक्कियों और कारखानों पर रोक लगा दे और उन्हें बन्द कर दे ? अभी इस प्रकार का जबरदस्त कदम उठाने की जरूरत नहीं है। कोई भी कदम उठाने के लिए, सरकार के मन में पक्का निश्चय और विश्वास होना चाहिए। आरंभ में उसे यंत्र-शक्ति से चालित चक्कियों के उद्योग तथा हाथ-चक्की-उद्योग के बीच के हानि-लाभ पर विचार करना चाहिए। परोक्ष सहायता के रूप में जो बिजली-शक्ति सस्ती कीमत पर दी जाती है, जिसका कि जिक्र पिछले अध्याय में किया गया है, वह भविष्य में निजी स्वार्थ के लिए न दी जाय।

सरकार ऐसी संस्थाओं का सुधार कर सकती है जो प्रत्यक्ष उसके मातहत हैं। जैसे अस्पताल, छात्रालय, जेलखाने और कैण्टीन (भोजनालय) आदि। उसे इन संस्थाओं से आग्रह करना चाहिए कि वे अपने अहाते के भीतर हाथ-चक्की से तैयार आटे का ही इस्तेमाल करें, और कहीं का आटा न लें। मदे से बनी डबलरोटी, जो आज अस्पतालों में इस्तेमाल की जाती है, बिलकुल बंद होनी चाहिए। इस प्रकार के सुधारों से जनता में एक चेतना उत्पन्न होगी और धीरे-धीरे यंत्र-चालित चक्कियाँ पिछड़ी वस्तु मानी जानी लगेंगी और वे स्वतः बंद होने लगेंगी। इस तरह सरकार अधिकार का कम-से-कम प्रयोग करके भी अपने कर्तव्य को पूरा कर सकती है।

सारांश

१. हाथ-चक्की से ताजा और पौष्टिक आटा मिलता है।
२. इससे शारीरिक विकास का अच्छा अवसर मिलता है।
३. हाथ-चक्की से ज्यादा-से-ज्यादा मनुष्यों और बैलों को काम दिया जा सकता है।
४. हाथ-चक्की बहुत ही सक्षम यंत्र है।
५. अत्यधिक पूँजी की आवश्यकता होने से इस उद्योग का यंत्रीकरण असम्भव है।
६. हाथ-चक्की के इस ग्रामोद्योग को पुनर्जीवित और संगठित करना आसान है।

चक्की के पत्थर

आटा पीसने का काम आज भी मुख्यतः पत्थरों की सहायता से होता है। यंत्र-चालित चक्कियों में भी पत्थर के पाटों की आवश्यकता होती है। केवल थोड़ी-सी चक्कियों में ही पत्थर की जगह लोहे के पाटों का इस्तेमाल होता है। गेहूँ खानेवाले प्रदेशों में आटा पीसने की कुछ बड़ी मिलों को छोड़कर सभी चक्कियों में पत्थर के बने पाटों से ही काम होता है।

इस काम के लिए एक विशेष प्रकार के पत्थर की जरूरत होती है। अनाज पीसने के लिए पाट का वह भाग, जिससे काम लिया जाता है, खुरदरा होना चाहिए। पत्थर के दाने (रवे) खूब घने और मजबूत होने चाहिए, जिससे वे घिसकर आटे में न मिलें। ऐसा पत्थर हर जगह नहीं मिलता। देश में कई जगह खान से पत्थर निकाला जाता है। स्थानीय जनता उसका इस्तेमाल भी करती है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि वे सब पत्थर-चक्की के लिए बढ़िया ही होते हैं।

उत्तर प्रदेश में आगरा नगर चक्की के पत्थर का बड़ा बाजार है। यहाँ से देश के हर भाग में पत्थर जाता है। ऐसे पत्थर की खानें आगरा से २० मील दूर आगरा-जयपुर रोड पर फतेहपुर-सीकरी नामक ऐतिहासिक गाँव के इर्दगिर्द पायी जाती हैं। फतेहपुर-सीकरी एक छोटा-सा पंचायत नगर है, परन्तु पुरातत्त्व-विभाग की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण स्थान है—इसको सम्राट् अकबर ने १५५९ में बसाया था। ऊँची चोटी पर बना 'बुलन्द दरवाजा' अपने समय की उत्कृष्ट इमारत है, जिसके कला-कौशल को देखकर लोग आश्चर्य करते हैं। यहाँ के लाल किले में कितनी ही छोटी-मोटी इमारतें हैं, जो एक प्रकार के लाल पत्थर से बनी हुई हैं। इन इमारतों की पत्थर की तराशी, रेखा-चित्र की भाँति बने झरोखे, नक्काशी और खुदाई के काम को देखकर आँखें चकित हो जाती हैं। यह सब काम इस होशियारी और सफाई से हुआ है, जिसको देखकर ऐसा मालूम होता है कि मानो

यह काम लकड़ी पर किया गया है। भवन-निर्माण की यह सुन्दरता यहाँ के कलाकारों की शिल्पकला तथा कौशल का उत्कृष्ट उदाहरण है।

फतेहपुर-सीकरी में लाल पत्थर का अच्छा व्यापार होता है। यह पत्थर सीकरी और आसपास के गाँवों में खोदकर निकाला जाता है। यहाँ से केवल चक्कियाँ ही नहीं, बल्कि कई प्रकार के इमारती पत्थर भी बाहर भेजे जाते हैं। इस व्यापार से पत्थर का परंपरागत पेशा करनेवाले कारीगरों को काम मिलता है, जिससे वह कला-कौशल आज भी जीवित है। इस क्षेत्र की काफी जनता यह धन्धा करती है और पत्थर का व्यापार उसके जीवन-निर्वाह का एक बड़ा साधन है।

चक्की के पत्थर मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं: १. हाथ-चक्की का पत्थर जो करीब-करीब १८ इंच व्यास का ३ इंच मोटा होता है, २. यांत्रिक चक्कियों के अनुकूल भिन्न-भिन्न आकार के पत्थर और ३. बैल या पानी से चलनेवाली चक्कियों के लिए बड़े पत्थर।

(१) हाथ-चक्की का व्यापार लापरवाही से किया जाता है, क्योंकि यह व्यापार का मुख्य अंग नहीं समझा जाता। जब कोई व्यापारी वैगन, दो वैगन या इससे अधिक माल की माँग करता है, उस समय इस ओर ध्यान दिया जाता है, इसलिए यहाँ से जो चक्कियाँ मँगायी जाती हैं, उनको काम में लाने से पूर्व ठीक कराने की जरूरत होती है। घर पर इस्तेमाल करने के लिए चक्की मँगानेवालों को चक्की का यह ठीक कराना बहुत कठिन पड़ता है। कोई सूझ-बूझ-वाला और इस ग्रामोद्योग को सहायता पहुँचाने की इच्छावाला उत्साही व्यक्ति यदि इसके प्रचार का बीड़ा उठा ले, तो देश को काफी लाभ पहुँच सकेगा। चक्की के जो पत्थर बाहर भेजे जायँ, वे ठीक तरह से काट-छाँटकर दुरुस्त कर दिये जायँ और भेजने के पहले चक्की चलाकर देख ली जाय ताकि मँगानेवालों को दिक्कत न हो। यहाँ इस काम के कुशल कारीगर मिल जाने से एक सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि चक्की के बनवाने का खर्च कम पड़ने से, चक्की का मूल्य सीमित रहेगा। इस उद्योग में सेवाभावी कुशल व्यापारियों के लगने की जरूरत है।

(२) यांत्रिक चक्कियों में लगनेवाले पत्थर की माँग आजकल अधिक होती है। इनके पत्थर कम-से-कम साल भर में एक बार अवश्य बदले

जाते हैं। उनकी लगातार माँग आती रहती है। ग्राहक टूट जाने के डर से, यांत्रिक चक्कियों में लगनेवाले पत्थरों के गढ़ने में पूरी सावधानी वरती जाती है।

(३) यांत्रिक चक्कियों के अधिक फैलने से बैल-चक्कियाँ देहातों से खत्म हो रही हैं। इसलिए इनके पत्थर की माँग भी कम हो गयी है। इस कारण इन चक्कियों के व्यापार पर भी बहुत कम ध्यान दिया जाता है। पत्थर के व्यापारी हाथ-चक्की की तरह बैल-चक्की के पत्थर को भी अध-बना ही भेज देते हैं।

उत्तर प्रदेश के गृह-उद्योग-संचालक से प्राप्त यह जानकारी पाठकों को रुचिकर होगी :

"फतेहपुर-सीकरी में पत्थर के करीब ५० व्यापारी हैं। अन्दाजन दस हजार व्यक्ति इस उद्योग में लगे हैं। उनकी मजदूरी प्रति दिन १।) से लेकर २।) तक है। साल भर में करीब दस लाख रुपयों के पत्थर बाहर जाते हैं। इसमें करीब आठ लाख रुपयों के यंत्र-चक्कियों के पत्थर होते हैं। डेढ़ लाख के हाथ-चक्की के और पचास हजार के बैल-चक्की के पत्थर।

"भरकोल, फतेहपुर, कुंचपुरा, लालदरवाजा नगर और सीकरी आदि गाँवों की पहाड़ियाँ सरकारी नीलाम में व्यापारी खरीदते हैं। पत्थरों को विभिन्न आकारों में काटकर गोल बना लेते हैं। बाद में मिल या हाथ-चक्की के पाट बनाकर देश के विभिन्न भागों को भेजते हैं।

"इमारती काम और रेल की पटरियों पर बिछाने के लिए गिट्टी और बजरी तैयार होती है। इसका निर्यात भी करीब दस लाख रुपयों का होता है।"

आगरा के अलावा हलवद (सौराष्ट्र) में भी चक्की का पत्थर मिलता है। यहाँ ज्यादातर हाथ-चक्कियाँ ही बनती हैं। यहाँ की चक्कियाँ आगरा की चक्कियों से सुन्दर और आकर्षक होती हैं। यहाँ की चक्कियों को काम में लाने में सुविधा होती है। दूसरे, आगरा की चक्की खरीदने पर जो ऊपरी खर्च खरीदार को करना पड़ता है, वह यहाँ की चक्की खरीदने पर नहीं करना पड़ता; उतना कष्ट भी नहीं उठाना पड़ता।

पाठकों की सुविधा के लिए कुछ व्यापारियों के पते नीचे दिये जा रहे हैं :

१. श्री रामजीलाल शर्मा, डावर स्टोन मर्चेण्ट, फतेहपुर सीकरी।
२. श्री मक्खनलाल विशम्भरनाथ, फतेहपुर सीकरी, जिला, आगरा।
३. मेसर्स सिंघल ब्रदर्स, जमना रोड, आगरा।
४. श्री दलपतराम मनीशंकर, हलवद (सौराष्ट्र)।

❀ ❀ ❀

हम जो भोजन करते हैं, वह कई प्रकार की रासायनिक क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं द्वारा शरीर के विभिन्न साधारण ग्राह्य भागों में विभक्त हो जाता है। भोज्य-पदार्थों के पीसने और पकाने का तरीका हमारी पाचन क्रिया में सहायक होता है। इसलिए हमें भोज्य-पदार्थों के पीसने और पकाने की क्रिया के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उनमें से कोई पौष्टिक तत्त्व नष्ट न हो जाय।

प्रायः सभी अनाजों के अन्दर शर्करायुक्त रेशेदार अणु होते हैं, जिनमें एक बाह्य आवरण तथा एक अंकुर का भाग होता है। बाह्य आवरण से युक्त अणुओं में प्रोटीन, विटामिन और क्षार की मात्रा अधिक होती है। भिन्न-भिन्न प्रकार के अनाजों में इन परतों की गठन की शक्ति भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। पाचक रसों की क्रिया में सहायता पहुँचाने के लिए यह आवश्यक है कि इन आवरणों को तोड़कर भोज्य पदार्थ को जहाँ तक हो सके, महीन कर लिया जाय। यह क्रिया पाचन-अवयवों के कार्य को अधिक आसान बना देगी। ये सब पूर्व-पाचन-क्रियाएँ कहलाती हैं।

गेहूँ में यह ऊपरी झिल्ली लचीली और चिमड़ी रेशेदार होती है। चावल की अपेक्षा यह कठिनता से पचता है। गेहूँ को महीन पीसने पर भी इसका जो रेशेदार अंश बना रहता है, उससे एक लाभ यह है कि वह आँतों को साफ करने में सहायक होता है। अनाज के पीसने पर उसके ऊपर की भूसी तथा उसका गूदा महीन होता है। इस आटे से बने भोज्य पदार्थ पाचक रसों में आसानी से मिल जाते हैं। इसके आवरण के नीचे बहुत से अणु होते हैं, जिनमें प्रोटीन, क्षार और अंकुरों की मात्रा अधिक होती है और यह भाग विटामिन 'बी-१' तथा 'ई' से परिपूर्ण होता है। विटामिन 'बी' भोजन का अत्यावश्यक अंग है। यह शरीर के आन्तरिक अवयवों को, जैसे हृदय, मांसपेशियों तथा पाचन-ग्रंथियों को, जो फूलती तथा सिकुड़ती हैं, उन्हें ठीक काम करने में सहायक होता है। बेरीबेरी का रोग विटामिन 'बी-१' की कमी के कारण ही होता है। साधारणतया स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए विटामिन 'बी-१' की अत्यन्त आवश्यकता है। विटामिन 'ई' सन्तान-हीनता से रक्षा करता है।

विटामिन 'बी' १००-११० डिग्री से अधिक उष्णता सहन नहीं कर सकता। इसलिए इसकी रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि भोजन १०० डिग्री से अधिक गरम न किया जाय। दुर्भाग्य से यह गरमी यांत्रिक चक्कियों द्वारा तीव्र गति से पिसे आटे में अधिक होती है, जिससे विटामिन 'बी' नष्ट हो जाता है। यान्त्रिक चक्कियों से निकलते हुए आटे को सभी ने देखा होगा कि वह कितना गरम होता है और चक्की के अन्दर पिसते समय तो उसमें और भी अधिक उष्णता रहती होगी। इससे हम कह सकते हैं कि पिसते समय आटा १००-१२० डिग्री से अधिक गरम हो जाता है। यह स्पष्ट है कि आटे में विटामिन 'बी' नहीं रह जाता है। यह पीसने का गलत तरीका है। हमारे देहात के लोग सदा से हाथ-चक्की में पिसे आटे का उपयोग करते आये हैं, जिससे स्त्रियों का व्यायाम भी होता है और परिवार को ताजा पौष्टिक आटा भी मिलता है। जब हाथ-चक्की में आटा पीसा जाता है तो उसकी गति मर्यादित रहती है। अतः उसमें उतनी अधिक गरमी नहीं होती। हाथ की चक्की से पिसे आटे में स्वास्थ्यवर्द्धक सभी पोषक तत्त्व बने रहते हैं।

ऐसा प्रश्न किया जा सकता है कि क्या आटे से चपाती बनाते समय उसकी गरमी १०० डिग्री से अधिक नहीं होती? तब क्या विटामिन नष्ट नहीं हो जाता होगा? नहीं, चपाती बनाते समय आटे को पानी में गूँथते हैं और उसके बाद तवे पर डालकर चूल्हे में पकाते हैं। इस प्रकार पकाने से उसका सब पानी नहीं सूखता; किन्तु उसमें पानी का काफी अंश बना ही रहता है और पानी को उबालकर भाप बनाने के लिए १०० डिग्री गरमी चाहिए, इसलिए उसमें इतनी गरमी नहीं पहुँचती।

चावल पकाने के लिए यह आवश्यक नहीं कि उसे महीन किया जाय। पानी में उबालने से ही इसके आवरण अत्यन्त मुलायम होने के कारण फट जाते हैं और फूलकर आसानी से पचने योग्य बन जाता है।

इन साधारण बातों पर यदि ध्यान दिया जाय, तो हमारे भोज्य पदार्थों को सुपाच्य बनाने में जो हानि होती है, वह नहीं होगी। हमारे जैसे देश में, जहाँ अधिकतर पोषण खाद्यान्नों से ही प्राप्त किया जाता है, रंग चमकाने और अपने व्यक्तिगत लाभ के क्षुद्र उद्देश्य से यदि मिल-

मालिक, इन पोषक तत्त्वों से भी जनता को वंचित करें, तो यह दंडनीय अपराध माना जाना चाहिए। ❀❀❀

चित्र संख्या ३

जमीन पर गड़ी हुई 'देशी' चक्की
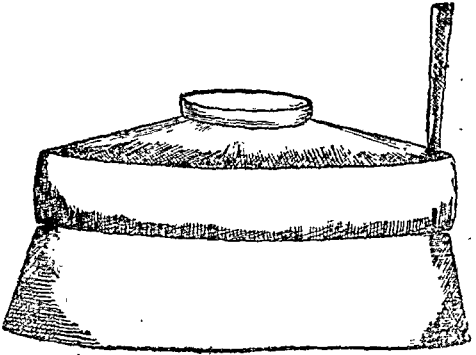
इस पुरानी चक्की द्वारा आटा पीसने पर इकट्ठा करते समय आटे में धूल और मिट्टी मिल जाती है।

चित्र संख्या ४

खाट पर स्थित 'देशी' चक्की

हाथ-चक्की और उसमें सुधार
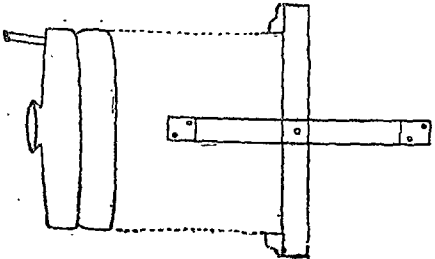
बहुत पुराने जमाने से पत्थर के बने दो गोल पाटों का चक्की में उपयोग होता आ रहा है। ऊपर के पाट में अनाज डालने का एक मुँह होता है, जिसमें अनाज डालते हुए चक्की को जोर से घुमाते हैं, जिससे अनाज पिसकर महीन होता है। नीचे का पाट जमीन पर गड़ा होता है, जिसके बीच एक लोहे या लकड़ी की खूँटी लगी रहती है। इस खूँटी के चारों ओर ऊपर का पाट घूमता है। ऊपरी पाट के बीच में दाने डालने के लिए मुँह होता है। इस मुँह के बीच में एक लकड़ी फँसी रहती है, जिसे 'मानी' कहते हैं। इस मानी में एक छेद होता है, जो नीचेवाली खूँटी से फँसा होता है। नीचे के पाटवाली खूँटी और ऊपर के पाट में लगी मानी से चक्की बराबर घूमती है।

ऊपर के पाट में एक मूठ लगी रहती है, जिसको पकड़कर चक्की घुमायी जाती है। साधारणतः चक्की के काम करनेवाले अन्दरूनी स्तर सपाट होते हैं। ऐसी चक्कियों से पीसने में कठिनाई होती है, क्योंकि मुँह से डाले हुए अनाज को फैलने का मौका नहीं मिलता। दूसरे अनाज जाते ही मुँह के निकट ही पिसकर आटा बन जाता है और वह देर में पूरे स्तर पर फैलकर नीचे गिरता है। आटा पाट में चिपक जाता है, जिससे घुमानेवाले को अधिक कष्ट होता है। इस कारण ऐसी चक्कियों पर ज्यादा मेहनत करने पर भी काम कम होता है। इन चक्कियों में आटा इकट्ठा करने की कोई व्यवस्था न होने की वजह से पिसा हुआ आटा जमीन पर गिरता है, जिससे उसमें मिट्टी आदि मिल जाती है। ऐसी हालत में यह कोई ताज्जुब की बात नहीं कि लोग ऐसी चक्कियों को पिछड़ी हुई समझें। (देखिये, चित्र संख्या ३)

हमें त्रुटियों को ध्यान में रखकर चक्की के सुधार पर विचार करना चाहिए।

पहली बात यह है कि चक्की जमीन पर नहीं बैठानी चाहिए। जमीन पर चक्की रखने से आटा साफ नहीं मिलता। चक्की उठाने, रखने लायक होने से सुविधा रहती है। चित्र में दिखाये गये तरीके से

एक लकड़ी के चौखटे पर चक्की को बिठा सकते हैं, जिससे चाहे जहाँ एक कपड़ा बिछाकर या लकड़ी के तख्ते पर चक्की को रखकर पीसा जा सकता है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, चक्की में पाट के अन्दरूनी स्तर के सपाट होने से काम कम होता है। इसके सुधार के लिए हमें ऐसी व्यवस्था करनी होगी, जिससे अन्दर डाला गया अनाज चारों ओर फैलकर ज्यादा तादाद में पीसा जा सके। इसके लिए नीचेवाला पाट बीच में थोड़ा उठा हुआ होना चाहिए। इससे दूसरा लाभ यह होगा कि अनाज पिसने पर जल्दी बाहर निकलेगा।

नीचेवाले पाट के ऊपर उठे होने से ऊपरी पाट का बीच में नीचे दबा होना जरूरी है, ताकि दोनों पाट ठीक से मिलकर पिसाई कर सकें। काम करनेवाले पाटों के स्तर चित्र में दिखाये गये तरीके से बने होने चाहिए। मुँह के निकट अनाज के अन्दर जाने की पर्याप्त जगह होनी चाहिए। दोनों पाटों के बीच की जगह किनारों की ओर धीरे-धीरे कम होती जाती है और अन्तिम बाहरी दायरे पर दोनों मिल जाते हैं। ऐसी बनी चक्की से यह लाभ होता है कि इसमें डाला हुआ अनाज धीरे-धीरे महीन होकर अच्छी तरह पिसता है और आटा बनने पर जल्दी बाहर निकलता है।

धुरी और मानी में सुधार

चक्की की धुरी और मानी बहुत बड़ी नहीं होनी चाहिए। वे जहाँ तक हो सकें, मजबूत और पतली बनायी जायँ। साधारणतः लोहे की धुरी और मानी हर जगह इस्तेमाल की जाती हैं। वे खैर और बबूल जैसी मजबूत लकड़ी की भी बनायी जा सकती हैं। धुरी ½ इंच व्यास की हो, जिसका ऊपरी सिरा कुछ नोकदार होना चाहिए। मानी एक घन इंच लोहे का एक टुकड़ा होता है। इस लोहे के टुकड़े में आधा इंच गहरा एक गढ़ा होता है। गढ़े में धुरी का नुकीला भाग फँसा लेते हैं, जिससे चक्की आसानी से चलती है। यह लोहे का टुकड़ा एक लकड़ी में फँसा रहता है। यह लकड़ी चक्की के मुँह के बराबर लम्बी, करीब २ इंच चौड़ी और २ इंच मोटी होती है। लोहे के इस टुकड़े और इस लकड़ी को 'मानी' कहते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि साधारण लोहे से बनी मानी के बजाय 'बाल बेरिंग' के

चक्की का खास विभाग
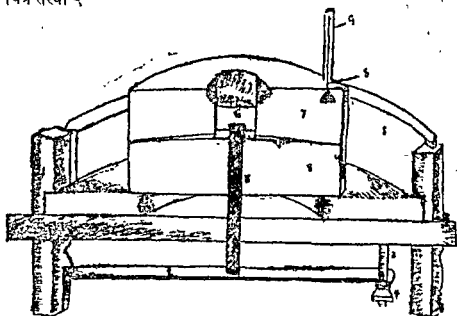
चित्र संख्या ५

१. चबूतरा, २. लगाया जानेवाला तख्ता, ३. बोल्ट, ४. नट, ५. एक्सल, ६. मानी, ७. ऊपर का पत्थर, ८. नीचे का पत्थर, ९. बाँस की मुठिया, १०. लोहे की मुठिया।

चित्र संख्या ६
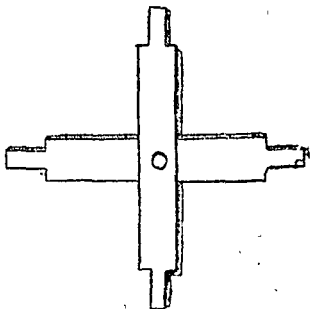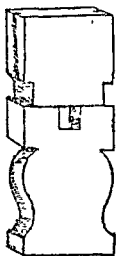
चबूतरे का पाया और खास

इस्तेमाल से चक्की में घर्षण कम होता है और वह आसानी से घूमती है। लेकिन 'बाल बेरिंग' का इस्तेमाल बेकार ही है, क्योंकि जब हम जानते हैं कि चक्की में ज्यादातर घर्षण पीसने से ही पैदा होता है और धुरी अथवा मानी के छोटे या दोषपूर्ण होने का इतना ज्यादा असर नहीं होता है। इसलिए धुरी और मानी की जगह महँगे 'बाल बेरिंग' के इस्तेमाल से कोई लाभ न होगा। विदेशी और महँगे 'बाल बेरिंग' ग्रामीण जनता की शक्ति के परे हैं। हाथ-चक्की में उनकी कोई जरूरत नहीं। 'बाल बेरिंग' का इस्तेमाल गति बढ़ाने के लिए होता है। हाथ-चक्की आखिर हाथ से चलायी जाती है, जिसकी रफ्तार सीमित होती है। इसलिए बाल बेरिंग का इस्तेमाल फिजूल खर्च और हमारी ग्रामीण व्यवस्था के प्रतिकूल है।

एक सुधार जो किया जा सकता है, वह यह है कि ऊपरी पाट को इस प्रकार रखा जाय कि उसका कुल भार धुरी पर रहे, जिससे चक्की चलानेवाले को केवल उसे घुमाते रहने की आवश्यकता हो।

मुठिया में सुधार

ऊपरी पाट में लगे करीब १ इंच मोटे लकड़ी के डंडे को 'मुठिया' कहते हैं। चक्की चलाते समय मुठिया मजबूत न रहने से चक्की की स्वतंत्र गति में बाधा पड़ती है। हाथ को भी तकलीफ होती है। यदि आध इंच मोटी लोहे की छड़ ऊपरी पाट में शीशे से पक्की कर दी जाय, तो यह दिक्कत नहीं रहती। इस पर एक इंच व्यास की बाँस की नली लगाकर घुमा सकते हैं।

चक्की का पीढ़ा

चक्की से गिरनेवाले आटे को इकट्ठा करने में शुद्धता और सफाई का ध्यान रखना चाहिए। जमीन पर गिरकर धूल या मिट्टी आदि न मिले, इसके लिए लकड़ी के पीढ़े की व्यवस्था सबसे अच्छी होती है। पीढ़े से एक सुविधा यह भी रहती है कि दो पाटों के बीच अन्तर कम-ज्यादा करने की व्यवस्था की जा सकती है। इससे मोटा दलिया या महीन आटा, जैसा भी चाहें, वैसा पीसा जा सकता है।

चित्र संख्या ७
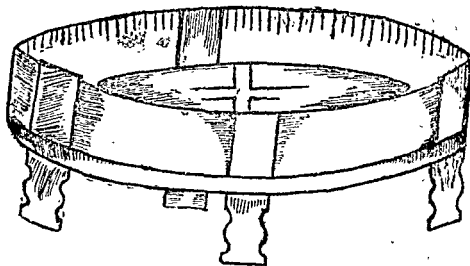
लकड़ी का बना पीढ़ा
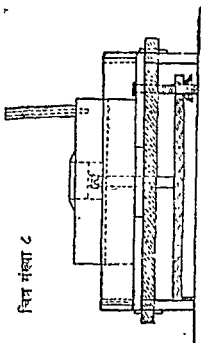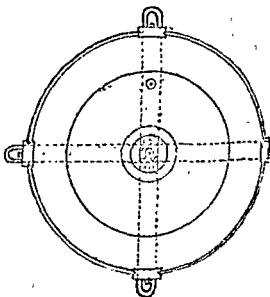
चित्र संख्या ८

पीढ़ा जमीन से करीब ६ इंच ऊँचा होना चाहिए और काफी चौड़ा होना चाहिए, जिससे आटे को इकट्ठा करने में सुभीता हो। चक्की पीढ़े के बीच में रखकर चलायी जा सकती है।

पीढ़ा बनाने का तरीका

१ फुट लम्बे, ३॥ इंच चौड़े और १॥ इंच मोटे लकड़ी के ४ टुकड़े लीजिये। चित्र संख्या ६ में बनी शक्ल के अनुरूप बनाइये।

नीचेवाले सिरे से ४ इंच ऊपर १ इंच चौड़ा और १३/४ इंच लम्बा एक सूराख प्रत्येक टुकड़े में कीजिये।

२ फुट ७ इंच लम्बा, १। इंच मोटा, ३॥ इंच चौड़ा लकड़ी का टुकड़ा लीजिये। इसमें चित्र संख्या ६ के अनुसार जोड़ लिया जाय।

चौखटे के सिरों को पायों में १। इंच × १ इंच के सूराख करके लगा दें। इस प्रकार सिरों को १॥ इंच लम्बाई तक ठीक से बनाना चाहिए।

चारों सिरों को पायों में मजबूती से लगाकर चौखटा तैयार कर लें।

आमने-सामने के पायों की अंदरूनी दूरी २६ इंच होनी चाहिए। ४३/४″ × १३″ × ३/४″ का लकड़ी का एक तख्ता लें। उसके ४ टुकड़े ऐसे करें, जिनको मिलाकर रखने से २६ इंच व्यास का गोल पाट बन जाय। इस गोल पाट को चौखटे में फिट कर दें। इस प्रकार चक्की का पीढ़ा तैयार हो जाता है। चक्की की चाल से पैदा होनेवाली हवा से उड़ते हुए आटे को रोकने के लिए पर्दे की आवश्यकता होती है। यह लकड़ी या टीन का बनाया जा सकता है। यह करीब ४ इंच ऊँचा होना चाहिए। पर्दे के लिए ७ फुट लंबा और ५ इंच चौड़ा टीन का टुकड़ा लेकर गोल कर लें, बाद में छोटी-छोटी कीलों से पीढ़े के चारों ओर लगा लें। टीन के किनारे बाहर की ओर मुड़े होने चाहिए, जिससे उसमें पैनापन न रहे, लकड़ी के पर्दे के लिए १८″ × १४″ × ४″ घन इंच में १८″ × ४″ × १″ घन इंच के धनुषाकार ४ टुकड़े कर लें। इन टुकड़ों के पायों में दाँते बनाकर लगा लें। आटा निकालने का एक रास्ता करीब ३″ × २″ वर्ग इंच का बना लिया जाय।

ऊपरी पाट को नीचे-ऊपर करने से दो पाटों के बीच का अंतर कम-ज्यादा होता है। हम देख चुके हैं कि ऊपरी पाट का सारा भार धुरी पर रहता है। धुरी को थोड़ा नीचे की ओर बाहर निकालकर पाट को आसानी से जितना चाहें ऊँचा-नीचा कर सकते हैं। धुरी को एक ऐसी लकड़ी पर रखें, जिसका एक सिरा पीढ़े के एक पाये से लगा हो। लकड़ी के दूसरे सिरे में सूराख कर बोल्ट को इस प्रकार लगायें कि उसका ऊपरी भाग पीढ़े में लगा हो। जब यह बोल्ट कसा जायगा, तो वह ऊपरी पाट को भी उठायेगा।

इस प्रकार की सुधरी चक्की पर १ घंटे में करीब ५ पौंड गेहूँ पीसा जा सकता है। मगनवाड़ी में १ स्त्री ८ घंटे में करीब ३०-४० पौंड गेहूँ पीसती है।

चक्की का इस्तेमाल

१. चक्की की मूठ पकड़कर बायें से दायें की ओर चलानी चाहिए।

२. चक्की जब घूमती रहे, तो निरंतर थोड़ी-थोड़ी देर बाद उसमें अनाज डालते रहना चाहिए।

३. चक्की को रोककर अनाज नहीं डालना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार उसे फिर चालू करने में ताकत लगानी पड़ती है।

४. चक्की समगति से चलानी चाहिए।

५. चक्की चलानेवाले को करीब ८ इंच ऊँचे स्टूल पर बैठना चाहिए।

६. उसे पीढ़े के निकट पैरों को दोनों ओर फैलाकर बैठना चाहिए। ऐसा करने से उसे चक्की पूरी शक्ति से चलाने में सुविधा रहेगी।

७. पीढ़े से आटा निकालने के छिद्र को कपड़ा लगाकर बंद कर देना चाहिए, जिससे आटा बिखरने न पाये।

८. चक्की को इस्तेमाल करने के बाद बाँस या दूसरे ढक्कन से ढँक देना चाहिए, ताकि चूहे, चिड़ियाँ और कुत्ते आदि उसे खराब न करने पायें। चक्की का मुँह भी कपड़े से बंद कर देना चाहिए।

पाटों की घरेलू मरम्मत

पाटों के काम करनेवाले स्तरों को कम-से-कम साल में एक

वार कूटने की जरूरत होती है। इसका पेशा करनेवाले समय पर कम मिलते हैं और मिलते भी हैं तो ज्यादा पैसा माँगते हैं। चक्की को टाँकना इतना आसान होता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने घर पर यह काम कर सकता है।

आधे पौंड वजन की एक टाँकी (छेनी) चाहिए, जिसके दोनों सिरे ½ इंच तक नुकीले होने चाहिए। चक्की टाँकने का यही एक-मात्र औजार है। इसका फौलाद अच्छा होना चाहिए। इसमें १) से ज्यादा न लगेगा। टाँकी में दस इंच लंबी एक मूठ लगी रहती है। मूठ को हाथ से पकड़कर पाट के स्तर टाँकी की नोंक से टाँकते हैं। किनारों को टाँकते समय किनारों के न टूटने का ध्यान रखना चाहिए। इस प्रकार दोनों पाटों के स्तरों को टाँक लेना चाहिए। टाँकने के बाद स्तरों को साफ कर लेना चाहिए, ताकि पत्थर के छोटे टुकड़े न रह जायँ। यह काम थोड़ी-सी धान की भूसी अथवा ऐसी ही किसी व्यर्थ की चीज को पीसकर किया जा सकता है।

ऐसी परिष्कृत चक्की का ज्यादा-से-ज्यादा मूल्य ३०) होता है।

❀ ❀ ❀

हम जिस सुधरी हुई हाथ-चक्की की सिफारिश करते हैं, वह गुजरात के ढङ्ग पर बनी है। वह करीब ८ इञ्च ऊँचे लकड़ी के पीढ़े पर रखी रहती है। यह पीढ़ा काफी मजबूत होना चाहिए, क्योंकि उस पर दोनों पाटों का करीब २ मन का भार रहता है और पीसनेवाले का भी उस पर भार पड़ता ही है। पीसते समय चक्की पर काफी झटके भी लगते हैं। ऐसा मजबूत पीढ़ा करीब १६ रुपये में बनता है। याने पूरी चक्की की आधी कीमत केवल पीढ़े में ही लग जाती है। गुजराती ढङ्ग की चक्की में यह पीढ़ा आवश्यक है, क्योंकि चक्की हल्की या भारी करने की व्यवस्था पीढ़े में ही रहती है।

चित्र संख्या ९
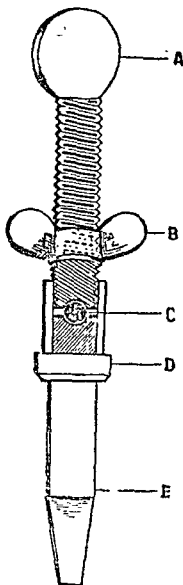
बिना पीढ़े के चक्की को हल्की-भारी चलाने का सुधरा हुआ नया साधन

हमने बिना पीढ़े के उपयोग के ही चक्की हल्की या भारी करने की नयी व्यवस्था की है। इसमें जिस साधन का उपयोग किया गया है, उसका चित्र और वर्णन इस प्रकार है :

(A) यह एक ४ इञ्च लम्बी ½ इञ्च मोटी लोहे की छड़ है। इसमें ३ इञ्च ऊँचाई तक पेंच बने हैं। ऊपर का बाकी १ इञ्च का लम्बा भाग पीटकर चपटा बना दिया गया है, जिसको पकड़कर पेंच कसा या ढीला किया जा सकता है।

(B) यह दो कानवाली एक ढिबरी है, जो कसी और ढीली की जा सकती है।

(C) यह एक इस्पात का गोला है। इसका व्यास $\frac{१}{४}$ इञ्च है और यह A छड़ के पेंचवाले सिरे पर अच्छी तरह बैठाया गया है।

(D) यह १$\frac{१}{२}$ इञ्च लम्बी और $\frac{३}{४}$ इञ्च व्यास की पोली नली है, जिसके अन्दर A छड़ के पेंच कसे जा सकते हैं। इसमें ऊपर की ओर केवल $\frac{१}{२}$ इञ्च ही पेंच बने हैं।

(E) यह D लोहे की पोली नली के निचले भाग में बैठनेवाली कील है। इसकी लम्बाई ३$\frac{१}{२}$ इञ्च और व्यास $\frac{१}{२}$ इञ्च है। इसके ऊपरी सिरे पर एक अर्ध-गोलाकार गढ़ा है। A के सिरे पर बैठाया हुआ गोला इस अर्ध-गोलाकार गढ़े में बराबर बैठ जाता है और बिना किसी प्रकार के घर्षण से यह चल सकता है।

कसने के उपाय—E कील साखी में मजबूत बैठायी जाती है। इसे बैठाते समय इतना खयाल रहे कि वह पाट के ऊपर करीब १ इञ्च निकली रहे।

D पोली नली ऊपर के पाट में लकड़ी की मानी में मजबूती से बैठायी जाती है। अब A छड़ B ढिबरी के साथ D पोली नली में कस दीजिये। दोनों पाटों को एक पर एक रखकर A को जरूरत के मुताबिक कस दीजिये। A को जितना अधिक कसेंगे, उतना ही ऊपर का पाट उठेगा और दोनों पाटों के बीच अन्तर पड़ जायगा और अनाज अधिक मोटा पिसेगा। जरूरत के अनुसार A को कस देने के बाद B ढिबरी भी कस दीजिये, जिससे वह A के स्थान पर बिलकुल दोनों ओर से कसे जाने के कारण ढीला न होने पाये।

इसके लाभ—इस नये साधन का उपयोग इस प्रकार भी किया जा सकता है कि चक्की को एक साफ कागज पर रखकर चलाया जाय। अथवा नीचे का पाट चूना और सीमेंट में मजबूती से बैठाकर, उसके इर्द-गिर्द थोड़ी सीमेंट की फर्श बना लेने से आटा साफ जगह में गिरेगा। इसके उपयोग से भारी कीमतवाले पीढ़े की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। इसमें गृहस्थी के एक आवश्यक साधन की लागत पचास प्रतिशत कम हो जाती है।

यह संशोधित नया भाग (बाल बेरिंग, चक्की कसने-ढीला करने का पुर्जा) २॥) में मिल जाता है।

❀ ❀ ❀

बैल से चलनेवाली चक्की

बैल से चलनेवाली चक्कियाँ ज्यादातर पंजाब में प्रचलित हैं। कई स्थानों में ये ऊँटों द्वारा चलायी जाती हैं। इन चक्कियों को 'खराश' भी कहते हैं। वहाँ ऐसी कितनी चक्कियाँ चल रही हैं, इसके ठीक आँकड़े देना कठिन है। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि शहरों से दूर जितने गाँव हैं, उनमें से हर गाँव में एक-एक या दो-दो बैल-चक्कियाँ चलती हैं। बटाला के आसपास प्रत्येक गाँव में पाँच-छह चक्कियाँ तक देखी गयी हैं। खराश दो प्रकार के होते हैं: (१) लकड़ी का खराश, (२) लोहे से बना खराश। लकड़ी का खराश मिस्त्री बनाते हैं और लोहे का खराश लोहार बनाते हैं। कहीं-कहीं बहुत पशु और नौकर रखनेवाले जमींदार तथा बड़े संयुक्त परिवारवाले निजी उपयोग के लिए खराश लगवाते हैं। मिस्त्री या लोहार के इस खराश का उपयोग आम जनता करती है। जिसे जरूरत होती है वह बैल ले जाकर अनाज पीस लेता है। खराश में पीसने का इन लोगों को अभ्यास है। इसे चलाने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं होती। आटा पीसने के बाद प्रति मन अनाज के पीछे दो सेर आटा किराये के रूप में दे जाते हैं, जिससे खराश के मालिक का गुजारा, मरम्मत का खर्च और तेल आदि का खर्च निकल जाता है।

किसी शहर से चार मील दूर एक गाँव में एक खराश लगी थी और उस शहर में दो-तीन यंत्र-चक्कियाँ थीं। उस गाँववालों से पूछा गया कि यह खराश क्यों चलाते हो, नजदीक के शहर की यंत्र-चक्कियों में आटा क्यों नहीं पिसाते? जवाब में गाँववालों ने कहा कि खराश से स्वास्थ्यवर्धक 'ठंढा आटा' मिलता है और यंत्र-चक्की में बहुत 'गरम आटा' मिलता है, जो शरीर के लिए हानिकारक है। उन लोगों ने यह भी कहा कि यहाँ से गेहूँ को सिर पर लादकर ले जाना असंभव है। उसके लिए भी बैलगाड़ी की आवश्यकता होती है। उसके बाद वहाँ चक्की में पिसाई की

14
13
10
11
8
7
2
9
15
12
3
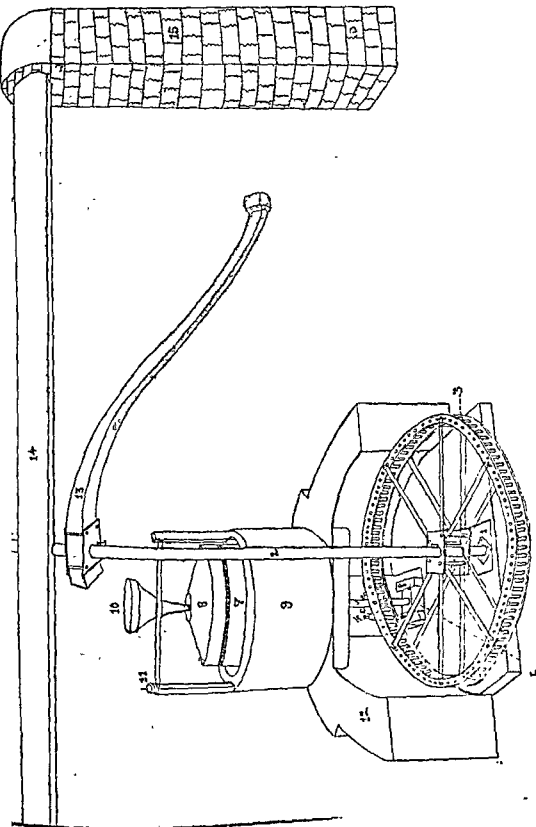
दर १२ आना प्रति मन है और साथ ही एक मन अनाज के पीछे एक सेर आटा भी कम हो जाता है। गाँव के खराश में पीसने से केवल बैल की मेहनत और दो सेर आटा खर्च होता है। इसलिए उन देहातियों ने कहा कि खराश में पीसना उनके लिए न केवल सस्ता पड़ता है बल्कि पौष्टिक भोजन की दृष्टि से भी लाभप्रद है। (बैल-चक्की का चित्र पृष्ठ संख्या ३९ पर दिया गया है।)

पंजाब में मकई भी खायी जाती है। हाथ-चक्की में पीसने की दृष्टि से यह बहुत सख्त अनाज है। इस कारण ये लोग इस काम के लिए खराश का अधिक प्रयोग करते हैं।

खराश के चक्के

लोहे के खराशों का उपयोग लकड़ी के खराशों की अपेक्षा अधिक किया जाता है। इसमें एक बड़ा लोहे का चक्का ७ फुट २ इंच व्यास का होता है। यह ३ इंच चौड़े और ½ इंच मोटे लोहे की पट्टियों को जोड़कर तैयार किया जाता है। ऐसे २ चक्के बनाकर ३½ इंच की ऊँचाई से एक-दूसरे को ऊपर-नीचे रख १ इंच मोटे लोहे की सलाखों से जोड़ लिया जाता है। इन सलाखों की संख्या १२० होती है और ये १¼ इंच की समान दूरी पर लगायी जाती हैं। यह हुआ चक्के का बाहरी वृत्त। ३½ इंच ऊँची छड़ें उस चक्के के दाँत कहलाते हैं। अब इस चक्के के बीच में धुरा लगाना पड़ता है। इसके लिए एक वर्ग इंचवाली लोहे की १२ छड़ें वृत्त के ऊपर-नीचे रखकर जोड़ ली जाती हैं और बीच में १४ वर्ग इंच ½ इंच मोटी लोहे की पट्टियों से इनको जोड़ लेते हैं। इन ½ इंच मोटी पट्टियों के बीच में ३ इंच का गोल छेद रहता है, जिसके अन्दर ८ फुट लम्बा ३ इंच मोटा लोहे का धुरा मजबूती से कस देते हैं।

खराश लगाने का तरीका

खराश देहात के लोहार बनाते हैं। यद्यपि सभी खराशों का नाप एक-सा होता है, फिर भी बनावट में वे एक-दूसरे से भिन्न होते हैं।

इसलिए खराश लगाने से पहले उसकी पूरी जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। भिन्न-भिन्न प्रकार के खराश भिन्न-भिन्न ढङ्ग से बैठाने पड़ते हैं। नीचे दी गयी जानकारी खराश लगाने में उपयोगी होगी।

खराश छप्पर के नीचे बैठायी जाय, जिससे वह वर्षा और धूल आदि से सुरक्षित रहे। मकान में २ बैलों के घूमने भर की करीब २४ फुट व्यास की गोल जगह होनी चाहिए। २४ फुट की इस जगह में खंभे आदि न रहें; क्योंकि उससे बैलों के घूमने में अड़चन पड़ेगी। मकान के बीच में एक सख्त लकड़ी जमीन में पक्की गाड़ लेनी चाहिए। इस लकड़ी के बीच ३ इंच मोटा गढ़ा करते हैं, जिसमें बेरिंग के साथ लोहे का वह धुरा फँसा रहता है। यह बेरिंग और लकड़ी जमीन के स्तर से ऊपर नहीं आती। धुरे के ऊपरी भाग में पकड़ के लिए एक मजबूत लकड़ी, जो २७ फुट लम्बी और ३ फुट गोल, जमीन से ७ फुट ऊँचाई पर लगी होनी चाहिए। इस लकड़ी में भी बाल बेरिंग लगाकर धुरे के ऊपरी भाग को फँसा लेते हैं। बैल इसके बीच घूमकर चक्की चलाता है।

चक्की के पत्थर लोहे के चक्के के वृत्त में किसी भी जगह लगाये जा सकते हैं। इसके लिए एक छोटे दाँतेवाला पहिया बना होता है, जिसमें करीब ८ दाँते होते हैं और बीच में २ इंच व्यास का ३ फुट लंबा धुरा लगा होता है। जिस जगह चक्की लगाना हो, उस जगह मजबूती से एक लकड़ी गाड़ी जाय और उसके बीच एक बेरिंग फँसाकर इस छोटे चक्के का धुरा खड़ा किया जाता है। इस प्रकार छोटे चक्के के दाँते में बड़े चक्के के दाँते फँस जाते हैं और एक को घुमाने से दूसरा स्वयं घूमने लगता है। छोटे दाँतेवाले चक्के के बेरिंग को थोड़ा ऊँचा-नीचा करने की आवश्यकता होती है। यह काम ¾ इंच मोटे बोल्ट के सहारे किया जा सकता है। इस धुरे के दोनों बाजू में दो फुट ऊँचे दो ईंटों के खंभे खड़े कर लकड़ी के चार बल्ले (Beams) फँसाकर उसके ऊपर चक्की का पत्थर बैठाया जाता है। छोटे दाँतेवाले चक्के का धुरा चक्की के निचले पाट से होकर ऊपर तक आता है। इस धुरे के आसपास की जगह ठीक तरह बन्द कर देनी चाहिए, जिससे अनाज या आटा नीचे न गिरे। धुरे का ऊपरी भाग चौरस बना होता है और इसमें लोहे की एक

'माकड़ी' लगायी जाती है, जिसके सहारे से ही ऊपरी पाट घूमता है। चक्की के आसपास आटा इकट्ठा होने के लिए यथोचित स्थान बना लेना चाहिए।

बड़े लोहे के चक्के के बीचवाले धुरे में एक ११ फुट लम्बा लकड़ी का लट्ठा लगा देते हैं। उसके एक सिरे में बैल की जोड़ी जोतते हैं। बैलों के एक चक्कर में चक्की का ऊपरी पाट १५ चक्कर लगाता है। पाटों के पीसनेवाले भाग अच्छी तरह बने होने चाहिए और आसानी से पिसाई के लिए उनमें दाँते होने चाहिए। आम तौर से ऐसी चक्की एक घण्टे में २५ सेर अनाज पीसती है।

चक्की की लागत का अन्दाज

कीमत बड़े और छोटे चक्कों की मय धुरे के	२५०)
बटाला से रेल किराया	३०)
३० इंच व्यास और १२ इंच ऊँचे चक्की के पत्थर की कीमत	१००)
दाँते और टँकाई	४०)
लकड़ी के २७ फुट लम्बे, ३ फुट गोल लट्ठे की कीमत	१४५)
दूसरी वस्तुएँ जैसे लोहे की छड़ें, डंडे, अनाज डालने के साधन आदि का खर्च	५०)
ईंट, चूना आदि	१५५)
कारीगर की मजदूरी	१००)
अन्य मजदूरी	६५)
योग	९३५)

खराश-चक्की नीचे लिखे पतों से मँगायी जा सकती है :

१. इन्द्रसिंह सरजीत सिंह, जी० टी० रोड, बटाला, पूर्व पंजाब।
२. ईस्ट एण्ड वेस्ट ट्रेडिंग कार्पोरेशन, जी० टी० रोड, बटाला, पूर्व पंजाब।

❀ ❀ ❀

कैसर-ए-हिंद चक्की

कैसर-ए-हिंद नामक बैल-चक्की नाहान के ढलाई के कारखाने में बनायी जाती है। नये बनाये गये हिमाचल प्रदेश में नाहन एक जिला है और नाहन शहर इस जिले का सदर है। हिमाचल प्रदेश में शामिल होने से पहले यह सरमूर रियासत की राजधानी था। सरमूर के एक पुराने महाराज को लोहा-ढलाई के काम में बड़ी रुचि थी। उन्होंने अपनी रियासत में करीब ७५ वर्ष पूर्व इस कारखाने की नींव डाली। यह कारखाना आज भी देश की सेवा कर रहा है। इसमें ढाली गयी गन्ना पेरने की मशीनें तथा कुछ अन्य मशीनें उच्च कोटि की होती हैं। उसी कारखाने में बनायी गयी यह कैसर-ए-हिन्द चक्की है।

चित्र संख्या ११
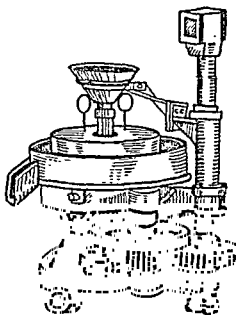
कैसर-ए-हिन्द चक्की

यहाँ पर यह बता देना उचित होगा कि सरमूर रियासत के हिमाचल प्रदेश में विलीनीकरण हो जाने के बाद यह कारखाना भारत सरकार के उत्पादन मंत्रालय की देखरेख में आ गया है। व्यापारिक सुविधा की दृष्टि से सरकार इसे निजी लिमिटेड कंपनी के तौर पर चला रही है।

इसके गोदाम अंबाला शहर या उसके निकट बरारा स्टेशन पर हैं। यहाँ इसकी कीमत ५३० रु० है। ये दोनों पूर्व पंजाब रेलवे के स्टेशन हैं। यह बैल-चक्की ढलाई किये गये दाँती-पहिये और शेफ्ट की बनी होती है। पत्थर के पाट अच्छी तरह गढ़कर चक्की में लगाये जाते हैं।

इसका कुल वजन १८ मन यानी १४७६ पौंड होता है। चक्की बैठाने के लिए ५½' × ५½' वर्ग फुट की जगह लगती है। बैलों को घूमने के लिए २४ फुट व्यास की जगह चाहिए। चक्की को छत के नीचे बैठाना अच्छा रहेगा। बैलों के एक चक्कर में चक्की का ऊपरी पाट २२ बार घूमता है।

इस चक्की की माँग बहुत कम है। माँग बढ़ने पर संभव है कि इसमें कारखानेदार कुछ सुधार कर सकें।

हाल में एक कैसर-ए-हिन्द बैल-चक्की मगनवाड़ी में भी लगायी गयी है। अच्छे ढङ्ग की मशीन होने के कारण इसका बैठाना सरल था और खर्च भी करीब दो सौ रुपया से अधिक नहीं पड़ा।

छह महीने से इस चक्की पर काम करके प्रयोग किया जा रहा है। इस चक्की पर एक घंटे में २५ सेर आटा पीसा जाता है। २ बैल बिना थकावट ८ घंटे, बशर्ते कि उन्हें बीच में २ घंटे का आराम मिले, चल सकते हैं। इस समय बाजार में मिलनेवाली बैल-चक्कियों की कीमत को देखते हुए यह कहना पड़ेगा कि कैसर-ए-हिंद बैल-चक्की की कीमत कुछ ज्यादा नहीं है।

चित्र संख्या १२

मगनवाड़ी (वर्धा) में पंजाब की बैल-घानी
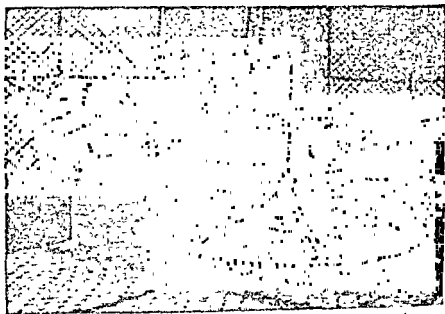
जल-शक्ति के उपयोग से आटा पीसने का उद्योग बहुत पुराना है। उन जगहों पर, जहाँ इसके साधन उपलब्ध हो सके हैं, वहाँ इसका काफी प्रचलन है। लेकिन बिजली-शक्ति और तेल-शक्ति से तेज चलनेवाली चक्कियों के आविष्कार से यह पुराना उद्योग न केवल बन्द पड़ गया, बल्कि अनेक स्थानों से इसे हटा भी दिया गया। साथ ही लोगों में ऐसी भावना भी बन गयी है कि जल-शक्ति के लिए बड़े भारी जल-प्रपात की आवश्यकता होती है। इसका फल यह हुआ कि पनचक्कियों का प्रचलन बहुत कम हो सका और कहीं-कहीं किसी कोने में जैसे, हिमालय के क्षेत्र में, कांगड़ा-पंजाब में, शिमला और काश्मीर के कुछ स्थानों में इसके दर्शन हो जाते हैं।

साधारणतः किसी बहती नदी की मुख्य धारा से एक छोटी नाली २ फुट चौड़ी और १॥ फुट गहरी बना ली जाती है। नाली को नदी के किनारे-किनारे आधे फर्लांग तक ले जाकर नाली की धारा और नदी की धारा में १० फुट का अन्तर निर्माण करते हैं यानी नाली का पानी नदी के पानी से १० फुट ऊँचा हो जाता है।

इस नाली के नदी में गिरने के स्थान पर चक्की बैठाते हैं। ३ लकड़ी के तख्तों को मिलाकर एक नाली बना लेते हैं। यह करीब १२ फुट लम्बी होती है। इसके द्वारा पानी नीचे गिरता है। गिरते हुए पानी में तो वैसे ही दबाव होता है परन्तु इसे और अधिक बढ़ाने के लिए इस लकड़ी की बड़ी नाली का नीचेवाला भाग सँकरा रहता है। इस लकड़ी की नाली का ऊपरी भाग करीब २ फुट चौड़ा और १॥ फुट गहरा होता है और नीचे का भाग ८ इञ्च चौड़ा और ८ इञ्च गहरा होता है। नाली के इस भाग के सामने पानी से चलनेवाले चक्के बैठाये जाते हैं। यह चक्का लकड़ी का बना होता है। इसको गरड भी कहते हैं। एक लकड़ी के धुरे के चारों ओर ३२ छोटी-छोटी लकड़ी की पट्टियाँ बैठायी जाती हैं, जो २ इञ्च चौड़ी और १० इञ्च लम्बी होती हैं। ये पट्टियाँ समान दूरी पर लगायी जाती हैं। ये ऊपर की ओर थोड़ी उठी रहती हैं। गरड देखने में उलटे छाते के समान मालूम पड़ता है। इस धुरी के निचले भाग में एक नुकीला पत्थर बैठा देते हैं, जिसके आधार से यह गरड तेजी से घूमता है। इस पत्थर के घूमने के लिए एक दूसरे छोटे पत्थर में गढ़ा बना लेते हैं, जो लकड़ी के एक

चित्र संख्या १३

पनचक्की
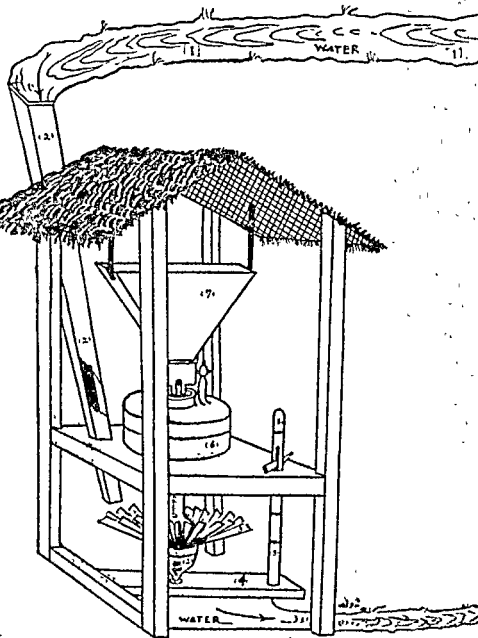
लम्बे डण्डे पर आधारित होता है। यह लम्बा डण्डा नदी में चक्की के नीचे लगा रहता है।

गरड़ के ऊपर ५'×५' वर्गफुट का एक चबूतरा बना होता है। इस चबूतरे के चारों ओर खम्भे लगे होते हैं। इसके ऊपरी भाग में छप्पर छा लेते हैं, जिससे गरड बारिश, धूप आदि से सुरक्षित रहता है।

इस चक्की के पाट भी बैल-चक्की की तरह ऊपर-नीचे लगाये जाते हैं। इसका भी ऊपरी पाट ही घूमता है। इस चक्की के पाट २६ इञ्च व्यास के १२ इञ्च मोटे होते हैं।

ऐसी चक्की से १½ घंटे में १ मन अनाज पीसा जा सकता है। नदी से जो नाली बनाते हैं उसमें पानी का प्रवाह ८० फुट प्रति मिनट होता है।

यह देखा गया है कि ऐसी चक्कियाँ उन नदियों में भी लगायी जा सकती हैं, जिनमें १० फुट ऊँचाई से पानी गिराने की सुविधा न हो। ऐसी दशा में नाली और भी चौड़ी बनायी जाती है। इसके विषय में अध्ययन करने की आवश्यकता है, जिससे ठीक-ठीक पता चल सके कि यह कम-से-कम कितने पानी में चलायी जा सकती है और कितनी ऊँचाई से पानी गिराया जाय, जिससे अधिक-से-अधिक पीसा जा सके।

आजकल जो पनचक्कियाँ गाँवों में चल रही हैं उनकी लागत बहुत कम है। इन्हें गाँव का मिस्त्री स्वयं बैठा सकता है।

एक चक्की बैठाने के खर्च का अनुमान इस प्रकार है :

आधे फर्लांग की नाली खोदने की मजदूरी	२५)
गरड—लकड़ी का पहिया	२५)
लकड़ी की १२ फुट लम्बी नाली	५०)
चक्की के ऊपर छप्पर	५०)
पत्थर के दो पाट—२६ इंच × १२ इंच (प्रति पाट)	८०)
लकड़ी का चबूतरा	५०)
लोहे के छोटे-मोटे पुर्जे	२०)
अनाज डालने के लिए लकड़ी की चाड़ी	३५)
अन्य आवश्यकताएँ	६५)
योग	४००)

इसके चलाने का खर्च बहुत कम है। यहाँ तक कि इसमें तेल का भी कोई खर्च नहीं होता। गरड रात-दिन चलती है। केवल दो सेर गेहूँ प्रति मन के हिसाब से किराये के रूप में देना पड़ता है। चक्की बन्द करने के लिए पानी को लकड़ी की बनी नाली में बढ़ने से पहले दूसरे रास्ते से निकाल दिया जाता है।

❀ ❀ ❀

चित्र संख्या १४
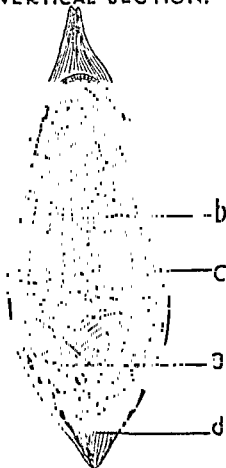
गेहूँ का दाना
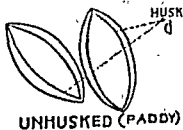
चावल का दाना

मजदूरी का सर्वोदयी स्तर

इस पुस्तक के तीसरे अध्याय में मजदूरी की दर के जो आँकड़े दिये गये हैं, वे आज की प्रतिस्पर्धा तथा सामाजिक विषमता से युक्त मजदूरी के आँकड़े हैं। उन्हें सन्तोषजनक नहीं माना जा सकता। इस मजदूरी की दर से कर्मचारियों का तथा उनके परिवारवालों का जीवन-स्तर ऊँचा नहीं उठ सकता। उन लोगों की मजदूरी की ऐसी दर निकालना आवश्यक है, जिससे उन्हें जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएँ, जैसे कि भर पेट भोजन, कपड़ा तथा रहने का मकान, उपयुक्त मात्रा में मिल सकें।

आहार—हर व्यक्ति को शारीरिक पोषण की दृष्टि से समतोल पौष्टिक आहार मिलना आवश्यक है। कुन्नूर की आहार-शास्त्र अनुसन्धानशाला ने अपनी निश्चित राय जाहिर की है कि हर मनुष्य को नीचे की तालिका के अनुसार प्रतिदिन २,८०० केलोरी के प्रमाण का आहार मिलना ही चाहिए। यह आहार सामान्यतः प्रौढ़ व्यक्ति के लिए पर्याप्त हो सकेगा।

	भोज्य पदार्थों के नाम	मात्रा	मूल्य
१.	चावल	९ औंस	≡)
२.	गेहूँ तथा अन्य धान्य	५ „	-)४
३.	दालें	३ „	)॥।
४.	शाकभाजी (बिना पत्ते की)	६ „	-)
५.	पत्ताभाजी	८ „	-)
६.	दूध	४ „	-)।
७.	तेल-घी (चिकनाई)	२ „ ½ घी	=)।
		१½ तेल	-)३½
८.	गुड़-शक्कर	२ „	)७½
		जोड़	॥।)॥

इस हिसाब के अनुसार प्रति व्यक्ति का एक मास का भोजन खर्च २५) पड़ेगा।

कपड़ा—प्रति व्यक्ति के लिए साल भर में करीब बीस चौरस गज कपड़ा आवश्यक है। इसके अनुसार ४५ इंच चौड़ाई के कपड़े का भाव १।॥) गज के हिसाब से लें, तो प्रतिव्यक्ति एक माह के कपड़े का खर्च २।~)४ पड़ेगा।

मकान—एक सामान्य कुटुंब के लिए, जिसमें पति-पत्नी तथा चार बच्चे मिलकर रह सकें, कम-से-कम १,२५० वर्ग फुट स्थान होना चाहिए। ४) प्रति वर्ग फुट के हिसाब से एक मकान तैयार करने में करीब ५०००) लगेगा। अगर उस मकान की आयु २० साल की मानी जाय, तो एक कुटुंब के पीछे उस मकान के लिए एक मास का २१) खर्च पड़ेगा। दो बच्चों की एक इकाई यदि मानी जाय, तो उस हिसाब से प्रति व्यक्ति ५।) मकान के लिए खर्च आयेगा।

अन्य खर्च—ऊपर दी गयी तीन मुख्य मदों के अलावा अन्य कई मदों में भी खर्च होता रहता है। जैसे पढ़ाई, औषधि, खेल-कूद आदि। इन खर्चों की भी हम पूर्ण रूप से अवहेलना नहीं कर सकते, अतः उन पर कुछ खर्च का हिसाब जोड़ना आवश्यक है। इस प्रकार प्रति व्यक्ति का मासिक खर्च नीचे लिखे अनुसार पड़ेगा:

	रु०	आना	पाई
भोजन	२५	०	०
कपड़ा	२	५	४
मकान	५	४	०
अन्य खर्च	५	६	८
कुल खर्च	३८	०	०

घर में कमानेवाले व्यक्ति पर केवल अपना ही भार नहीं रहता, उसकी पत्नी, बच्चों और बूढ़े माता-पिता या अन्य आश्रित व्यक्तियों का भी भार उसी पर रहता है। प्रायः मजदूरों की स्त्रियाँ भी काम पर जाती हैं और कुछ कमा लाती हैं। कहीं-कहीं सयाने लड़के भी कुछ कमाई करते हैं, परन्तु वह आमदनी बहुत ही कम रहती है। पूरे खर्च का एक अंश भी उससे पूरा नहीं पड़ता। इसलिए यह जरूरी है कि एक कर्मचारी को उसकी मूल आवश्यकता का कम-से-कम तिगुना खर्च मिलना चाहिए। अर्थात् एक परिवार को हर माह ११४) मिले। यानी एक दिन की मजदूरी ३॥~) मिले।

इस हिसाब से तीसरे अध्याय में बैल-चक्की पर ५ मन आटा पीसने का जो खर्च ३।।) बताया गया है, वह खर्च ५।।।-) हो जायगा। इस हालत में बिजली से चलनेवाली चक्कियों को सरकार की ओर से मिलनेवाली अप्रत्यक्ष सहायता ४।।-) होगी, तेल से चलनेवाली चक्कियों को ५=)। पहले यह खर्च क्रमशः २।) तथा २।।।-) बताया गया है। ऊपर बतायी गयी सर्वोदयी मजदूरी दर की प्रणाली से ही हम समाज के प्रति उचित न्याय कर सकते हैं तथा उसमें बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा को मिटा सकते हैं।

❀❀❀

परिशिष्ट : २

पूँजी और शक्ति का उपयोग

३० लाख टन अनाज पीसने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के उद्योगों की व्यवस्था में लगनेवाली पूँजी और उसमें मनुष्य तथा पशु-शक्ति के उपयोग की तालिका :

चक्कियों के प्रकार	कुल संख्या	आवश्यक पूँजी रुपयों में	आवश्यक मजदूर	लगनेवाली शक्ति
१. हाथ-चक्की	७,५०,०००	२,२५,००,०००	७,५०,००० (स्त्री या पुरुष)	—
२. बैल-चक्की	५६,०००	८,४०,००,०००	५६,००० पुरुष	५६,००० बैल-जोड़ी
३. बिजली-शक्ति से चालित चक्कियाँ	१०,५००	३,१५,००,०००	१०,५००	—
४. तेल-शक्ति से चालित चक्कियाँ	१०,५००	४,७२,५०,०००	१०,५००	—
५. आटा पीसने के बड़े कारखाने	१,२८०	३६,५७,००,०००	१,१२,६४०	—

ये आँकड़े १९४७ में सरकार द्वारा प्रकाशित 'भारत में उत्पादन की द्वितीय गणना' से लिये गये हैं।

* * *

परिशिष्ट : ३

आटा-पिसाई के उपलब्ध साधन

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ, मगनवाड़ी, वर्धा में आटा पीसने के उपलब्ध साधनों की सूची नीचे दी जा रही है।

चूँकि संस्था का उद्देश्य स्थानीय उत्पादन के लिए लोगों को प्रवृत्त करना है, इसलिए प्रधान कार्यालय से तैयार सभी चीजें लोगों को हम देना नहीं चाहेंगे। नमूने के तौर पर एक साधन या उसका छोटा-सा नमूना मँगाकर उस पर से सारे साधन बना लेने चाहिए।

इस सूचीपत्र की कीमतों में रेल-महसूल या पेकिंग-खर्च शुमार नहीं है। आवश्यकतानुसार कीमतों में घटा-बढ़ी भी हो सकती है। किसीको माल उधार नहीं भेजा जा सकता। इसलिए आर्डर के साथ कीमत और पेकिंग-खर्च की रकम भेजनी चाहिए और व्ही० पी० से माल मँगाना चाहिए। रास्ते की टूट-फूट के लिए संस्था जिम्मेवार नहीं है।

सामान	कीमत	पेकिंग-खर्च
१. तैयार चक्की लकड़ी के पीढ़े के साथ	३२–०–०	३–०–०
२. चक्की के पाट मय धुरी, मानी के	१६–०–०	१–०–०
३. लकड़ी का पीढ़ा	१६–०–०	२–८–०
४. धुरा और मानी (सादा)	१–०–०	०–८–०
बोल्ट और नट	१–०–०	
५. तैयार चक्की का नमूना	२–८–०	०–१२–०
६. नये बाल बेरिंग, धुरी और मानी	२–८–०	१–०–०

हाथ-पिसाई का रिकार्ड

ऊपरी पाट का वजन पौंडमें	और व्यास इंचमें	ऊपरी पाट की मोटाई इंच में	पीसने का समय मिनट में	पिसे आटे का वजन तोले में	अनाज	पीसने का काम कैसा है?	प्रति घंटा पिसाई तोले में
३७	१४	३	१७	६४	ज्वार	न उवानेवाला	२२६
४०	१४	३	१७	४०	,,	,,	१४१
३६	१४	३	१५	४५	,,	,,	१८०
३७	१४	३	३०	९२·५	,,	,,	१८५
२८	१४	२¾	३०	१२७·५	,,	,,	२५५
३०	१४	,,	३०	११५	,,	,,	२३०
४०	१४	३	३०	७०	गेहूँ	,,	१४०
५०	१६·५	२¾	३०	७५	ज्वार	,,	१५०
६०	१६·५	,,	३०	८०	गेहूँ	,,	१६०
८०	१८	४	३०	८५	,,	,,	१७०
८०	१८	४	३०	७०	,,	,,	१४०
८०	१८	४	३०	७५	,,	,,	१५०
८०	१८	४	३०	७५	,,	,,	१५०

बैल से चालित आटा-चक्की की कार्य-क्षमता

दो बैलों से चलनेवाली 'कैसर-ए-हिन्द चक्की' (नाहन)

समय		पिसाई		रफ्तार प्रति घंटा	
घंटा	मिनट	सेर	छटाक	सेर	छटाक
१	३०	३३	८	२२	५
२	—	५४	१२	२७	६
२	३०	७२	१२	२९	१
६	१०	१२९	०	२४	२
७	५	१८१	—	२५	९
४	१५	११२	—	२६	६
६	१५	१५८	८	२५	४
५	—	१२२	—	२४	६
६	—	१५६	८	२६	१
५	—	१२६	—	२५	३
४	—	९०	—	२२	८

दो बैलों से चलनेवाली बटाला की चक्की की कार्य-क्षमता

घंटा	मिनट	सेर	छटाक	सेर	छटाक
१	२०	२२	८	१६	१४
२	१५	४३	—	१९	२
२	—	२६	—	१३	—
२	४५	४६	—	१६	११
१	२०	३०	४	२२	११
१	३०	२२	४	१४	१३
३	४५	४७	१२	१२	११

दूसरों के मत

हाथ से आटा पीसने का उद्योग करीब-करीब मर रहा है। अखिल भारत ग्रामोद्योग संघ ने शुरू से ही इसे पुनर्जीवित करना अपना मुख्य कर्तव्य माना है। गांधीजी कई प्रकार के भोजन सम्बन्धी प्रयोग करते रहते थे और उनके परिणाम जनता तक पहुँचाते थे। इस विषय पर यहाँ उनके लेखों की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की जा रही हैं। अन्य लोगों के भी कुछ विचार दिये जा रहे हैं।

ग्रामीण जीवन का विनाश :—"हाथ-चक्की का उद्योग स्थानीय कृषि का मूल केन्द्र था। यान्त्रिक शक्तियों ने इस व्यवस्था को जान-बूझकर नष्ट कर दिया, जिससे ग्रामीण जीवन असंघटित हो गया। इन कारखानों में गेहूँ की भूसी और अंकुर को अलग कर मैदा बनाने और मैदे से सफेद डबलरोटी बनाने की जो प्रथा चलायी उससे दुनिया को सीमित सफेद दास-प्रथा से भी अधिक हानि उठानी पड़ रही है।"*

पूँजीवाद और अस्वस्थता—"पूँजीवाद पर अस्वस्थता के दोषारोपण से आपको आश्चर्य न होना चाहिए; क्योंकि पूँजीपति अधिक पैसे के लोभ से गेहूँ को कारखाने में पिसाते हैं तो गेहूँ की भूसी, जो कई प्रकार के पौष्टिक तत्त्वों जैसे क्षार, फॉसफरस जो शक्ति के लिए आवश्यक हैं, प्रोटीन और अंकुर के भाग जो विटामिन बी से परिपूर्ण होते हैं, इन सब पौष्टिक तत्त्वों को निकाल डालते हैं। तत्त्वों से रहित यह मैदा जल्दी सड़ता नहीं। छोटे जीव, कीड़े आदि भी इस मैदे को नहीं खाते। यह मैदा दूर-दूर तक भेजा जा सकता है और कई महीनों तक दूकान में रहने के बाद भी मनुष्यों के खाने योग्य बना रहता है। इससे स्पष्ट है कि मनुष्य को उन छोटे-छोटे कीड़ों के बराबर भी बुद्धि नहीं है। इसके बाद भी इस मैदे को खानेवाले मूर्ख मनुष्य यह समझते हैं कि मैदे से बनी डबलरोटी बहुत उच्च कोटि का आहार है और हाथ के पिसे आटे से बनी रोटी तुच्छ है। इस प्रकार वे अपने मिथ्याभिमान से बुद्धि और पेट को धोखा देते हैं।

* श्री एन० जे० मेंसिपम की 'दि नेचुरल ऑर्डर' पुस्तक की भूमिका से।

इस मैदे की बनी डबलरोटी पश्चिमी देशों में कई प्रकार की बीमारियों का मूल है। ठीक यही हालत सफेद चावल और साफ चीनी की भी है। अब बहुत लोग समझने लगे हैं कि सफेद चावल के आहार से 'बेरीबेरी' रोग हो जाता है।"[1]

गांधीजी के विचार

आटे की बचत—"मैदे से बनी डबलरोटी और पूर्ण गेहूँ के आटे से बनी रोटी के बीच अर्से से चली आनेवाली इस स्पर्धा का मैं साक्षी हूँ। सफेदी की ओर लोग आकर्षित होते हैं; लेकिन मैं जानता हूँ कि हब्शी सफेदी का पक्षपाती नहीं है। जो हो, यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि डबलरोटी जितनी सफेद बन सके उतनी सफेद बनाने की विशेष चेष्टा की जा रही है। सौभाग्य से केवल शहरवाले ही ऐसे पागलपन में लगे हैं। डाक्टरों का कहना है कि संपूर्ण गेहूँ के आटे से बनी एक चपाती का स्वाद और उससे प्राप्त पौष्टिकता, मैदे से बनी दो से पाँच चपातियों से भी अधिक है। आज जितना कम आटा खर्च हो, देश के हित में अच्छा है; इसलिए हमारा कर्तव्य है कि हम सम्पूर्ण आटे का व्यवहार करें। एक दृष्टि से इस बात का और भी महत्त्व है कि गाँवों में गेहूँ का संग्रह बंदरगाहों में हजारों बन्द पड़े बोरों से अधिक उपयोगी है। इसलिए अच्छा हो, मैदे में भूसी मिलाना अनिवार्य कर दिया जाय। लड़ाई बन्द हो गयी; परन्तु लड़ाई के बाद की स्थिति उस समय से भी बदतर है और दिन प्रतिदिन स्थिति बिगड़ती ही जा रही है। ईश्वर ही जाने कि इसका सुधार कब होगा।"

'हरिजन' २८-४-'४६

सबसे अच्छा आटा—"सबसे अच्छा आटा वह है, जो साफ किये गेहूँ से हाथ की चक्की में घर पर तैयार किया जाता है।"[2]

मैदे से खतरा—"कपड़े के कारखानों ने तो केवल ग्रामीण मजदूरों को बेकार बनाया, लेकिन चावल और आटे के यन्त्रों से हजारों बहनें ही बेकार नहीं हो गयीं, इसके साथ-साथ देश की साधारण जनता का स्वास्थ्य भी चौपट हो गया। जहाँ की जनता को मांस आदि खाने का विरोध न हो और उनकी आर्थिक हालत इस खर्च को बर्दाश्त कर

१. रिचर्ड बी० ग्रेग की 'आशा की राह किस ओर' पुस्तक से। २. 'स्वास्थ्य का मार्गदर्शक' पुस्तक से।

सकती है वहाँ सम्भव है मैदा और सफेद चावल के प्रयोग से स्वास्थ्य को कोई हानि न पहुँचे, परन्तु भारत में जहाँ कहीं लोग मांस खा सकते हैं उनको भी उसका मिलना कठिन है, वहाँ पूर्ण गेहूँ से और अनछड़े चावल से मिलनेवाले पोषक तत्त्वों से भी उनको वंचित कर देना महान् पाप है। डाक्टरों, वैद्यों और अन्य लोगों के लिए अनुकूल समय है कि वे जनता को मैदा और सफेद चावल से पैदा होनेवाले खतरों से आगाह करें।"[1]

आटे की मिलों द्वारा पैदा की गयी बेकारी—"स्वास्थ्य की बात को यदि छोड़ भी दिया जाय, तो भी यह दृढ़ सत्य है कि आटे और चावल के कारखानों ने लाखों की संख्या में बहनों को बेकार कर जीविका से वंचित कर दिया।"[2]

'हरिजन' ७-१२-'३४

गेहूँ की भूसी—"जिस आटे में अमूल्य भूसी का अभाव हो वह सफेद चावल जैसा है। सारे संसार के डाक्टरों का तो कहना है कि भूसी रहित आटा सफेद चावल से भी बदतर है। हाथ-चक्की से पीसा गया पूर्ण गेहूँ का आटा बाजार से मिलनेवाले मैदे से हर तरह सस्ता और श्रेष्ठ है। यह सस्ता इस अर्थ में है कि पिसाई का खर्च बचता है, साथ ही गेहूँ के वजन के बराबर ही आटा मिलता है। मैदा में गेहूँ के वजन का आटा तो नहीं ही मिलता, साथ ही भूसी निकाल डालने से उसके पोषक तत्त्वों की बेहद हानि होती है। गाँववाले और अन्य लोग, जो अपनी हाथ-चक्की का पिसा हुआ पूर्ण गेहूँ का आटा खाते हैं उनका पैसा तो बचता ही है, साथ ही इससे भी मुख्य वस्तु स्वास्थ्य की रक्षा होती है। यदि हाथ-चक्की के उद्योग को पुनर्जीवित किया जाय, तो आटा पीसने के कारखानों की लाखों रुपये की कमाई का अधिकांश गाँव की गरीब जनता के बीच वितरित हो जायगा।"[3]

'हरिजन' ८-२-'३५

डाक्टर अनसारी की राय—"अनछड़ा चावल, पूर्ण गेहूँ के आटे और गुड़ के बारे में डाक्टर अनसारी की यह तर्कयुक्त सम्मति हाल में

---

१. 'ग्राम उद्योग' लेख से।

२. 'ग्रामोद्योग संघ : उसका अर्थ और विस्तार' लेख से।

३. 'कैसे आरंभ करें ?' लेख से।

ही हमारे पास आयी है: "भारत के अनाजों में गेहूँ का मुख्य स्थान है। इसका ऊपरी आवरण भूसी रेशेदार होती है। इसका गूदा शर्करा से परिपूर्ण और अंकुर क्षार, प्रोटीन और चर्बी से बना होता है।

प्रोफेसर चर्च के अनुसार गेहूँ में निम्नलिखित वस्तुएँ होती हैं:

नमी	१४·५ प्रतिशत
नायट्रोजनवाला पदार्थ	११·० प्रतिशत
चर्बी	१·२ प्रतिशत
सत्त्व और चीनी	६९·० प्रतिशत
रेशेदार पदार्थ	२·६ प्रतिशत
क्षार	१·७ प्रतिशत

यंत्रों में पिसने से अनाज के ऊपर की भूसी अलग कर दी जाती है। भूसी के साथ अनाज के सभी पौष्टिक तत्त्व निकल जाते हैं। गेहूँ का अंकुर प्रोटीन, चर्बी से परिपूर्ण है और भूसी में कई प्रकार के क्षार, प्रोटीन भी नष्ट हो जाते हैं। इन सब हानियों के बारे में जानकारी होने के बाद कारखानदारों ने इस हानि को रोकने की चेष्टा की, परन्तु यंत्र के द्वारा पिसा गेहूँ का आटा देहात की हाथ-चक्कियों में पिसे हुए समूचे गेहूँ के आटे के पौष्टिक तत्त्वों का मुकाबला नहीं कर सकता। हाथ-चक्की से पिसे आटा में भूसी, गूदा और अंकुर आदि सभी वस्तुएँ मौजूद रहती हैं। इसलिए वह पौष्टिकता की दृष्टि से उच्च कोटि का है। सस्ता तो होता ही है, साथ ही ग्रामीण जनता को सहूलियत से मिलता भी है।"

'हरिजन' २५-१-'३५

ऊँचे दर्जे का आटा—"ऊँचे दर्जे के आटे से आज यह अर्थ नहीं समझा जाता कि वह आटा पौष्टिकता की दृष्टि से अन्य आटों से ऊँचा है, बल्कि आज इसका अर्थ विपरीत है। क्षार आदि पौष्टिक तत्त्वों से रहित यंत्र द्वारा पीसे गये सफेद आटे को ही उच्च कोटि का आटा कहा जाता है।"*

* श्री चार्ल्स सी० फ्राइ की 'उचित भोजन और उपचार' नामक पुस्तक से।

अनाजों के पौष्टिक गुण

क्रम संख्या	अनाज का नाम	नमी प्रतिशत	प्रोटीन प्रतिशत	चर्बी प्रतिशत	क्षार प्रतिशत	रेशा प्रतिशत	शर्करा प्रतिशत	चूना प्रतिशत	फॉस-फरस प्रतिशत	लोहा प्रतिशत	कैलोरी प्रतिशत ग्राम	विटामिन ए (प्रतिशत ग्राम)	विटामिन बी	प्रोटीन का शारीरिक महत्त्व
१	गेहूँ	१२·८	११·८	१·५	१·५	१·२	७१·२	०·०५	०·३२	५·३	३४८	१०८	५४०	६७
२	आटा	१२·२	१२·१	१·७	१·८	००	७२·२	०·०४	०·३२	७·३	३५३	००	००	००
३	मैदा	१३·३	११·०	०·९	०·४	०·३	७४·१	०·०२	०·०९	१·०	३४९	००	१२०	००
४	जौ	१२·५	११·५	१·३	१·५	३·९	६९·३	०·०३	०·२३	३·७	३३५	००	४५०	७१
५	ज्वार	११·९	१०·४	१·९	१·८	००	७४·०	०·०३	०·२८	६·२	३५५	१३६	३४५	८३
६	बाजरा	१२·४	११·६	५·०	२·७	१·२	६७·१	०·०५	०·३५	८·८	३६०	२२०	३३०	८३
७	रागी	१३·१	७·१	१·३	२·२	००	७६·३	०·३३	०·२७	५·४	३४५	७०	४२०	८९
८	मकई	१४·९	११·१	३·६	१·५	२·७	६६·२	०·०१	०·३३	२·१	३४२	००	००	६०
९	कूटू	११·३	१०·३	२·४	२·४	८·६	६५·०	०·०७	०·३०	१३·२	३२३	००	९००	००
१०	ओट मील जई	१०·७	१३·६	७·६	१·८	३·५	६२·८	०·०५	०·३८	३·८	३७४	००	९७५	६५
११	पार्ली बरगा	११·९	१२·५	२·१	३·४	२·२	६८·१	०·०१	०·३३	५·७	३३६	००	००	००
१२	'तेनाई'	११·२	१२·३	४·७	३·२	८·०	६०·६	०·०३	०·२९	६·३	३३४	५४	५८५	७७

ये आँकड़े १९५१ में भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'स्वास्थ्य बुलेटिन' संख्या २३ के चतुर्थ संस्करण से लिये गये हैं।

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

वैचारिक साहित्य

(विनोबा)

गीता प्रवचन	१)
त्रिवेणी	॥)
विनोबा-प्रवचन (संकलन)	॥।)
भगवान् के दरबार में	=)
साहित्यिकों से	॥)
गाँव-गाँव में स्वराज्य	=)
पाटलिपुत्र में विनोबा	।-)

(धीरेन्द्र मजूमदार)

शासन-मुक्त समाज की ओर	।=)
युग की महान् चुनौती	।)
नयी तालीम	॥)
ग्रामराज	।-)
आजादी का खतरा	।-)
बापू की खादी	॥)
स्वराज्य की समस्या	॥)
चरखा-आंदोलन की दृष्टि और योजना	≡)

(श्रीकृष्णदास जाजू)

संपत्तिदान-यज्ञ	।)
व्यवहार-शुद्धि	।=)
अ० भा० चरखा संघ का इतिहास	३॥)
चरखा-संघ का नव-संस्करण	१॥)
चरखे की तात्त्विक मीमांसा	१)

(जे० सी० कुमारप्पा)

गाँव-आंदोलन क्यों ?	३॥)
गांधी-अर्थ-विचार	१)
स्थायी समाज-व्यवस्था (भाग २रा)	२)
श्रम-मीमांसा और अन्य प्रबंध	॥।)
खून से सना पैसा	॥।)
जनता की आजादी	१॥)
यूरोप : गांधीवादी दृष्टि से	॥।)
वर्तमान आर्थिक परिस्थिति	१॥)
ग्रामों के सुधार की योजना	१॥)
स्त्रियाँ और ग्रामोद्योग	।)
राजस्व और हमारी दरिद्रता	२॥)
हिंदुस्तान और ब्रिटेन का आर्थिक लेन-देन (हिं० गु०)	॥)

(दादा धर्माधिकारी)

मानवीय क्रांति (नया संस्करण)	।)
साम्ययोग की राह पर	।)
क्रांति का अगला कदम	।)

(अन्य लेखक)

जीवनदान	जयप्रकाश नारायण	।)
सर्वोदय का इतिहास और शास्त्र	शंकरराव देव	।)
श्रम-दान	शिवाजी भावे	।)
विनोबा के साथ	निर्मला देशपाण्डे	१)

पावन प्रसंग	मृदुला मूंदड़ा	।=)
भूदान-आरोहण	नारायण देसाई	॥)
राज्यव्यवस्था : सर्वोदय दृष्टि से	भगवानदास केला	१॥)
गो-सेवा की विचारधारा	राधाकृष्ण बजाज	॥)
रचनात्मक कार्यक्रम किस ओर ?	जी० रामचन्द्रन	॥=)
महात्मा गांधी	आचार्य कृपालानी	।=)
संत विनोबा की उत्तर भारत यात्रा	दामोदरदास मूंदड़ा	१)
भूदान-दीपिका	विमला बहन	=)
साम्ययोग का रेखाचित्र	,,	=)
ग्राम-स्वावलंबन की ओर	बालकोबा	।)
पूर्व बुनियादी तालीम	शान्ताबाई नारुलकर	१)
अहिंसक स्वराज्य-साधना	गांधीजी	।)
हरिजन	,,	।=)
हिन्दू-मुसलमान	,,	।=)
सर्वोदय	रामकृष्ण शर्मा	।=)
नवभारत	,,	४)
बापू का रामराज	,,	।)
शांति या विनाश	,,	।=)
सामूहिक प्रार्थना		।)
धरती के गीत		-)
गांव का गोकुल	अप्पासाहब पटवर्धन	।)
भूमि-क्रान्ति का तीर्थ : कोरापुट	श्रीकृष्णदत्त भट्ट	।)

टेकनिकल साहित्य

(खादी-साहित्य)

अ० भा० चरखा संघ-सूचिका	श्रीकृष्णदास जाजू	।=)
कपास की समस्या : खादी की दृष्टि से	दादाभाई नाइक	॥)
कताई-स्वावलंबन	,,	१)
कताई-गणित भाग १ (हि० म०)	कृष्णदास गांधी	१)
,, ,, २ (नया संस्करण)	,,	॥)
,, ,, ३	,,	१)
,, ,, ४ (नया संस्करण)	,,	॥)

घरेलू कताई की आम बातें (हिंदी-मराठी) ,, — १)
घरेलू कताई की आम गिनतियाँ ,, — ।।।)
कताई प्रवेश (मराठी) केशव देवधर — १।।)
सावली-चरखा ,, — १)
खड़ा चरखा ,, — १)
किसान चरखा — प्रभाकर दिवाण — १।
वस्त्र-विज्ञान लेख-संग्रह ,, — १)
दुवटा — =)
बुनाई — दत्तोबा दास्ताने — ५)
मध्यम पिंजन (हिंदी) मथुरादास पु० — १)
सरंजाम परिचय (मराठी) केशव देवधर — १।।)
सुलभ पूनी (हि० म०) — ≡)
तकुवा (बनाना, सीधा करना, सजाना) वि० संतोपवार — ।।।)
कताई शास्त्र — सत्यन् — २)

(ग्रामोद्योग-साहित्य)

हमारे गाँवों का पुनर्निर्माण — गांधीजी (नवजीवन) — १।।)
रचनात्मक कार्यक्रम ,, ,, — ।=)
ग्राम-सेवा के दस कार्यक्रम — जुगतराम भाई — १)
हमारी खुराक की समस्या — जे० सी० कुमारप्पा — १।।)
हिंदुस्तानी खाद्य पदार्थों की उपयुक्तता और उनसे प्राप्त जीवन सत्व — ।।=)
हमें क्या खाना चाहिए ? — झवेरभाई पटेल — ३)
गाँवों की आर्थिक जाँच प्रश्नावली — ।)
गामोद्योग जाँच प्रश्नावली — १।।।)
रचनात्मक कार्यक्रम किस ओर ? — जी० रामचन्द्रन् — ।।=)
तेलघानी — झवेरभाई पटेल — १।।)
हाथ कागज बनाना — ४)
मगनदीप — ।।)
धोती जामा — =)
दुल (मराठी) — ।।)
तात्विक भोजन — रामकृष्ण शर्मा — ।।
भारत और भोजन ,,

रुपये की समस्या और उसका रचनात्मक हल	,,	।)
हमारी खाद्य समस्याएँ	,,	≈)
इंग्लैंड में गाँवों की पुनर्रचना	लार्ड पोर्ट्समाउथ	≈)
हाथ-चक्की	एम० विनायक	।।)
खाद और पेड़-पौधों का पोषण	मथुरादास पु०	(प्रेस में)

[गो-सेवा साहित्य]

गो-सेवा	गांधीजी (नवजीवन)	१।।)
गोलाऊ गाईने संवर्धन (मराठी)	म० म० पारनेरकर	।।)
वृषभ सुधार	,,	।।)
गो-सेवा की विचारधारा	राधाकृष्ण बजाज	।।)
सुधरे हुए खेती औजार (हिं० म०)	चंदन सिंह	।।)
पशुओं की सिद्धवनौषधि चिकित्सा	रामगोपाल पटेल	१)
मायावी तेल (वनस्पति)		।≈)
भारत में गाय		१३)

[नयी तालीम-साहित्य]

सच्ची शिक्षा	गांधीजी (नवजीवन)	२।।)
शिक्षा की समस्या	,, ,,	३)
बुनियादी शिक्षा	गांधीजी ,,	१।।)
विद्यार्थियों से	,, ,,	४)
शिक्षा में अहिंसक क्रांति	गांधीजी (तालीमी संघ)	१।।)
प्रौढ़ शिक्षा का उद्देश्य	शांता बहन और मार्जरी साइक्स	।।)
बुनियादी शिक्षा के सिद्धांत		१।≈)
जीवन-शिक्षा का उद्देश्य	शांता बहन	१।।≈)
ओटना, तुनना व धुनना	सत्यन्	।।)
तांत बनाना	,,	।।)
मूल उद्योग : कातना	विनोबा	।।)
खेती शिक्षा	भिसे और पटेल	१।।)
तकली	सुंदर दिवाण	२)
आठ साल का संपूर्ण शिक्षाक्रम		१।।)
शिक्षकों की ट्रेनिंग का पाठ्यक्रम		१)
नयी तालीम	मोहन भाई	।।)
शिक्षण-विचार	विनोबा	(प्रेस में)
सुन्दरपुर की पाठशाला का पहला घंटा	जुगतराम दवे	(,,)